डॉ. रामकुमार वर्मा का काव्य
DR. RAMKUMAR VARMA KA KAVYA

Thesis submitted to
The Cochin University of Science and Technology
for the degree of
DOCTOR OF PHILOSOPHY

By
GEETHA KUNJAMMA C.

Supervisor
Dr. N. G. DEVAKI

Prof. & Head of the Department
Dr. N. RAMAN NAIR

DEPARTMENT OF HINDI
COCHIN UNIVERSITY OF SCIENCE AND TECHNOLOGY
KOCHI - 682 022

D E C L A R A T I O N

I hereby declare that the thesis entitled **Dr. RAMKUMAR VARMA KA KAVYA** has not previously formed the basis of the award of any degree, diploma, associateship, fellowship or other similar title or recognition.

Geetha Kunjamma.C.

GEETHA KUNJAMMA.C.

Department of Hindi,

Cochin University of
Science and Technology,

Kochi-682022

29-4-1991

C E R T I F I C A T E

This is to Certify that this thesis is a bonafide record of work carried out by **GEETHA KUNJAMMA.C.** under my supervision for Ph.D.Degree and no part of this thesis has hitherto been submitted for a degree in any University.

Devaki
29-4-91

(Dr.N.G.DEVAKI)

Supervising Teacher

Dr. N. G. DEVAKI,
LECTURER,
DEPARTMENT OF HINDI,
Cochin University of Science & Technology,
COCHIN-682 022, Kerala.

Department of Hindi,

Cochin University of Science and Technology

Kochi-682022

29--4--1991.

ACKNOWLEDGEMENT

This work was carried out in the Department of Hindi, Cochin University of Science and Technology, Kochi-22 during the tenure of scholarship awarded to me by the Cochin University of Science and Technology. I sincerely express my gratitude to Cochin University of Science and Technology for this help and encouragement.

GEETHA KUNJAMMA.C.

Department of Hindi,

Cochin University of
Science and Technology,

Kochi-682022

२९ --4--1991.

जिस भारत की धूल लगी है मेरे तन में,
क्या मैं उसको कभी भूल सकता जीवन में ?
चाहे घर में रहूँ, रहूँ अथवा मैं वन में,
पर मेरा मन लगा हुआ है इसी वतन में,
सेवा करना देश की,
यही एक सन्देश है।
मैं भारत का हूँ सदा,
भारत मेरा देश है।।

डॉ० रामकुमार वर्मा की
प्रथम कविता (१६२२)

हस्तलिपि

प्रिय तुम भूले मैं क्या गाऊँ ?
जिस ध्वनि में तुम बसे उसे।
जग के कण कण में क्या बिखराऊँ ?
शब्दों के अधखुले द्वार से
अभिलाषाएँ निकल न पातीं
उच्छ्वासों के लघु लघु पथ पर
इच्छाएँ चल कर थक जातीं।
हाय, स्वप्न-संकेतों से मैं
कैसे तुमको पास बुलाऊँ ? प्रिय०
जूही-सुरभि की एक लहर से
निशा बह गई डूबे तारे
अश्रु-बिन्दु में डूब डूब कर
दृग-तारे ये कभी न हारे।
दुख की इस जागृति में कैसे
तुम्हें जगा कर मैं सुख पाऊँ ?
प्रिय, तुम भूले मैं क्या गाऊँ ?

10 मई १९६९ — रामकुमार वर्मा

भूमिका

परिस्थिति में होने वाले परिवर्तन के साथ ही साहित्य के भाव और स्वरूप में परिवर्तन होना स्वाभाविक है । इसलिए हम एक ही कवि या साहित्यकार में विभिन्नवादों का प्रभाव देख सकते हैं । द्विवेदी युगीन काव्यप्रवृत्तियों से विकसित वर्माजी की काव्यधारा छायावाद के विस्तृत क्षेत्र में ही सीमित रही । उनकी रचनाओं में आद्यन्त छायावादी प्रवृत्ति ही प्रस्फुटित हुई है । वे न प्रगतिवाद से प्रभावित थे न प्रयोगवाद से । छायावादी युग को पूर्व और उत्तर दो भागों में विभाजित करके डॉ. वर्मा को उत्तर छायावादी युग के प्रमुख कवि के रूप में स्वीकार किया गया है । आधुनिक हिन्दी साहित्य के प्रमुख उत्तर छायावादी कवि के रूप में डॉ. वर्मा का स्थान सर्वश्रेष्ठ है । यह तो सर्व विदित है कि आधुनिक साहित्य जगत में वे एकांकी - नाटक के प्रवर्तक के रूप में विख्यात हैं । किन्तु डॉ. वर्मा मूलत: एक कवि थे । काव्य क्षेत्र में ही उन्होंने प्रथम बार तूलिका चलाई । वर्माजी ने गीतिकाव्यों और प्रबन्धकाव्यों की रचना द्वारा हिन्दी साहित्य की श्रीवृद्धि की । छायावादी गीतिकाव्य के क्षेत्र में वर्माजी के गीतिकाव्यों का स्थान निश्चय ही महत्वपूर्ण है । ऐसे महान कवि की काव्य-रचनाओं पर अभी तक कोई विशद अध्ययन नहीं हुआ है । इसलिए प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में आधुनिक काव्यधारा के लिए वर्माजी के योगदान और उत्तर छायावादी युग के प्रमुख कवि के रूप में उनका स्थान निर्धारित करने का प्रयास किया गया है । डॉ. रामकुमार वर्मा की काव्य रचनाओं पर एकाध आलोचनात्मक ग्रन्थ प्रकाशित हुए हैं । लेकिन ये ग्रन्थ उनके कवि व्यक्तित्व का सही मूल्यांकन कराने में अपर्याप्त हैं । इसलिए हमने अभी तक प्रकाशित संपूर्ण काव्य रचनाओं के आधार पर उनके कवि व्यक्तित्व को उद्दीप्त करने का प्रयास किया है । कहना न होगा कि वर्तमान युग विशेष अध्ययन {स्पेशलाइज़ेशन} का युग है । इसीलिए प्रस्तावित शोध विषय को "डॉ. रामकुमार वर्मा का काव्य" रखा गया है । स्पष्ट है कि कवि के रूप में वर्माजी का मूल्यांकन ही प्रस्तुत शोध का उद्देश्य रहा है ।

विषय को पूर्णतया वैज्ञानिक दृष्टि से विवेचित करने के लिए सभी संभव प्रयास किए गए हैं । हिन्दी में रामकुमार वर्माजी की संपूर्ण काव्यकृतियों के आधार पर किया गया यह पहला प्रयास है ।

मूल सामग्री एकत्रित करने में हमें कुछ कठिनाइयों का सामना करना पड़ा "चितौड़ की चिता", "अभिशाप" और "संकेत" उनकी प्रारंभिक रचनाएँ हैं जो आजकल अनुपलब्ध है । हमने केवल इनकी फोटो कोपियों का ही अध्ययन किया है ।

रामकुमार वर्माजी के जीवन तथा रचना-संसार को तत्कालीन परिस्थिति ने प्रभावित किया । राजनीतिक दृष्टि से अनेक महत्वपूर्ण घटनायें 19 वीं सदी में घटित हुई । राजनीतिक क्षेत्र में महात्मा गाँधी का पदार्पण एक महत्वपूर्ण घटना है । तद्युगी साहित्य को गाँधीजी की विचारधारा ने बहुत प्रभावित किया है । गाँधीजी के नेतृत्व में जो असहयोग आन्दोलन शरू हुआ उससे देश में आशा, आत्मनिर्भरता और आत्मबल का संचार हुआ । इस असहयोग आन्दोलन ने डॉ. वर्मा को अत्यन्त प्रभावित किया । उन्ह पढ़ाई छोड़कर इस आन्दोलन में भाग लिया । इस आन्दोलन से उन्हें काव्य रचना करने की प्रेरणा मिली । इस आन्दोलन के फलस्वरूप छायावादी काव्य भी राष्ट्रीय चेतना और देशभक्ति के आवेग से आलोड़ित हुआ । राष्ट्रीय चेतना और देशभक्ति भावना की अभिव्यक्ति उनकी काव्य रचनाओं में स्पष्ट रूप से झलकती है ।

जनता का सामाजिक जीवन भी दुःख पूर्ण था। वर्णव्यवस्था, बाल विवाह तथा छुआछूत की भावना जागृत हुई । इन सामाजिक कुरीतियों का वर्णन तत्कालोन साहित्य में भी उपलब्ध होते हैं । गाँधीजी के नेतृत्व में हुए अछूतोद्धार आन्दोलन इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है । अछूतोद्धार आन्दोलन का प्रभाव वर्माजी के प्रबन्ध काव्यों और कुछ स्फुट रचनाओं में स्पष्ट रूप से झलकता है । धार्मिक दृष्टि से भी जनता का जीवन दुःखपूर्ण था । दार्शनिक परिस्थिति ने भी तत्कालीन साहित्य को प्रभावित किया । अद्वैतवाद, अरविन्द दर्शन, शैवदर्शन आदि इनमें महत्वपूर्ण हैं । बौद्ध दर्शन का प्रभाव वर्माजी के गीतिकाव्यों में उपलब्ध है । सांस्कृतिक दृष्टि से इस युग में ब्रह्म समाज, प्रार्थना समा

आर्य समाज, रामकृष्ण मिशन, थियोसोफिकल सोसाइटी आदि संस्थाओं की स्थापना हुई । साहित्यिक दृष्टि से देखें तो द्विवेदी युगीन इतिवृत्तात्मक शैली के विरुद्ध इस युग में काव्य की भाषा सरसता और माधुर्य से युक्त होने लगी । नीरस और शुष्क भाषा के विरुद्ध छायावादी युग की भाषा अत्यन्त कोमल, सरस और चित्रात्मक बन गई ।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध को सात अध्यायों में विभाजित किया गया है । प्रथ अध्याय है "रामकुमार वर्मा का व्यक्तित्व और कृतित्व" । इस अध्याय में वर्माजी का स्थिति काल, माता-पिता, शिक्षा-दीक्षा, पारिवारिक वातावरण, सेवाकार्य और उनके जीवन की महत्वपूर्ण घटनाओं पर विचार किया गया है । इसके साथ ही उनकी काव्य रचनाओं का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत किया गया है । उनकी काव्येतर रचनाओं की सूची हमने परिशिष्ट-1 में प्रस्तुत की है । रामकुमार वर्माजी के पारिवारिक वातावरण और व्यक्तित्व ने उनकी काव्य रचनाओं को किस सीमा तक प्रभावित किया है इसकी ओर भी हमने संकेत किया है ।

"रामकुमार वर्मा के महाकाव्यों का विश्लेषणात्मक अध्ययन" शीर्षक द्विती अध्याय में उनके महाकाव्य "एकलव्य", "उत्तरायण" और "ओ अहल्या" के महाकाव्यत्व प विचार किया गया है । इस अध्याय में हम देख सकते हैं कि वर्माजी ने महाकाव्य-प्रणयन के लिए प्रायः आचार्य विश्वनाथ के लक्षण स्वीकार किए हैं । कथानक की दृष्टि से उनके महाकाव्यों का आधार पौराणिक है । "एकलव्य" और "उत्तरायण" महाकाव्य नायक प्रधान हैं तो "ओ अहल्या" नायिका प्रधान महाकाव्य है । प्रथम दोनों महाकाव्यों की अपेक्षा तीसरे महाकाव्य "ओ अहल्या" की रचना के लिए उन्होंने कुछ नयी प्रणालियाँ अपनायी हैं । पहली विशेषता है "मंगलाचरण" के बाद लिखी गयी "प्रस्तावना" । दूसरं विशेषता है "परिणय" सर्ग की गीति योजना । तीनों महाकाव्यों में समान रूप से दिखा पड़नेवाली अन्य विशेषता है संवाद शैली का प्रयोग। तीनों महाकाव्य भारतीय संस्कृति के प्रति उनकी अटूट आस्था का परिचायक है ।

तीसरा अध्याय है "रामकुमार वर्मा के खण्डकाव्यों का आलोचनात्मक अध्ययन" । प्रस्तुत अध्याय में खण्डकाव्य के लक्षणों तथा सिद्धान्तों के आधार पर "वीर हमीर", "चितौड़ की चिता", "निशीथ", "सन्त रैदास" और "बालिवध" का विश्लेषण किया गया है । महाकाव्य की अपेक्षा खण्डकाव्य के कथानक में विविधता है । "वीर हमीर", "चितौड़ की चिता" और "सन्त रैदास" का कथानक ऐतिहासिक है, "निशीथ" काल्पनिक है और "बालि वध" पौराणिक है । अधिकांश खण्डकाव्य सर्गबद्ध है । "वीर हमीर", "सन्त रैदास" और "बालि वध "में मंगलाचरण की योजना है जिसे विद्वानों ने महाकाव्य के लक्षण के रूप में स्वीकार किया है । बीच में गीत योजना उनके खण्डकाव्य की विशेषता है । "वीर हमीर" और "सन्त रैदास" में विविध छन्दों का प्रयोग है ।

"रामकुमार वर्मा के गीतिकाव्य का विश्लेषण" शीर्षक चौथे अध्याय में उनके गीतिकाव्यों पर प्रकाश डाला गया है । विद्वानों द्वारा स्वीकृत गीतिकाव्य के प्रमुख तत्वों के आधार पर उनके गीतिकाव्यों का विश्लेषण किया गया है । इसके बाद विषय और शिल्प के आधार पर उनकी गीति रचनाओं को विभाजित करके विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत किया गया है । उनके गीतिकाव्यों की विशेषता है आत्माभिव्यंजना, संगीतात्मकता, अनुभूति की विशिष्टता, भावों का ऐक्य एवं संक्षिप्तता । विषय के आधार पर उनके गीतिकाव्यों को राष्ट्रीयगीत, प्रेम गीत, प्रकृति गीत, रहस्यवादी गीत, दार्शनिक गीत, प्रार्थना गीत, शोक गीत तथा शिल्प के आधार पर संबोधन गीत और चतुर्दशपदी गीतों में विभाजित करके उनका विश्लेषण किया गया है । प्रकृति गीत, रहस्यवादी गीत और दार्शनिक गीत की मात्रा अन्य प्रकारों की अपेक्षा अधिक है ।

पाँचवाँ अध्याय "रामकुमार वर्मा के काव्य का भाव-पक्ष" है । इस अध्याय में उनके सौन्दर्य तत्व, नारी भावना, मानवतावाद, दार्शनिक विचारधारा, सांस्कृतिकपक्ष, गाँधीवादी विचारधारा, रहस्यवाद और राष्ट्रीय भावना का विश्लेषण किया गया है ।

छठे अध्याय का शीर्षक है "रामकुमार वर्माजी के काव्य का कलापक्ष" । इसमें वर्माजी की भाषा शैली, चित्रात्मकता, अलंकार विधान, बिंब विधान और प्रतीक विधान को उनकी काव्य रचनाओं में ढूँढ़ने का प्रयास है ।

सातवाँ अध्याय "रामकुमार वर्मा और प्रतिनिधि छायावादी कवि - तुलनात्मक विश्लेषण" है । इस अध्याय में हमने छायावादी कवियों को पूर्व छायावादी कवि और उत्तर छायावादी कवि जैसे दो भागों में विभाजित करके उनके काव्यों के भावपक्ष और शिल्प पक्ष के साथ वर्माजी की काव्य रचनाओं की तुलना की है । इसमें प्रमुख छायावादी कवि के रूप में प्रसाद, पन्त, निराला और महादेवी वर्मा को तथा उत्तर छायावादी प्रतिनिधि कवि के रूप में भगवतीचरण वर्मा और नरेन्द्र शर्मा को स्वीकार किया है ।

उपसंहार में हिन्दी काव्य क्षेत्र के लिए वर्माजी के योगदान का मूल्यांकन किया गया है ।

अन्त में शोध की नवीन वैज्ञानिक पद्धति (पंचसूत्री-क्रम) के अनुसार सहायक ग्रंथ सूची प्रस्तुत की गई है । इन सभी ग्रन्थों का प्रत्यक्ष अवलोकन मनन करने का सुयोग शोधार्थिनी को प्राप्त हुआ है ।

सबसे पहले शोध लेखिका स्वर्गीय डॉ. रामकुमार वर्मा के प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करती है जिन्होंने अनेक शंकाओं को दूर करने की कृपा की । उनके साथ हुए पत्र व्यवहार से मुझे इस कार्य को संपन्न करने में निरन्तर प्रेरणा मिलती रही । नमूने के लिए एकाध पत्र प्रस्तुत शोध प्रबन्ध के परिशिष्ट-2 में संलग्न हैं ।

डॉ. चन्द्रिका प्रसाद शर्मा के प्रति भी मैं अपना आभार प्रकट करती हूँ जिनके सहयोग से मुझे सामग्रि एकत्रित करने में दिशा निर्देश मिला ।

कोचिन विज्ञान व प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग की अध्यापिका आदरणीया डॉ. एन.जी.देवकी मेरी प्रणम्य हैं जिनके विद्वत्तापूर्ण निर्देश एवं स्नेहमय व्यवहार से मुझे यह शोध प्रबंध प्रस्तुत करने का सुअवसर मिला । अपने अतिव्यस्त

जीवन से जो बहुमूल्य समय मुझे प्रदान किया है, उसका मूल्य कथमपि आंका नहीं जा सकता । इस शोधकार्य की पूरी अवधि मेरे कठोर मानसिक एवं बौद्धिक संघर्ष में व्यतीत हुई है । किन्तु मेरी अस्वस्थताओं तथा अप्रत्याशित विघ्नों के समय भी श्रद्धेया देवकीजी मुझे निरन्तर कर्तव्य पथ पर आगे बढ़ाती रही । उसकेलिए औपचारिक कृतज्ञता ज्ञापन अलम् नहीं हो सकता । अतः मैं उनके प्रति मौन प्रणति पुरस्सर श्रद्धा प्रकट करती हूँ

श्रद्धेय डॉ. एन. रामन नायरजी §प्रोफसर एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, कोचिन विज्ञान व प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय§ के प्रति भी मैं अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ जिनके प्रोत्साहन से मुझे यह कार्य संपन्न करने को सुविधायें मिलीं ।

कोचिन विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के पुस्तकालय की अध्यक्षा श्रीमती कुञ्ञिक्कावुट्टी तम्पुरान और उनके सहायक श्री असीस और आन्टणी के प्रति भी मैं कृतज्ञता प्रकट करती हूँ ।

श्री नारायण शर्माजी धन्यवाद के पात्र हैं जिन्होंने प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध को यथासमय सुव्यवस्थित रूप से टंकित कर दिया ।

कोचिन विज्ञान व प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय के अधिकारियों के प्रति मैं विशेष कृतज्ञ हूँ जिन्होंने मुझे छात्रवृत्ति प्रदान की है ।

अन्त में मैं यही कहना चाहूँगी कि इस सारस्वत अनुष्ठान में कहीं कोई त्रुटियाँ या कमियाँ, रह गई हैं तो मैं उसकेलिए क्षमाप्रार्थी हूँ । मानव के प्रयत्न में कमियाँ एवं त्रुटियाँ नैसर्गिक हैं, मैं उसका अपवाद नहीं हूँ । इसके अतिरिक्त मौलिकता, अदूषण एवं समग्रता का दावा करना "सर्वस्तु सर्वं नहि वेदकश्चित्" जैसे शाश्वत सत्य की अवहेलना होगी । श्रद्धेय डॉ. रामकुमार वर्मा की काव्य-रचनाओं के अध्ययन में रुचि रखनेवाले अध्येताओं के लिए प्रस्तुत शोध कार्य किंचित् प्रयोजनीय होगा तो शोधार्थी अपने को धन्य मानूँगी ।

विनम्रा

गीता कुञ्ञम्मा. सि.

विषय-सूची

पृष्ठ-संख्या

अध्याय - एक : 1-29

रामकुमार वर्मा का व्यक्तित्व और कृतित्व

संक्षिप्त जीवन परिचय - शिक्षा-दीक्षा - पारिवारिक वातावरण - सेवाकार्य - जीवन की महत्वपूर्ण घटनाएँ - कृतित्व - वीर हमीर कुल ललना - चित्तौड़ की चिता - अंजलि - अभिशाप - रूपराशि - निशीथ - चित्ररेखा - चन्द्रकिरण - संकेत-आकाश-गंगा - एकलव्य - आधुनिक कवि-3 - गजरे तारों वाले - कृत्तिका - उत्तरायण - सन्त रैदास - ओ अहल्या - बालिवध - निष्कर्ष ।

अध्याय - दो : 30-85

रामकुमार वर्मा के महाकाव्यों का विश्लेषणात्मक अध्ययन

"एकलव्य" का महाकाव्यत्व - कथानक - नाटक की संधियाँ - सर्गबद्धता - छन्द - चरित्रचित्रण - एकलव्य-आचार्य द्रोण - पार्थ - रस - प्रकृतिचित्रण - चतुर्वर्ग प्राप्ति - मंगलाचरण - ग्रंथ का नामकरण - सर्गों का नामकरण

"उत्तरायण" - कथानक - सर्गबद्धता - छन्द - चरित्रचित्रण तुलसी - रत्ना - रस - प्रकृतिचित्रण - चतुर्वर्गप्राप्ति - मंगलाचरण - ग्रंथ का नामकरण - सर्गों का नामकरण

पृष्ठ-संख्या

"ओ अहल्या" - कथानक - सर्गबद्धता - चरित्रचित्रण - अहल्या -
महर्षिगौतम - प्रकृतिचित्रण - चतुर्वर्गप्राप्ति - मंगलाचरण -
ग्रंथ का नामकरण - सर्गों का नामकरण - निष्कर्ष ।

अध्याय - तीन : 86- 133

रामकुमार वर्मा के खण्डकाव्यों का आलोचनात्मक अध्ययन

खण्डकाव्य के लक्षण - संक्षिप्त परिचय - "वीर हमीर" - कथानक
चरित्र चित्रण - रस - प्रकृति चित्रण - सर्गबद्धता और नामकरण -
ग्रंथ का नामकरण - गीत योजना - छंद -
"चितौड की चिता" - कथानक - चरित्र चित्रण - रस योजना -
सर्गों का नामकरण - निशीथ - कथानक - चरित्र चित्रण - सुकुमार -
इन्दिरा - कमला - प्रकृति चित्रण - सर्ग बद्धता नामकरण - ग्रंथ
का नामकरण
"सन्त रैदास" - कथानक - चरित्र चित्रण - रस - प्रकृति चित्रण -
सर्ग बद्धता-नामकरण - छन्द
बालिवध - कथानक - चरित्र चित्रण - रस - प्रकृति चित्रण -
सर्गबद्धता - मंगलाचरण - निष्कर्ष ।

अध्याय - चार 134 - 163

रामकुमार वर्मा के गीतिकाव्य का विश्लेषण

गीतिकाव्य का संक्षिप्त परिचय - आत्माभिव्यंजना - संगीतात्मकता -
अनुभूति का वैशिष्ट्य एवं उसकी पूर्णता - भावों का ऐक्य - संक्षिप्तता -
गीतिकाव्य का वर्गीकरण - राष्ट्रीय गीत - प्रेमगीत - प्रकृतिगीत -
रहस्यवादीगीत - दार्शनिक गीत - प्रार्थना गीत - शोक गीत -
सम्बोधन गीत - चतुर्दशपदी - निष्कर्ष ।

पृष्ठ-संख्या

अध्याय - पाँच : 164 - 199

रामकुमार वर्मा के काव्य का भावपक्ष

सौन्दर्यतत्व - नारी भावना - मानवतावाद - दार्शनिक विचारधारा-वर्मा के काव्य का सांस्कृतिक पक्ष - गाँधीवादी विचारधारा- रहस्यवाद - राष्ट्रीय भावना - निष्कर्ष ।

अध्याय - छः : 200-221

रामकुमार वर्मा के काव्य का कलापक्ष

भाषा शैली - रूप विधान - अलंकार योजना - बिंब विधान - प्रतीक विधान - निष्कर्ष ।

अध्याय - सात : 222-275

रामकुमार वर्मा और प्रतिनिधि छायावादी कवि - तुलनात्मक विश्लेषण

रामकुमार वर्मा और प्रतिनिधि पूर्ववर्ती छायावादी कवि - भावगत और शिल्पगत साम्य - वैषम्य

रामकुमार वर्मा और प्रतिनिधि उत्तर छायावादी कवि - अनुभूति और अभिव्यक्ति पक्ष साम्य - वैषम्य - निष्कर्ष ।

उपसंहार : 276- 281

परिशिष्ट 1 और 2 : 282-287

संदर्भ ग्रंथ सूची : 288 -302

अध्याय - एक

रामकुमार वर्मा का व्यक्तित्व और कृतित्व

संक्षिप्त जीवन परिचय

आधुनिक हिन्दी साहित्य में मूलत: कवि के रूप में डॉ. रामकुमार वर्मा प्रतिष्ठित हुए। उपन्यास को छोडकर एकांकी, नाटक, इतिहास, आलोचना जैसे क्षेत्रों में डॉ. रामकुमार वर्मा का स्थान उल्लेखनीय है। वर्माजी का जन्म एक शिक्षित परिवार में हुआ। उनका जन्म 15 सितम्बर सन् 1905 ई. में मध्यप्रदेश के सागर जिले में हुआ। डॉ. वर्मा के पिताजी श्री लक्ष्मी प्रसाद वर्मा, डिप्टी-कलेक्टर थे। अनेक स्थानों पर उनका स्थानान्तरण होने के कारण बालक रामकुमार की शिक्षा विभिन्न स्थानों पर हुई। इनकी माता श्रीमती राजरानी देवी थी जो अपने समय की प्रतिष्ठित कवयित्री और संगीतज्ञा थी। पिताजी के समान उनकी माता भी विदुषी थी।

डॉ. वर्मा के पितामह श्रीशोभारामजी राम भक्त थे और उन्हें काव्य, ज्योतिष, आयुर्वेद आदि पर विशेष अधिकार थे। उनके पिता काव्य रसिक थे और काव्य रचना भी किया करते थे। उनके बडे भाई श्री रघुवीर प्रसाद वर्मा ब्रजभाषा के एक प्रौढ़ कवि थे। इस प्रकार डॉ. वर्माजी को साहित्य सृजन की क्षमता परम्परा से प्राप्त हुई। माता-पिता और गुरुजन उन्हें निरन्तर प्रोत्साहन दिया करते थे।

सन् 1929 ई. में श्रीमती लक्ष्मी देवीजी के साथ वर्माजी की शादी हुई। वर्माजी के समान उनकी पत्नी अत्यन्त धार्मिक स्वभाव संपन्न महिला हैं। उनकी सुपुत्री है डॉ. राजलक्ष्मी वर्मा। पिताजी के लेखन कार्य में उनका सहयोग सराहनीय है। स्वयं डॉ. वर्मा ने "ओ अहल्या" महाकाव्य की भूमिका में इसकी ओर इशारा किया है। गत अक्तूबर 5 सन् 1990 ई. में वर्माजी का देहान्त हो गया।

शिक्षा-दीक्षा

वर्माजी की प्रारंभिक शिक्षा रामटेक (नागपुर) में मराठी में हुई । आपकी माता ने आपको हिन्दी की शिक्षा दी । उन्होंने सन् 1919 ई. में जबलपुर के क्रिश्चियन मिशन स्कूल में अपनी उच्च शिक्षा प्रारंभ की । राजनीति की ओर झुकाव होने के कारण उन्होंने सन् 1921 ई. के असहयोग आन्दोलन में भाग लिया और उन्हें अध्ययन छोड़ना पड़ा । जब सन् 1922 ई. में चौरी-चौरा हत्याकांड के कारण आन्दोलन स्थगित कर दिया तब उन्होंने फिर से अध्ययन शुरू किया और सन् 1923 ई. में प्रथम श्रेणी में इंट्रेंस परीक्षा उत्तीर्ण की । सन् 1925 ई. में जबलपुर के रोबर्ट्सन कालेज से एफ. ए. परीक्षा पास की । रामकुमार अत्यन्त मेधावी छात्र थे । उन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से प्रथम श्रेणी में सन् 1927 ई. में बी. ए. तथा सन् 1929 ई. में एम.ए. की परीक्षा पास की । वर्माजी प्रयाग विश्वविद्यालय से प्रथम श्रेणी में एम.ए. प्राप्त करने वाले प्रथम विद्यार्थी थे । आपकी प्रतिभा से प्रभावित होकर विश्वविद्यालय के अधिकारियों ने हिन्दी विभाग के व्याख्याता के रूप में आपकी नियुक्ति कर दी । आपको नागपुर विश्वविद्यालय से "हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास" पर सन् 1940 ई. में पी.एच.डी. की उपाधि मिली ।

पारिवारिक वातावरण

डॉ. वर्मा के घर में धार्मिक वातावरण था । उनके घर में नित्य कोई न कोई पूजा-अर्चा, कथा-वार्ता हुआ करती थी । परिवार के सब लोगों को भगवान राम में विशेष आस्था थीं । "रामचरित मानस" घर का परम पूज्य धार्मिक ग्रन्थ था । डॉ. वर्माजी के पितामह श्री शोभाराम भगवान् राम के उपासक थे । उन्हें अपने आराध्य के प्रति इतनी भक्ति थी कि उन्होंने परिवार के सभी बच्चों का नाम "राम" के आधार पर रखा । बचपन से लेकर तुलसीकृत "रामचरित मानस" का अध्ययन करने के कारण वर्माजी को प्रायः संपूर्ण मानस कण्ठस्थ था । उनके घर में मर्यादा का स्थान सर्वोपरी था । बच्चों से लेकर सभी नित्य प्रातः गुरूजनों का चरणस्पर्श करके आदर प्रकट करते थे । इस प्रकार आस्तिकता और मर्यादावादिता का बड़ा स्वस्थ वातावरण डॉ. वर्मा को अपने जीवन की प्रारंभिक अवस्था में प्राप्त हुआ ।

जिस परिवार में डॉ. वर्मा का जन्म हुआ था, वह लोकसेवी, और मातृभूमि का अनन्य उपासक था । सन् 1857 ई. के प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम में महारानी लक्ष्मीबाई के साथ उनके प्रपितामह श्री. विश्राम सिंह सम्मिलित थे । इसी संस्कार से प्रेरित होकर बालक रामकुमार ने सन् 1921 ई. में महात्मा गाँधी के असहयोग आन्दोलन में भाग लिया ।

अपने मित्रों के प्रति उनका व्यवहार बहुत शिष्ट था । भारत के अलावा विदेशों में रहनेवाले लोगों से भी उन्होंने मित्रता स्थापित की । महाकवि पन्त, महादेवी वर्मा, भगवती चरण वर्मा, बच्चन, अश्क, बी.डी.एन. शाही, जगदीश गुप्त, रघुवंश, वाचस्पति पाठक, अमृतराय, बालकृष्ण राव, इन्दिरा "नूपुर" आदि साहित्यकारों के प्रति उनका अटूट संबन्ध था । स्वर्गीय प्रेमचन्द के साथ उनका घनिष्ठ संबन्ध था । महाकवि प्रसाद और सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला के प्रति उनकी विशेष आस्था थी ।

डॉ. रामकुमार वर्मा, डॉ. धीरेन्द्र वर्मा के प्रिय शिष्य थे । उनकी देख-रेख में वर्माजी की प्रतिभा काफी विकसित हुई ।

वर्माजी का व्यक्तित्व -

डॉ. वर्मा तेजस्वी और प्रभावशाली व्यक्तित्व संपन्न थे । उनका उन्नत ललाट विस्तृत और गहन ज्ञान का परिचायक माना जाता था । उनके स्वभाव की प्रमुख विशेषता विनोदप्रियता थी । मौलिक चिन्तन तथा प्रत्युत्पन्नमति उनके प्रमुख गुण थे । वर्माजी के व्यक्तित्व की शालीनता, हृदय की भावुकता और रुचि की कलात्मकता पग पग पर परिलक्षित होती है ।

वे मृदुल और सरल स्वभाव वाले थे । प्रसाद के समान वर्माजी अन्तर्मुखी प्रवृत्ति के व्यक्ति नहीं बल्कि बहिर्मुखी प्रवृत्तिवाले थे । वे अपने आसपास के वातावरण, एवं परंपराओं में रुचि लेते थे । उनके हृदय में अछूतों के प्रति ममता थी । गाँधीजी के अछूतोद्धार आन्दोलन से प्रभावित होकर ही तो उन्होंने "एकलव्य" महाकाव्य की रचना की

वर्माजी एक आस्थावादी कलाकार थे । आलोचकों ने वर्माजी के काव्य पर निराशावाद का आरोप लगाया है, लेकिन वर्माजी के अनुसार उनका निराशावाद आध्यात्मिक क्षेत्र का है । वर्माजी एक मानवतावादी और आशावादी व्यक्तित्ववाले थे । उनकी रचनाओं में इन चारित्रिक विशेषताओं का प्रतिफलन देख सकते हैं ।

जीवन के अन्यक्षेत्रों के समान कला में भी व्यवस्था के प्रबल समर्थक थे । वे संगीतज्ञ भी थे । वे अपने गीतों को विविध रागों में संयोजित कर मधुर स्वर में गाया करते थे । इन सब के अतिरिक्त वर्माजी एक सफल अभिनेता भी थे । वे विश्व-विद्यालयों के अन्तर्गत, अनेक नाटकों में सफल अभिनय, निर्देशन एवं रंग संयोजन करते थे ।

डॉ. वर्मा के मन में माता-पिता एवं गुरुजनों के प्रति बहुत आदर था । वर्माजी एक निर्भीक, दृढ़प्रतिज्ञ एवं स्वाभिमानी व्यक्ति थे । उन्हें अपने आराध्य राम में अड़िग आस्था थी । इसीलिए उन्होंने विषम परिस्थितियों में अकेले ही जूझकर जीवन की विजय प्राप्त की है । उन्होंने अपने को भगवती वीणा पाणिनी के चरणों में सर्वतो-भावेन आत्मसमर्पण किया है । वे सबको आदरणीय मानते थे ।

<u>सेवाकार्य</u>

रामकुमार वर्माजी प्रयाग विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में 37 वर्षों तक अध्यापन कार्य करते थे और सन् 1966 ई. में कार्य निवृत्त हुए । सन् 1948 ई. में मध्यप्रदेश सरकार के निमन्त्रण पर वे प्रौढ़ शिक्षा विभाग के निदेशक होकर एक वर्ष केलिए नागपुर गए । सन् 1957 ई. में सोवियत संघ के निमन्त्रण पर भारत सरकार के द्वारा उनको हिन्दी विभाग के अध्यक्ष के रूप में मोस्को सोवियत संघ भेजा गया । सन् 1963 ई. में नेपाल के त्रिभुवन विश्वविद्यालय में शिक्षा सहायक के रूप में उन्हें निमंत्रित किया गया । सन् 1967 ई. में श्री लंका के पैरेदिनिया विश्वविद्यालय में वे भारतीय भाषा विभाग के अध्यक्ष के रूप में गये । सन् 1966 ई. में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग में प्रोफेसर के रूप में नियुक्त हुए । सन् 1967 ई .में उत्तरप्रदेश सरकार द्वारा हिन्दी ग्रंथ अकादमी के शासी मण्डल के अध्यक्ष रूप में उनकी नियुक्ति हुई । सन् 1981 ई. में श्रीमती इन्दिरा गाँधी द्वारा केन्द्रीय हिन्दी परामर्शदात्री समिति के सदस्य नामित हुए । सन् 1982 ई. में राष्ट्रीय ग्रन्थ विकास काउन्सिल के सदस्य नामित हुए ।

जीवन की महत्वपूर्ण घटनाएँ

रामकुमार वर्माजी को सन् 1963 ई. में पद्म भूषण, सन् 1967 ई. में रत्न, सन् 1968 ई. में साहित्य वाचस्पति, आचार्य आदि उपाधियाँ प्राप्त हुईं ।

डॉ. रामकुमार वर्मा को सन् 1920 ई. में "नागरी काव्य पुरस्कार", सन् 1922 ई. में "देशसेवा" नामक कविता पर "वेनी माधव खन्ना काव्य पुरस्कार", सन् 1929 ई. में हॉलेंड स्वर्ण पदक, सन् 1936 ई. में "चित्ररेखा" नामक काव्य संग्रह पर "चक्रधर पुरस्कार" सन् 1940 ई. में रत्न कुमारी पुरस्कार, सन् 1947 ई. में केन्द्रीय शासन नाटक पुरस्कार, सन् 1950 ई. में उत्तर प्रदेश संस्था पुरस्कार, सन् 1960 ई. और सन् 1970 ई. में कालिदास पुरस्कार प्राप्त हुए ।

डॉ. रामकुमार वर्मा ने सन् 1957 ई. में सोवियत् संघ, सन् 1963 ई. में नेपाल, सन् 1967 ई. में श्री लंका, सन् 1983 ई. में सोवियत् संघ, सन् 1984 ई. में अमेरिका, लन्दन आदि विदेश राज्यों की यात्रा की । इन यात्राओं से उनका दृष्टिक व्यापक हो गया ।

कृतित्व

डॉ. रामकुमार वर्मा ने नाटक, एकांकी, निबन्ध, आलोचना, कविता आदि क्षेत्रों को समृद्ध बनाया है । उन्होंने पुस्तकों का संपादन कार्य भी किया है और संस्मरणात्मक रचनायें भी की हैं । उन्होंने 25 नाटकों, 21 एकांकी संग्रहों, 5 गवेषणप ग्रन्थों, 7 आलोचनात्मक ग्रंथों, एक निबन्ध संग्रह, 2 संस्मरणात्मक ग्रंथों और एक गद्यगी की भी रचना की है । इसके अतिरिक्त 13 ग्रंथों का संपादन कार्य भी किया है जिनकं सूची परिशिष्ट-1 में दी गई है ।

उनके काव्य ग्रन्थ क्रमशः ये हैं "वीर हमीर" {सन् 1923}, "कुल ललना" {सन् 1927}, "चितौड की चिता" {सन् 1929}, "अभिशाप" और "अंजलि" {सन् 1930}, "रूपराशि" {सन् 1932}, "निशीथ" {सन् 1933}, "चित्ररेखा" {सन् 1935}, "चन्द्रकिरण" {सन् 1936}, "संकेत" {सन् 1948}, "आकाशगंगा" {सन् 1955}, "एकलव्य" {सन् 1957}, "कृत्तिका" और "गजरे तारों वाले" {सन् 1966}, "उत्तरायण" {सन् 1972}, "सन्त रैदास" {सन् 1978}, "ओ अहल्या" {सन् 1985} और "बालि-वध" {सन् 1989} । छायावादी प्रकृति तथा प्रवृत्तियों से युक्त उनका काव्य निश्चय ही हिन्दी साहित्य की बहुमूल्य संपदा है । उपर्युक्त काव्य ग्रंथों का संक्षिप्त परिचय यहाँ प्रस्तुत करना संगत होगा ।

वीर हमीर

डॉ. रामकुमार वर्मा ने सन् 1923 ई. में अपने प्रथम ऐतिहासिक खण्डकाव्य "वीर-हमीर" की रचना की । वर्माजी ने इस प्रारंभिक खण्डकाव्य का चयन द्विवेदी युगीन इतिवृत्तात्मक शैली में किया । इसका कथानक वीरत्व, स्वदेश प्रेम, शरणागत वत्सलता की भावना से ओतप्रोत है । उन्होंने द्विवेदी युगीन राष्ट्रीयता और आदर्शवादी प्रवृत्ति से प्रभावित होकर इस की रचना की । यह खण्डकाव्य ग्यारह छोटे छोटे सर्गों में विभाजित है । प्रस्तुत खण्डकाव्य में वीर-शूर राजपूतों के प्रण-पालन का चित्र दर्शाया गया है । इसका संक्षिप्त कथानक इस प्रकार है ।

प्रथम सर्ग से हमीर की शरणागत भावना का परिचय मिलता है । शरण माँगकर अलाउद्दीन का सरदार मंगोल आता है और हमीर उसे अभयदान देता है । दूसरे सर्ग में अलाउद्दीन और हमीर के वाग्युद्ध का वर्णन है जो उनके दूत के माध्यम से हुआ । अलाउद्दीन अपने सैनिकों में वीर भावना का संचार करके युद्ध के लिए तैयार होते हैं तीसरे सर्ग में।चौथे सर्ग का कथानक है सैनिकों में आत्मविश्वास जगाकर युद्ध करने का हमीर का आदेश और हर सैनिक को अपने देश की रक्षा हेतु आत्म-समर्पण के लिए प्रेरित करना । पाँचवें सर्ग में हमीर और अलाउद्दीन के बीच हुए घोर संग्राम का वर्णन है ।

छठे सर्ग की कथा इस प्रकार है - हमीर का सचिव सरजन अलाउद्दीन के पक्ष में जा मिलता है और किले का रहस्य बताते हैं । अलाउद्दीन पुनः पूरी तैयारी के साथ आक्रमण करने के लिए आते हैं । सातवें सर्ग में हमीर अपनी पत्नी से विदा लेने के लिए आते हैं और उनके सामने यह प्रस्ताव भी रखते हैं कि यदि उनकी पराजय हो जाय तो राज रानियाँ जौहर का प्रस्ताव करें । आठवें सर्ग में अलाउद्दीन और हमीर के बीच हुए युद्ध का वर्णन और अलाउद्दीन द्वारा अपनी हार स्वीकार करके हमीर के साथ मैत्री स्थापित करने की कथा है । विजयी होकर हमीर यवन-ध्वजा लेकर राजमहल लौटते हैं जो उनके द्वारा हुई एक भूल की कथा भी है । नवें सर्ग में यवन ध्वजा देखकर राजरानियाँ यह निश्चय करती हैं कि युद्ध में आर्य सेना की पराजय हो गई है और वे आनन्द के साथ जौहर व्रत का पालन करती हैं । दसवें सर्ग में हमीर अपनी भूल पहचानते हैं और पश्चाताप विवश होकर स्वयं तलवार से अपना सिर काट डालते हैं । हमीर की मृत्यु का समाचार सुनकर अलाउद्दीन अपना दुःख प्रकट करते हैं और सरजन को दंड भी देते हैं । ग्यारहवें सर्ग में कवि ईश्वर से यह प्रार्थना करते हैं कि हमीर जैसे वीर इस देश में बार बार जन्म लें, लेकिन उनके द्वारा जो भूल हुई वैसे इस देश में कभी न हो जायें ।

कुल ललना

सन् 1927 ई. में "कुल ललना" नामक काव्य संग्रह का प्रकाशन हुआ । अपनी माता के आदेशानुसार उन्होंने "कुल ललना" की रचना की । इस संग्रह के प्रारंभ में उन्होंने इस रचना के उद्देश्य पर प्रकाश डाला है - "स्नेहमयी माँ, तुम सदा कहा करती थीं कुमार ! तुम स्त्री - जाति के लिए उपयोगी किसी पुस्तक की रचना कर दो । तुम्हारी आज्ञा का पालन ही इस पुस्तक की रचना का कारण है ।"[1] स्पष्ट है कि नारी जीवन ही "कुल ललना" का प्रतिपाद्य है । सुदर्शन कृत "आदर्श नारी" और रूप नारायण पाण्डेय कृत "आदर्श नारियाँ" जैसी पुस्तकों का अध्ययन करके वर्माजी ने

---

1. कुल ललना - डॉ. रामकुमार वर्मा - "मुखपृष्ठ" से ।

"कुल ललना" की रचना की । विवाह, ससुराल, पति-पत्नी प्रेम, परिजनों के प्रति कर्तव्य, चरित्र-दृढ़ता, आभूषण, संगीत, गृहकार्य, स्वच्छता और शरीर रक्षा जैसे विषयों को इस काव्य-ग्रंथ का आधार माना । प्रारंभ में उन्होंने एक अनुक्रमणिका भी प्रस्तुत की है जिसमें नारी के धर्म और कर्तव्यों पर प्रकाश डाला है । उनके अनुसार -

"जन्म वृथा है उनका जग में,
  वे जीवित हैं मृतक समान
उनसे ललना कुल का भारी
अवनीतल पर है अपमान ।"[1]

इस कवितांश में भावुकता की अपेक्षा नैतिकता का चित्रण है । इसमें वर्माजी ने सरल और ललित पदावली में नारी के लिए आवश्यक गुणों को व्यक्त किया है । इसके अंत में कवि ने उपसंहार के रूप में ईश्वर से भारतीय नारियों की उन्नति और विकास की प्रार्थना की है जो उनकी समाज अथवा देश प्रेम विषयक भावना का परिचायक है । यही नहीं प्रस्तुत काव्य की प्रासंगिकता के सन्दर्भ में विचार करें तो वर्तमान समाज जिस नारी शिक्षातथा उनके सुधार पर बल देते हैं वह भावसन् 1927 ई. में याने स्वाधीनता पूर्व लिखे गये इस काव्य में प्रतिबिंबित है ।

"माताएँ विदुषी बन जग में
कर दें नारी - जाति - उद्धार ।"[2]

डॉ. वर्मा के अनुसार नारी भी शिक्षित होनी चाहिए जिससे ही इनका उद्धार संभव हो सकता है ।

----

1. कुल ललना - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 12.

2. वही - पृ: 140.

चितौड़ की चिता

सन् 1929 ई. में वर्माजी ने अपना द्वितीय खण्डकाव्य "चितौड़ की चिता" की रचना की । उस समय वे प्रयाग विश्वविद्यालय के बी. ए. के छात्र थे । वर्माजी ने इस ऐतिहासिक खण्डकाव्य की रचना द्वारा राजपूतों की वीरता, क्षत्राणियों का जौहर व्रत, उनके स्वाभिमान और सतीत्व पालन का सुन्दर चित्र उपस्थित किया है ।

"चितौड़ की चिता" में महारानी करुणा के चरित्र में क्षत्राणियों के समस्त गुणों का आरोप करके वर्माजी ने उनके माध्यम से जौहर व्रत के पालन द्वारा मरण वरण करने का चित्र खींचा है । वीर संग्राम सिंह चितौड़ के राजा हैं और वह पत्नी करुणा के साथ सुखमय जीवन बिताने लगा । इसी बीच मुगलसम्राट बाबर ने युद्धाह्वान किया और चितौड़ का आनन्द नष्ट हुआ । वीर राणा ने बाबर के साथ युद्ध करके रण-भूमि में वीर मृत्यु को स्वीकार करने का निश्चय किया ।

घोर युद्ध हुआ । राणा ने युद्ध क्षेत्र में अपनी वीरता और पराक्रम से शत्रुपक्ष को ललकारा । लेकिन सैनिकों की कमी के कारण राजपूतों को पराजय स्वीकार करना पड़ा । राणा ने वीर गति प्राप्त की । राणा की वीरगति का समाचार सुनकर रानी करुणा अत्यन्त दुखित हुई । इसी समय वह एक माँ बननेवाली थी । उसने अपने पुत्र का नाम उदयसिंह रखा ।

पुत्र की वर्ष गाँठ का दिन आ गया । सारे चितौड़ में आनन्द का प्रकाश फैल गया । एक वीर शासक के अभाव के कारण देश में अशान्ति और अत्याचार फैलने लगा । चितौड़ की अशान्ति देखकर बहादुरशाह ने चितौड़ पर आक्रमण करने का निश्चय किया । महारानी करुणा ने हुमयूँ से अपने देश की रक्षा करने की प्रार्थना की । हुमयूँ ने रानी को अभयदान का वचन दिया । करुणा हुमयूँ की सेना की प्रतीक्षा करती रही । इसी बीच बहादुरशाह ने चितौड़ पर आक्रमण शुरू किया । अनेक वीरों की मृत्यु हुई ।

चितौड के राजमहलों में चिता की ज्वाला भभकने लगी । क्षत्राणियाँ पूर्ण श्रृंगार के साथ अपने पतियों का स्मरण करते हुए चिता में कूद पडीं । रानी करुणा ने अपने पुत्र का आलिंगन किया और भभकती ज्वाला के भीतर सिमट गई । चितौड़ की पराजय और बहादुरशाह की जीत हुई । केवल चितौड़ की पराजय के बाद ही हुमयूँ चितौड़ पहुँच सका । हुमयूँ ने बहादुरशाह को हराया लेकिन उसे अपनी जीत पर आनन्द नहीं हुआ । क्षत्राणियों के जौहर का समाचार सुनकर वह अत्यन्त दुःखी हुआ ।

अंजलि

सन् 1930 ई. में "अंजलि" नामक काव्य संग्रह का प्रकाशन हुआ । डॉ. वर्मा के आगे के गीतों में जो रहस्योन्मुखता और छायावादी काव्यधारा की अन्य प्रवृत्तियं की प्रचुरता हमें दीखती हैं इनका प्रस्फुटन "अंजलि" के गीतों में हुआ है । "अंजलि" वर्माजी के आगे के गीतों की भूमिका प्रस्तुत करती है । इसकी कविताएँ रहस्यवाद और प्रकृतिवाद की समन्वयात्मक व्याख्या प्रस्तुत करती है । "अंजलि" में प्रायः रहस्यवादी गीतों की विशेषताओं से युक्त रचनायें संकलित है ।

प्रस्तुत काव्य संग्रह की "ये गजरे तारों वाले", "एकान्त गान" जैसी कविताएँ कल्पना एवं भावुकता की दृष्टि से महत्वपूर्ण है । दिव्य सौन्दर्य की ललक, उसके चरणों में प्रेम निवेदन का भाव और जीवन की विषमता विफलता से उत्पन्न अशान्ति और वेदना के भाव "अंजलि" में सर्वत्र मिलेंगे । भाव की पूर्णता, कल्पना की उड़ान, रूपचित्रण सुकुमारता आदि दृष्टियों से "ये गजरे तारों वाले" का महत्वपूर्ण स्थान है ।

अभिशाप

सन् 1930 ई. में वर्माजी ने "अभिशाप" नामक काव्य-संग्रह की रचना की "अंजलि" का भावुक कवि "अभिशाप" तक आकर चिन्तक एवं विचारक बन गया है । वे संसार को दुःखमय और परिवर्तनशील मानते हैं । "अभिशाप" में संकलित गीतों का कथ्य

चिन्तन के आलोक से प्रोद्भासित है । इस संग्रह के "अशान्त" शीर्षक गीत में इसी चिंतन की अभिव्यक्ति हुई है । "अभिशाप" में नश्वरता, क्षणिकता और दुःखवाद का चित्रण है । कुमारजी ने निराशा और वैराग्य को गीतों द्वारा वाणी दी है । "कंकाल" कविता में कवि ने शरीर को शुष्क धूल का छविमय जाल कहा है । वर्माजी मृत्यु को जीवित क्षण की हार मानते हैं । कवि का विश्वास है कि जीत में जीवन की हार छिपी हुई है ।

रूपराशि

सन् 1932 ई. में वर्माजी ने "रूपराशि" नामक काव्य संग्रह की रचना की । "रूपराशि" की सभी कविताएँ कल्पना से रंगीन हैं । इसके अधिकांश गीतों में "प्रेयसी" संबोधन मिलते हैं । वर्माजी की प्रेम भावना की अभिव्यक्ति इस संग्रह के अनेक गीतों में हुई है । इसके साथ ही इस रचना की अन्य विशेषता है प्रकृति के असीम सौन्दर्य देखकर जिज्ञासा प्रकट करना जो रहस्यवाद की मूल विशेषता है । किसी से मिलने की तीव्र उत्कंठा की भावना इसमें प्रचुर मात्रा में हुई है । दार्शनिक चिन्तन की अभिव्यक्ति भी इसमें दृष्टिगोचर होती हैं । इसके अधिकांश गीत छोटे आकार के हैं । इसके अपवाद भी मिलते हैं जैसे "नूरजहाँ", "अशान्त", "कंकाल", जैसे गीत । "शुजा" इस संग्रह की लंबी कविता है जिसे शोकगीत के अन्तर्गत मान सकते हैं । अभिव्यक्ति की कुशलता और मानवीकरण की प्रवृत्ति आदि दृष्टियों से "रूपराशि" महत्वपूर्ण रचना है । भावनाओं की कोमलता और कल्पना की उन्मुक्त उड़ान इन दोनों दृष्टियों से "अंजलि" और "रूपराशि" की कविताएँ पर्याप्त सुन्दर हैं ।

निशीथ

सन् 1933 ई. में वर्माजी ने "निशीथ" नामक खण्डकाव्य की रचना की जो बारह सर्गों में संगृहीत है । यह पूर्णतया भावमय काव्य है । हृदय चित्रण करना ही कवि का लक्ष्य है । भावात्मकता और कलात्मकता की दृष्टि से यह एक उत्कृष्ट काव्य है सुकुमार, इन्दिरा और कमला इसके प्रमुख पात्र हैं । इसकी संक्षिप्त कथा इस प्रकार है ।

सुकुमार और इन्दिरा प्रेमी-प्रेमिका है । एक दिन उपवन में टहलते समय सुकुमार एक नारी की करुणा भरी सिसकी सुनी । वह स्वर कमला का था जो उपवन में फूल तोडने के लिए आयी थी । उसके पैरों में काँटा चुभ गया । इसी कारण वह रोती थी । सुकुमार उसके पैरों में लगे काँटे को निकालता है । कमला सुकुमार को देखकर मुग्ध हो जाती है । दोनों का परिचय होता है । इन्दिरा और कमला एक दूसरे की सहेलियाँ हैं । एक दिन इन्दिरा के मुँह से अपने प्रिय सुकुमार का नाम सुनकर कमला चकित हो जाती है । कमला सुकुमार को एक प्रेम पत्र भेजती है और वह सुकुमार से प्यार माँगती है । यह पत्र पढ़कर सुकुमार के मन में द्वन्द्व उत्पन्न हो जाता है । वह अपने हृदय में इन्दिरा को ही स्थान देने का निश्चय करता है । अपनी असमर्थता दिखलाकर वह कमला को पत्र भेजता है । पत्र पढ़कर कमला क्रुद्ध हो जाती है और वह बदला लेने का निश्चय करती है । कमला सुकुमार के पास आकर यह सन्देश देती है कि इन्दिरा सुकुमार के वियोग में तडप रही है और वह "रमा निवास" के झील में उनकी प्रतीक्षा करती रहती है । सुकुमार रमानिवास जाने का निश्चय करता है । कमला इन्दिरा के पास जाकर सुकुमार की दुश्चरित्रता के बारे में बताकर उनका मन फेरने का प्रयास करती है । घोर अन्धकार का समय था । निशब्द वातावरण था । अचानक एक घोर शब्द सुनाई पडा । इस ओर आनेवाली एक नौका टक्कर लगाकर उलट पड़ी और एक नारी का मन्द स्वर भी सुनाई पड़ा जो सुकुमार का नाम भी पुकारती थी । सुकुमार उस अज्ञात नारी को बचाने के लिए नदी में कूद पड़ा और जल ने दोनों को अपने वक्षस्थल में ले लिया । प्रातः काल निकल गया । जल में दो सूनी नौकाएँ थीं मानो वे यह पुकारती थी कि "इन्दिरे कहाँ सुकुमार ।"

चित्ररेखा

सन् 1935 ई. में वर्माजी ने "चित्ररेखा" नामक काव्य संग्रह की रचना की यह काव्य संग्रह वर्माजी की महत्वपूर्ण रचनाओं में से एक है । उन्हें सन् 1936 ई. में इस काव्य संग्रह पर "देव पुरस्कार" मिला । "चित्ररेखा" में कवि रहस्यवाद की उच्चतर

भूमिका तक पहुँच गये हैं । इसमें अव्यक्त और अज्ञात प्रियतम के प्रति कवि की तीव्र वेदना की गहरी अनुभूति व्यक्त हुई है । इसमें कवि पूर्ण रूप से अध्यात्मवादी बन गए हैं । कवि ने प्रकृति को कैनवास के रूप में ग्रहण करके अपनी रहस्यानुभूति और आध्यात्मिक भावनाओं को अभिव्यक्त किया है । उन्हें अपने चारों ओर दुःख की उत्ताल तरंगें दिखाई पडती है उन्हें यह विश्वास होने लगा कि जीवन में संघर्ष की अधिकता है । कवि यह अनुभव करने लगा कि केवल मृत्यु में शान्ति प्राप्त होती है और जीवन को करुणामय प्रवास मानते हैं । उनके अनुसार जीवन तो पीडा, संघर्ष और दुःख का अभिनय मात्र है । इस काव्य संग्रह के गीतों में कवि का निराशावादी दृष्टिकोण प्रकट हुआ है और उसे प्रकृति में चारों ओर दुःख, नैराश्य और दैन्य के दर्शन होते हैं । कवि कभी इस प्रकार सोचते हैं कि प्रकृति अपने आनन्द को दिखाकर उसकी हँसी उडा रही हो । कवि का ध्यान अव्यक्त और सर्वशक्ति शाली विश्व नियामक की ओर जाता है और संसार की अंधी गलियों में भटकने वाली अपनी आत्मा की याद आती है । उसकी आत्मा कातर चीत्कार कर उठती है ।

चन्द्रकिरण

सन् 1936 ई॰ में उन्होंने "चन्द्रकिरण" नामक काव्य संग्रह की रचना की । उन्हें इस काव्य संग्रह पर सन् 1937 ई. में "चक्रधर" पुरस्कार मिला है । कवि ने "चित्ररेखा" में जिस रहस्यानुभूति की अभिव्यक्ति की वह "चन्द्रकिरण" में आकर अधिक विकसित हो गई । रहस्यानुभूतिपरक चिन्तन इन गीतों की रीढ़ है । कवियों ने अपनी रचनाओं में आत्मा और परमात्मा के नृत्य का वर्णन किया है । सृष्टि के कण-कण में प्रतिबिंबित इस नृत्य का प्रतीकात्मक चित्रण कवियों ने किया है । यदि उनके मन में आत्मा और परमात्मा के बीच होनेवाले इस नृत्य का ज्ञान होता है तो उसे सारी प्रकृति में इस नृत्य का आभास दृष्टिगत होता है । दार्शनिक आलोचक इसे रहस्यवाद के अन्तर्गत मानना चाहते हैं । लेकिन वर्माजी इस अनुभूति को किसी वाद से जोडना नहीं चाहते । वह अपनी इस अनुभूति का दर्शन संसार की सारी सुन्दर वस्तुओं में करता है । उन्हें सृष्टि के प्रत्येक कण में इस नृत्य की कीर्ति रूपी अनेक चन्द्रकिरण दिखाई पडते हैं ।

शायद इसी भावना के कारण कवि ने इस संग्रह का नाम "चन्द्रकिरण" रखा होगा । उन्होंने एक सर्वशक्तिमान अलौकिक सत्ता को मानव हृदय की समस्त भावनाओं और प्रवृत्तियों का मूल मानकर अपने गीतों द्वारा उस सत्ता की साधना की है । इसमें करुण भावना का प्राधान्य है ।

संकेत

वर्माजी ने सन् 1948 ई में "संकेत" नामक काव्य संग्रह की रचना की । "आकाश गंगा" में भी "संकेत" नाम से दो कविताएँ संग्रहीत हैं । लेकिन यह तो कवि की एक स्वतन्त्र रचना है । "आधुनिक कवि-3" संग्रह में इस संकलन की 13 कविताएँ संकलित की गई है । दुःख और निराशा पर नियन्त्रण करते हुए कवि प्रकृति के परिवर्तन को पुण्य मानते हैं । कवि सुख दुःख के प्रति सतर्क रहने का आदेश भी देते हैं । वे ब्रह्म का सामीप्य पाकर नश्वरता के दुःख को भूल जाते हैं । उसे सुख और दुःख की चिन्ता नहीं ।

आकाशगंगा

वर्माजी ने सन् 1955 ई. में "आकाशगंगा" की रचना की । उनकी रचना के प्रौढ़काल में "आकाश गंगा" और "एकलव्य" की रचना हुई । कवि कल्पना की सुन्दर सृष्टि है "आकाशगंगा" उनका संकल्प है - देवबालाओं के बाल से बिखरे फूल ही नक्षत्रों के रूप में दिखाई पडते हैं । कवि मन भी एक आकाश गंगा है जो प्रकृति सौन्दर्य से प्राप्त संवेदनाओं से सज्जित है । भावनाओं के भीषण संघर्ष से कवि की संवेदनाएँ झकझोर रही हैं । कवि के इस भावोद्वेलन ने "आकाशगंगा" का रूप धारणा किया ।

इस काव्य संग्रह को दो भागों में विभाजित किया गया है - "तारिका मंडल और आलोक मंडल । वर्माजी ने विभिन्न मनोदशाओं में इन कविताओं की रचना की । इस संग्रह की कविताएँ उनके प्रौढ़ चिन्तन, गहन अनुभूति, पूर्ण समर्पण भाव और कलात्मक अभिव्यंजना के परिचायक हैं ।

आलोक मण्डल की कविताओं की विशेषता उनकी प्रबंधात्मकता में है । "बादल" एक संबोधन गीत है । "चट्टान" शीर्षक कविता वर्माजी की प्रसिद्ध और कलापूर्ण रचना है । कवि ने चट्टान से अविचल निर्भीकता और दृढता की, व्यथित और अभिशप्त अहल्या के मौन क्रंदन की, अखण्ड साहस और अटल संकल्प की प्रेरणाएँ ग्रहण की । आकाशगंगा की कविताओं में बौद्ध दर्शन की झलक है ।

एकलव्य

सन् 1957 ई. में वर्माजी ने "एकलव्य" नामक प्रथम महाकाव्य की रचना की जो उनकी मानवतावादी युगचेतना की सशक्त अभिव्यक्ति है । गाँधीजी के अछूतोद्धार आन्दोलन से प्रभावित होकर उन्होंने "एकलव्य" की रचना की । वर्माजी ने स्पष्ट रूप से इस विषय पर प्रकाश डाला है - "मेरे लिए यह कम सन्तोष की बात नहीं है कि मेरे शैशव के संस्कारों में अंकुरित और बापू के अछूतोद्धार में पल्लवित यह कथा दस वर्षों की साधना के बाद आज की युगवाणी में प्रस्फुटित हो रही है ।"[1] अछूतोद्धार और गुरु के लांछित पद का संस्कार ये दोनों उनके लक्ष्य थे । "एकलव्य" के "आमुख" में उन्होंने अपना विचार प्रकट किया है - "आचार्य शब्द लांछित न हो यही विधेय है ।"[2]

वर्माजी ने महाभारत की इस प्रासंगिक कथा को आधुनिक युग की विचार-धारा के सन्दर्भ में चित्रित किया है । "आधुनिक युग की परिस्थितियों में मानवता का मूल्यांकन करने की दृष्टि से इस कथा का महत्व और भी बढ़ गया है ।"[3] मानवतावाद का चित्रण आधुनिक काव्य की एक प्रवृत्ति है ही ।

----

1. एकलव्य - "आमुख" - डॉ॰ रामकुमार वर्मा - पृ: 6.
2. वही - पृ: 5.
3. आधुनिक कवि-3 - वही - पृ: 21.

महाभारत में तीस श्लोकों में कही गई इस कथा को वर्माजी ने चौदह सर्गों की व्यापक परिधि में चित्रित किया । एकलव्य गुरुभक्त, महान् कर्मनिष्ठ व्रती, अद्वितीय धनुर्धर एवं महान त्यागी है । महाभारत में द्रोण एकलव्य से स्वयं गुरुदक्षिणा के रूप में दाहिने हाथ का अंगूठा माँगते हैं जो उनपर लगाये गये कलंक है जिसे वर्माजी ने अपनी मौलिक उद्भावना द्वारा दूर करने की चेष्टा की ।

वर्माजी व्यक्ति की अपेक्षा उसके शील को महत्व देते हैं । एकलव्य के नायकत्व के संबन्ध में उनका विचार द्रष्टव्य है - "एकलव्य ने जिस आचरण का परिचय दिया है, वह किसी उच्चकुल के व्यक्ति के आचरण के लिए भी आदर्श है । वह "अनार्य" नहीं आर्य है क्योंकि उसमें "शील" का प्राधान्य है । यहीं उसमें महाकाव्य के नायक बनने की क्षमता है, भले ही वह "सुर" अथवा "सद्वंश" में उत्पन्न क्षत्रिय नहीं है ।"[1] वर्माजी के इस मत से हम पूर्णतया सहमत हो जाते हैं ।

"एकलव्य" में वर्माजी ने जाति-व्यवस्था संबन्धी अपनी धारणा व्यक्त की है । एकलव्य के माध्यम से कवि ने श्रेष्ठ गुरु भक्ति का आदर्श उपस्थित किया । वर्माजी ने "एकलव्य" द्वारा वर्गविहीन समाज की स्थापना और साम्यव्यवस्था का प्रतिपादन किया है । उन्होंने कथानक की प्राचीनता की रक्षा करते हुए उसमें नवीन राष्ट्रीय चेतना को मुखरित करने का प्रशंसनीय प्रयास किया है । वर्माजी का आशावादी दृष्टिकोण इस महाकाव्य में स्पष्ट हुआ है । "एकलव्य" में एक मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि में उसके चरित्र का विकास दिखलाया है । एकलव्य का विषय युगीन समस्याओं पर आधारित है । शिक्षा का सूत्र आज गुरू के हाथ में नहीं है । राजनीति ने गुरु को अपना अधीन बनाया है । उन्होंने एकलव्य के माध्यम से गुरु और शिष्य के बीच की प्राचीर को स्पष्ट किया है ।

---

1. एकलव्य - डॉ. रामकुमार वर्मा - "आमुख" - पृ: 6.

दर्शन, परिचय, अभ्यास, प्रेरणा, प्रदर्शन, आत्मनिवेदन, धारणा, ममता, संकल्प, साधना, स्वप्न, लाघव, द्वन्द्व, दक्षिणा जैसे चौदह सर्गों में विभक्त इस महाकाव्य की संक्षिप्त कथा इस प्रकार है । वर्माजी ने द्रोण द्वारा सींक से वीटिका निकालनेवाली घटना को एकलव्य और उनके मित्र नागदंत के वार्तालाप के माध्यम से प्रस्तुत कर इस रचना का प्रारंभ किया । इसमें द्रोण से पाण्डवों की अप्रत्याशित भेंट और उनके अमोघ धनुर्विद्या का प्रावीण्य आदि का व्यापक वर्णन किया गया है । एकलव्य मन ही मन द्रोण को अपने गुरू के रूप में मान लेता है । द्वितीय सर्ग में द्रोण हस्तिनापुर की राजसभा में अपना परिचय देते हैं । द्रुपद द्वारा उनका अपमान और उससे प्रतिशोध लेने का प्रण आदि पर प्रकाश डाला गया है । अर्जुन की लक्ष्य साधना का परिचय तृतीय सर्ग "अभ्यास" में किया गया है । चौथे सर्ग प्रेरणा में एकलव्य पर द्रोण के व्यक्तित्व के अमोघ प्रभाव का विस्तृत वर्णन है । इसमें एकलव्य की दृढ़ गुरुभक्ति का परिचय मिलता है । "प्रदर्शन" शीर्षक पंचम सर्ग में राजपुत्रों के अस्त्रशस्त्र शिक्षा के सामाजिक प्रदर्शन का वर्णन है । छठे सर्ग "आत्म-निवेदन" में द्रोण एकलव्य को अपने शिष्य रूप में स्वीकार नहीं करते हैं क्योंकि वे राजगुरु हैं,राजकुमारों को ही शिक्षा दान देते हैं । लेकिन वह स्वयं द्रोण को अपने गुरु के रूप में मानकर घर लौटता हैं । सातवें सर्ग "धारणा" में गुरुद्वारा उपेक्षित और अस्वीकृत एकलव्य के प्रति उनके मित्रों के व्यंग्य पर प्रकाश डाला है । इस सर्ग में आदर्श गुरुभक्ति और द्रोण की उपेक्षा का चित्र प्रस्तुत किया गया है । एकलव्य धनुर्वेद की साधना के लिए घोर वन चला जाता है । आठवें सर्ग "ममता" में कवि ने माता के वात्सल्यपूर्ण पुत्र वियोग की अन्तर्दशाओं का वर्णन किया है । "संकल्प" नामक नवमसर्ग में एकलव्य की साधना का वर्णन है । सामाजिक व्यवस्था पर एकलव्य का आक्रोश और भूमिकण से गुरू की मूर्ति का निर्माण करना आदि पर कवि ने प्रकाश डाला है । दसवें सर्ग "साधना" में एकलव्य की ऐकांतिक साधना का चित्रण है । उनके मन में जातिव्यवस्था के प्रति उत्पन्न दुःख और राजनीति की क्षुद्रता के प्रति विद्रोह की भावना है । "स्वप्न" नामक ग्यारहवें सर्ग में द्रोण को स्वप्न द्वारा अर्जुन से अधिक समर्थ एक श्यामलकुमार का परिचय प्राप्त होता है । बारहवें सर्ग "लाघव" में पाण्डवों का, मृगया के लिए वन जाना और धनुर्धर एकलव्य से उनकी भेंट आदि पर प्रकाश डाला है । "द्वन्द्व" शीर्षक तेरहवें सर्ग में एकलव्य के मिलन के पश्चात द्रोण और अर्जुन के मन में उत्पन्न द्वन्द्व का वर्णन है । चौदहवें सर्ग "दक्षिणा"

में एकलव्य के महादान की कथा पर प्रकाश डाला गया है । इसमें आदर्श शिष्य के रूप में एकलव्य का चरित्रोद्घाटन किया गया है । जो गुरु की प्रणपूर्ति के लिए अपना दाहिना अंगूठा काट देता है जिससे पार्थ ही अद्वितीय धनुर्धर बन सके । वह अपने इस अंगूठे को गुरुदक्षिणा के रूप में समर्पित कर देता है ।

आधुनिक कवि-3

शक संवत् 1884 (सन् 1963 ई.) में वर्माजी ने हिन्दी साहित्य सम्मेलन की साहित्य समिति के लिए इस ग्रंथ का संकलन किया । प्रस्तुत ग्रंथ वर्माजी के सन् 1929 ई. से लेकर सन् 1957 ई. के बीच रचित "अंजलि" अभिशाप" "रूपराशि", "चित्ररेखा", "चन्द्रकिरण", "संकेत", "एकलव्य" और "आकाशगंगा" - इन आठ काव्यों का संकलन है । इस काव्य संग्रह की विशेषता यह है कि इसके प्रारंभ में "मेरा दृष्टिकोण" शीर्षक के अन्तर्गत वर्माजी अपनी काव्य विषयक मान्यताएँ प्रस्तुत करते हैं । वर्माजी इसकी भूमिका में कविता क्या है, विज्ञान से बढ़कर कविता की महत्ता क्या है, कविता की परिभाषा, रहस्यवाद और अद्वैतवाद में अन्तर, रहस्यवाद में प्रेम और करुणा की महत्ता, रहस्यवाद के तत्व, कविता में दुःख की प्रधानता और मुक्त छन्द जैसे विषयों पर प्रकाश डालते हैं ।

वर्माजी के ही शब्दों में - "कविताओं में मेरे जीवन की अभिव्यक्ति होती है ।"[1] कविता एक पवित्र अनुभूति है । जीवन से अलग रहनेवाली कविता श्रेष्ठ नहीं है ।

विज्ञान ने मानव जीवन में अनेक सुविधाएँ प्रदान कीं लेकिन वह मानव की आत्मा में जागृति उत्पन्न करने में सक्षम नहीं है । यह कार्य कविता द्वारा संपन्न होता है

----

1. आधुनिक कवि-3 - मेरा दृष्टिकोण - पृ: 7.

वर्माजी के अनुसार कविता की परिभाषा यह है - "आत्मा की गूढ़ और छिपी हुई सौन्दर्य राशि का भावना के आलोक से प्रकाशित हो उठना ही "कविता" है ।"[1] आत्मा का विशद सौन्दर्य पहचानने वाला कवि मन व्यापक क्षेत्र में पहुँचता है । उसके हृदय में गतिशीलता उत्पन्न होती है । "कविता अपनी गति में ही स्वतन्त्र होती है - वह अक्षरों, शब्दों मात्राओं से परे होती है । जिस प्रकार जीवन में आन्तरिक सौन्दर्य के साथ ही साथ बाह्य सौन्दर्य की अपेक्षा है, सिद्धान्त के साथ आचरण की एकरूपता अपेक्षित है, उसी प्रकार कविता में भी अनुभूति के साथ नियमित गति होनी चाहिए ।"[2] स्वयं वर्माजी के शब्दों में "गतिशीलता का नाम ही कविता है ।"[3]

अपने अहं में सीमित रखनेवाला व्यक्ति दुःख का अनुभव करता है । इस अहं को भूलकर अपने को असीम बनाने में ही वास्तविक सुख है । इसीलिए तो बौद्धमत में शून्यवाद का महत्व है । इस शून्यवाद में ही वास्तविक आनन्द है, क्लेश से मुक्ति है ।

रहस्यवाद आत्मा में विश्वात्मा की अनुभूति है । प्रेमतत्व के आधार पर वह आत्मा और परमात्मा में ऐक्य स्थापित करता है । रहस्यवाद और अद्वैतवाद का सूक्ष्म अन्तर समझाते हुए वर्माजी स्थापित करते हैं कि जहाँ अद्वैतवाद में एकीकरण की भावना है वहाँ रहस्यवाद में ऐक्य की भावना है । अद्वैतवाद में मिलन की भावना का ज्ञान भी नहीं रहता लेकिन रहस्यवाद में यह मिलन एक उल्लास की तरंग बनकर आत्मा में जागृत रहता है । कबीर का "जल में कुंभ, कुंभ में जल दोहे में अद्वैतवादी भावना की झलक है और लाली देखन मैं चली दोहे में रहस्यवाद की अभिव्यक्ति की प्रधानता है जिन्हें वर्माजी अपने विचार के समर्थन के लिए प्रस्तुत करते हैं ।

---

1. आधुनिक कवि-3 - मेरा दृष्टिकोण - पृ: 9.
2. वही - पृ: 19.
3. वही - पृ: 10.

रहस्यवाद में प्रेम की प्रधानता है । इसमें वैदिक दर्शन के समान विवेक और ज्ञान का कोई स्थान नहीं है । वर्माजी के मतानुसार अनुभूति केलिए ज्ञान और विवेक बाधक तत्व हैं क्योंकि प्रेम का प्रादुर्भाव विवेक में नहीं है उसकी उद्भावना भाव में है । इस प्रकार देखें तो रहस्यवाद के सन्दर्भ में अलौकिक प्रेम की अभिव्यक्ति उनके काव्य की विशेषता है । यह रहस्यवाद वस्तुतः छायावाद की ही एक प्रवृत्ति है जिसमें प्रेम और करुणा की महत्ता है । इसलिए वैदिक साहित्य के "शुद्ध रहस्यवाद" से वर्माजी के काव्य में परिलक्षित रहस्यवाद के स्वरूप में स्पष्ट अन्तर है ।

विश्वात्मा के बिछुडन से आत्मा में करुणा का उदय होता है । वर्माजी के अनुसार "प्रेम और करुणा में सहोदर संबन्ध है ।"[1] करुणा से प्रेम का सौन्दर्य निखर उठता है ।

वर्माजी के अनुसार रहस्यवाद में तीन तत्व हैं - आत्मा में आध्यात्मिक अनुभूति की क्षमता, आत्मा और परमात्मा में ऐक्य, आत्मसमर्पण से ओतप्रोत प्रेम भावना । रहस्यवादी कविता में इन तीनों तत्वों के सम्मिलित प्रभाव से एक आनन्दानुभूति जन्म लेती है ।

भावना के संघर्ष से कविता उत्पन्न होती है । दुःख में प्राणों का अधिक स्पन्दन होता है और कविता अधिक अनुभूतिपूर्ण लगती है । इसलिए कविता में सुख की अपेक्षा दुःख को प्रमुख स्थान मिला है । वास्तव में दुःख कविता की बडी प्रेरक शक्ति है, उसी में जीवन का विवेचन है ।

छन्द के संबन्ध में वर्माजी के विचार ध्यातव्य है । मुक्तछन्द की उद्घोषणा करनेवाले आधुनिक कवियों के लिए छन्द का समर्थन करनेवाले कवि के तर्क कहीं अधिक सार्थक है । आधुनिक कवियों की मान्यता यह है कि छन्द तो कविता केलिए बंधन है । छन्द मुक्त कविता में भावना अधिक स्वतन्त्र होती है । लेकिन वर्माजी के

---

1. आधुनिक कवि-3 - "मेरा दृष्टिकोण" - पृ: 17.

मत में "कविता की विशेषता तो इसी में है कि वह नियमों के अन्तर्गत रहती हुई भी उनसे परे हो जाती है । फूल पंखुडियों में सीमित रहते हुए भी अपनी सुगन्धि में असीम है, अपने नियमों से ही कविता स्वतंत्रता की परिधि तक पहुँचती है । उसकी स्वतन्त्रता में उसके नियम ही सहायक है । यदि कविता नियम रहित हो जाय तो वह अपनी उच्छृड्.खलता में सौन्दर्य का ही विनाश करती है और बिना सौन्दर्य के स्वतंत्रता केवल विशृड्.खलता में परिवर्तित होगी ।"[1]

वर्माजी कविता में उसके भावात्मक और रूपकात्मक दोनों प्रकार के सौन्दर्य के समर्थक हैं । उनकी कविताओं में जिस निराशा की भावना है वह रहस्यवाद से प्रभावित है । वर्माजी ने स्वयं यह स्वीकार किया है - "मैं रहस्यवाद की निराशा का पोषक हूँ, भौतिकवाद की निराशा का नहीं ।"[2] इस भाव की अभिव्यक्ति उनकी रचनाओं में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है ।

गजरे तारों वाले

सन् 1966 ई. में "गजरे तारों वाले" नामक काव्य संग्रह का प्रकाशन हुआ जिसमें वर्माजी की समस्त छायावादी कविताओं को संकलित किया गया है । इसके अन्तर्गत "अंजलि" "रूपराशि", "निशीथ", "चित्ररेखा", "चन्द्रकिरण", "आकाश गंगा" आदि काव्य संग्रहों को एक साथ आबद्ध किया है । ये काव्य संग्रह उनके काव्य विकास की रूपरेखा है जिसकी ओर संकेत करते हुए आरंभ में वर्माजी ने इस प्रकार अपना मत प्रकट किया है - "वीणापाणी की मानस-प्रतिभा के समक्ष जब अंजलि सजाई गई तब रूप-राशि साकार हो उठी । दर्शन-शास्त्र ने जिसे आत्मा की अंधकारमयी रजनी कहा है, वह निशीथ में उभर कर मानस पर छा गई । मन न जाने कितने चित्र, चित्र-रेखा में खींचता रहा, तभी चन्द्र-किरण के दर्शन हुए जो क्रमशः आकाश-गंगा में परिणत हो गई । यही

---

1. आधुनिक कवि-3 - "मेरा दृष्टिकोण" - पृ: 19.
2. वही - पृ: 20.

मेरे काव्य के विकास की रूप-रेखा है ।"[1] वर्माजी का यह कथन उनकी काव्य-साधना के चरण निर्धारित करने में सहायक है ।

कृत्तिका

सन् 1966 ई. में ही "कृत्तिका" नामक काव्य-संग्रह का प्रकाशन हुआ । इसमें वर्माजी की प्रारंभिक रचनाओं को संग्रहीत किया गया है । इसमें वर्माजी की राष्ट्रीयता और समाज सुधार संबन्धी भावनाओं की अभिव्यक्ति हुई है ।

उत्तरायण

सन् 1972 ई॰ में वर्माजी का दूसरा महाकाव्य "उत्तरायण" का प्रकाशन हुआ । यह महाकाव्य वर्माजी की प्रौढ़ प्रतिभा, गहन अध्ययन शील प्रवृत्ति और रामचन्द्र जी के चरित्र पर उनकी अनन्य आस्था का परिचायक है । "उत्तरायण" के संबन्ध में सुमित्रानन्दन पन्तजी ने जो प्रशंसा की वह महत्वपूर्ण है - "डॉ. रामकुमार वर्मा ने गम्भीर अध्ययन, मनन तथा तत्वालोचन के उपरान्त निर्भ्रान्त अन्तर्दृष्टि प्राप्त कर वाल्मीकि रामायण में दूध-पानी की तरह घुले-मिले सीता-परित्याग के अनिष्टकर क्षेपक का रहस्योद्घाटन तथा निराकरण किया है और उसके ऐतिहासिक कारणों पर भी प्रकाश डाला है । "उत्तरायण" को पढ़ने पर सैकड़ों करोड़ों राम-भक्तों एवं ईश्वर पर आस्था रखनेवाले आस्तिकों के मन से युगों से व्याप्त संदिग्ध व्यथा का कुहासा सदैव के लिए छिन्न भिन्न हो जाएगा एवं श्रीराम-सीता का महिमामय चरित्र अपनी अक्षय आलोक-रेखाओं में उद्भासित हो उठेगा ।"[2] प्रशंसा के रूप में ही सही वर्माजी के काव्य-स्रोत को समझने में यह उद्धरण बहुत ही उपयुक्त है ।

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - "संकेत" से ।
2. उत्तरायण - "दो शब्द" - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 7.

इस महाकाव्य के "आमुख" के प्रारंभ में वर्माजी ने विषय का स्पष्टीकरण किया है - "उत्तरायण तटस्थ रूप से मेरी चिन्ता धारा की ऐसी दिशा है जिसमें राम-राज्याभिषेक के बाद सीता-वनवास का प्रसंग सत्य सम्मत नहीं है । शताब्दियों से वाल्मीकि रामायण के उत्तरकांड में भगवती सीता पर आरोपित यह लांछन शल्य की भाँति कसकता रहा है ।"[1] सीता पर आरोपित इस कलंक को दूर करना ही उनका लक्ष्य था । महर्षि वाल्मीकि ने छठे काण्ड के अन्त में रामाभिषेक और रामराज्य के बाद इस ग्रंथ की फलश्रुति लिखी है तब इस शुभांत कथा के बाद शेष कथा लिखने की क्या आवश्यकता है । इस प्रक्षिप्त कथा के संबन्ध में वर्माजी ने अपना मत इस प्रकार स्पष्ट किया है - "ऐतिहासिक सन्दर्भों से यही ज्ञात होता है कि वाल्मीकि रामायण के मूल पाठ में जो सन्दर्भ जोडे गये हैं वे साम्प्रदायिक हैं । बौद्ध और जैन लेखकों और कवियों ने अपने धर्मों की श्रेष्ठता प्रतिपादित करने के लिए वैदिक धर्म के महान् चरित-नायक राम और उनकी पत्नी सीता को गर्हित करने की चेष्टा की है । महर्षि वाल्मीकि-रचित मूल रामायण में सीता-त्याग का प्रसंग नहीं है । इसके अतिरिक्त महाभारत, हरिवंश-पुराण, वायुपुराण, विष्णु पुराण और नृसिंह पुराण में भी इस प्रसंग का उल्लेख नहीं किया गया है ।"[2] अतः यह स्पष्ट हो जाता है कि वैदिक दर्शन की प्रगति देखकर बौद्ध और जैन मतावलम्बियों ने इस पर आघात पहुँचाने के लिए इस प्रसंग को मूल वाल्मीकि रामायण में जोडा है । यह ऐतिहासिक तथ्य है कि ईसा पूर्व की पहली से ईसा की तीसरी शती तक वैदिक, बौद्ध और जैन धर्मों में बहुत संघर्ष चलता रहा और "वे परस्पर की प्रतिद्वन्द्विता में अपने धर्म को श्रेष्ठ बतलाकर अन्य धर्मों को हीन सिद्ध करने के आन्दोलनों में लगे हुए थे । अतः मूल वाल्मीकि रामायण में जो प्रक्षेप जोडे गये हैं वे इन्हीं धार्मिक आन्दोलनों के फलस्वरूप थे जिनमें वैदिक धर्म को हीन बतलाने की चेष्टा की गई ।"[3] इस प्रतिद्वन्द्विता के कारण उत्तरकांड में सीता परित्याग की कथा जोड दी गई है । सीता परित्याग के तीन कारण कहे गये हैं - लोकापवाद, रजक की

---

1. उत्तरायण - "आमुख" - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 9.
2. वही - पृ: 14.
3. वही ।

कथा और सीता द्वारा रावण के चित्र का रेखांकन । रजक की कथा गुणाढ्य की "बृहत्कथा" और सोमदेव की "कथा सरित सागर" में कल्पित की गई है जो बौद्धकवियों का षड्यन्त्र था । सीता द्वारा रावण के चित्र के रेखांकन के संबन्ध में वर्माजी का मत है - "सीता द्वारा रावण के चित्र के रेखांकन करने की कथा बहुत बाद में कल्पित की गई । हेमचन्द्र का जैन रामायण, कृत्तिवास का"बंग्ला रामायण," "कश्मीरी रामायण", "गुजराती रामायण आदि अनेक रामायणों में इस प्रसंग का उल्लेख किया गया है । अनेक लोकगीत भी इस करुण प्रसंग को लेकर बनाये गये हैं । सिंहल, कम्बोदिया और स्याम में भी जो राम कथाएँ प्रचलित हैं, उनमें रावण के चित्र के रेखांकन का वर्णन है । मेरा अनुमान है कि जिन जिन प्रान्तों अथवा देशों में बौद्ध धर्म का प्रचार हुआ है, वहाँ वहाँ सीता-परित्याग का प्रसंग लोकापवाद और सीता द्वारा रावण के चित्र के रेखांकन को लेकर कथा में जोड दिया गया है ।"[1]

इस महाकाव्य में वर्माजी ने तुलसीदास को इस काव्य का नायक बनाया है । वर्माजी का उद्देश्य है राम के चरित्र पर लगाये कलंक को दूर करना । इसका समाधान तुलसी के स्वप्न में दिखाई पडनेवाले वाल्मीकि का कथन करता है ।

इस महाकाव्य को वर्माजी ने नौ सर्गों में आबद्ध किया है यथा-स्मृति, त्याग, प्रेरणा, उद्धार, प्रवास, काव्यरचना {पूर्वार्द्ध}, काव्यरचना {उत्तरार्द्ध} अन्तर्द्वन्द्व स्वप्न दर्शन । "स्मृति" सर्ग में तुलसी के मन में उठनेवाली सुख दुःख पूर्ण स्मृतियों - बाल्यावस्था, शिक्षा, विवाह, गृहत्याग - पर प्रकाश डाला गया है । "त्याग" में विवाह जीवन के कुछ प्रसंग और गार्हस्थ्य जीवन छोडने के निश्चय का चित्रण है । "प्रेरणा" सर्ग का वर्ण्य विषय है मोह और शोक को त्याग कर सेवक-सेव्य भाव से भगवान राम की आराधना करने का संकल्प और रामचरित लिखने की प्रेरणा । "उद्धार" सर्ग में तुलसी की प्रयाग यात्रा का वर्णन है । "प्रवास" सर्ग में प्रयाग, काशी, चित्रकूट,

---

1. उत्तरायण - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 17-18.

बद्रीनाथ, रामेश्वर की यात्रा और अन्त में अयोध्या आगमन का वर्णन प्रस्तुत किया गया है । काव्य रचना "पूर्वार्द्ध" में रामचरित मानस की रचना संबन्धी परिचय है । इसमें श्रीराम के विवाह तक की कथा वर्णित है । काव्यरचना {उत्तरार्द्ध} में रावण-वध, श्रीराम का राज्याभिषेक आदि पर प्रकाश डाला है । सीता वनवास के विषय में तुलसी की शंका, तर्क-वितर्क, मत भ्रान्ति और व्याकुलता का वर्णन है "अन्तर्द्वन्द्व" सर्ग में । अन्तिम सर्ग "स्वप्न दर्शन" में स्वप्न में वाल्मीकि का दर्शन और सीता परित्याग के संबन्ध में उनके समाधान पर प्रकाश डाला गया है ।

सन्त रैदास

वर्माजी ने सन् 1978 ई. में "सन्त रैदास" नामक खण्डकाव्य की रचना की । गाँधीवादी विचारधारा से प्रभावित होकर ही उन्होंने इस खण्डकाव्य की भी रचना की है । वर्माजी जाति - पाँति के विरोधी थे और समाज में निम्नवर्ग को भी समान महत्व देने का आह्वान देते हैं । वर्माजी मानवतावाद के पोषक थे । इसमें वर्माजी ने रैदासजी की भक्ति भावना पर प्रकाश डाला है जिनका जन्म निम्न जाति में हुआ था । वे अनपढ़ होने पर भी भक्ति सिद्धान्तों को सरल और सहज भाषा में अभिव्यक्त करने में सक्षम थे । वर्माजी ने सात सर्गों में इस खण्डकाव्य को आबद्ध किया है

वर्माजी ने मंगलाचरण का पालन किया है जिसमें उन्होंने श्रीराम और सरस्वती की वन्दना की है जिनकी कृपा से रैदासजी भक्तों की श्रेणी में प्रथम स्थान के अधिकारी हो गये हैं ।

"प्रस्तावना" के अन्तर्गत वर्माजी ने समाज में मानव की समानता पर जोर देते हुए रैदासजी की भक्ति भावना की प्रशंसा की है । इसमें वर्माजी ने जाति भेद के विरुद्ध अपना विचार भी प्रकट किया है ।

प्रस्तुत रचना का कथानक सात सर्गों में आबद्ध है । प्रथम सर्ग में रैदासजी का जन्म और उनके नामकरण पर प्रकाश डाला गया है । द्वितीय सर्ग में रैदास की भक्ति भावना का वर्णन है । रैदासजी के पिता उनकी भक्ति के विरोधी थे और उन्हें भक्ति मार्ग छोड़कर कर्तव्य करने की प्रेरणा देते हैं । प्रभु भक्ति में लीन होकर अपना काम करने वाले रैदासजी का जीवन, उनकी शादी आदि पर तीसरे सर्ग में प्रकाश डाला गया है । चौथे सर्ग की कथा इस प्रकार है - रैदासजी की कुटिया में सन्त प्रेमानन्द का आगमन होता है और रैदासजी की भक्ति और प्रेम भाव देखकर वे प्रभावित हो जाते हैं और उसकी निर्धनता देखकर उसे पारसपत्थर देते हैं । लेकिन रैदासजी उसे माया का द्वार समझकर उसे स्वीकार करने में हिचकता है और अन्त में विवश होकर वे यह स्वीकार करते हैं । लेकिन कभी भी उसका उपयोग न करते । पाँचवें सर्ग में रैदासजी का काशी जाने और स्वामी रामानन्द का शिष्यत्व स्वीकार करने की कथा है । छठे सर्ग में चितौड की झाली रानी काशी पहुँचती हैं और रैदासजी की भक्ति और ज्ञान से प्रभावित होकर उन्हें शिष्यत्व प्रदान करने की प्रार्थना करती है और रैदास रानी के साथ चितौड जाते हैं और कुछ दिन के बाद अपने घर लौटते हैं । सातवें सर्ग में रामभक्ति में लीन होकर रहनेवाले रैदासजी और लोना के जीवन की कथा है । उपसंहार में वर्माजी ने रैदासजी की भक्ति भावना की प्रशंसा की है और मानव की समानता पर ज़ोर दिया है ।

ओ अहल्या

सन् 1985 ई. में वर्माजी ने अपना तीसरा महाकाव्य "ओ अहल्या" की रचना की । मुनिपत्नियों में एकमात्र अहल्या के सतीत्व में जो अनुचित प्रसंग जुड गया है उसका सही पहचान करना उनका लक्ष्य था । "प्रस्तावना" भाग में वर्माजी ने अपना लक्ष्य इस प्रकार व्यक्त किया है - "आज मैं जिस कथा का आख्यान कर रहा हूँ उसके सत्य से सबको सही पहिचान रहे ।"[1] वर्माजी ने इस महाकाव्य की कथा में कुछ परिवर्तन किया है । 'रामायण' में इन्द्र और अहल्या की भोग वृत्ति की कथा है लेकिन वर्माजी ने

---

1. ओ अहल्या - "प्रस्तावना" - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 10.

उस प्रसंग के स्थान पर केवल इन्द्र द्वारा अहल्या के तन स्पर्श की घटना का वर्णन किया है । इन्द्र के स्पर्श के कारण अहल्या स्वयं अपने शरीर का, जड और पाषाण जैसा अनुभव करती है, गौतम उसे तपस्या द्वारा चित्त शुद्धि का मार्ग सुझाते हैं ।

वर्माजी ने इस महाकाव्य को बारह सर्गों में आबद्ध किया है - प्रजापति, सृष्टि, अवतरण, शृंगार, महर्षि गौतम, आगमन, निर्णय, परिणय, तप, इन्द्र, अहल्या और उद्धार । इसके आरंभ में मंगलाचरण और प्रस्तावना है । "प्रजापति" सर्ग में यक्ष द्वारा अपने बल पर घमण्ड करने वाले अग्नि, वायु और इन्द्र की परीक्षा करने की कथा है । "सृष्टि" में एक सुन्दर नारी की सृष्टि करने की प्रजापति की इच्छा पर प्रकाश डाला गया है । "अवतरण" में अहल्य की सृष्टि के संबन्ध में वर्णन किया है । "शृंगार" सर्ग में माया को अहल्या की शृंगार करने का आदेश देने और माया द्वारा अहल्या का रूप वर्णन सुनकर इन्द्र प्रजापति से अहल्या की याचना करने और असफल होकर इन्द्र के वापस लौटने का चित्रण है । "महर्षि गौतम" में गौतम के आश्रम में अहल्या को सौंपकर तपस्या के लिए जाने का वर्णन है । "आगमन" में तपस्या के बाद प्रजापति के आगमन का चित्र प्रस्तुत है । "निर्णय" में अहल्या की शादी करने का निर्णय प्रजापति करते हैं । "परिणय" में अहल्या और गौतम की शादी का वर्णन है । `तप' में यज्ञ और त्याग करके उनके सुख पूर्वक जीवन यापन का वर्णन है और पुत्र शतानन्द का जन्म होता है । "इन्द्र" में अपनी अतृप्त इच्छा की पूर्ति केलिए गौतम के आश्रम में इन्द्र का आगमन और ब्रह्मवेला की भ्रांति में स्नान करने के लिए गौतम के प्रस्थान का चित्रण है । "अहल्या" में गौतम के छद्मवेश धारण करके इन्द्र का प्रवेश होता है और अहल्या इन्द्र को पहचानती है । कामार्त इन्द्र अहल्या का स्पर्श करता है । गौतम का वापस आना और इन्द्र को शाप देना जैसी घटनाओं का वर्णन है । गौतम उसे तप द्वारा उनकी आत्मग्लानि दूर करने का मार्ग भी सुझाते हैं । "उद्धार" में श्रीराम का आगमन और अहल्या की तपस्या की सफलता और गौतम के साथ अहल्या का प्रस्थान आदि वर्णित है ।

बालि-वध

सन् 1989 ई. में वर्माजी ने प्रस्तुत रचना का चयन किया । इस रचना को वर्माजी ने "समस्या मूलक काव्यांग" कहा है । पौराणिक कथानक के आधार पर ही उन्होंने इस काव्य की रचना की है । श्रीरामचन्द्रजी ने विटप की ओट से बालि का वध किया जो उसके चरित्र पर लगे कलंक है । वर्माजी ने इस रचना द्वारा इस काले धब्बे को पोंछने का प्रयास किया है । श्रीरामचन्द्र ने विटप-ओट से क्यों बालि का वध किया इस प्रश्न का समाधान ही वर्माजी ने इस रचना द्वारा प्रस्तुत किया है । वर्माजी ने इसके प्रारंभ में दिये "इस रचना के संबन्ध में "शीर्षक के अन्तर्गत अपने लक्ष्य की ओर संकेत किया है -"शक्तिशाली श्रीराम ने विटप ओट से बालि-वध क्यों किया जिस कारण उन्हें "व्याध" कह कर लांछित किया गया । श्रीराम का विटप ओट से बालि को मारने का क्या औचित्य था, इसके स्पष्टीकरण के लिए अनेक विद्वानों, राम-कथा के प्रेमियों और मित्रों का आग्रह था । सारी परिस्थितियों पर विचार करने के उपरान्त मैं इसी निष्कर्ष पर पहुँचा कि श्रीराम का वानर बालि को विटप ओट से मारना ही एक मात्र विकल्प था । इसी दृष्टि से मैं ने इस काव्यांग की रचना की ।"[1] वानरों की शंका को दूर करने केलिए श्रीरामचन्द्र जी ने जो उत्तर दिया यही इस काव्यांग का कथानक है । रामचन्द्रजी ने "विटप ओट" से बालि वध करने के तीन कारण बताये हैं एक कारण है वनवास की अवधि पूरी होनेवाली है । इसी वक्त सीतापहरण हो गया । वह अकेले सीता की खोज न कर सकता इसलिए उन्होंने वानरों की सहायता से लंका में सीता की खोज करने का निश्चय किया । दूसरा कारण है यदि बालि से युद्ध करें तो जीतने के लिए अधिक समय लग जायेंगे क्योंकि इन्द्र दत्त माला से वह शक्तिशाली ही बना रहेगा । तीसरा कारण है भरत ने चित्रकूट में यही कहा था कि वनवास की अवधि बीत जाने पर वे {श्रीराम} नहीं आयें तो वह आत्मदाह करेगा । इन तीनों कारणों से ही श्रीरामचन्द्रजी ने "विटप ओट" से बालि वध किया ।

---

1. बालि वध - "इस रचना के संबन्ध में" - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृः 8.

निष्कर्ष

डॉ. वर्मा के व्यक्तित्व का प्रतिफलन उनकी रचनाओं में यत्र तत्र मिलते हैं । राष्ट्रीयता के प्रति उनके मन में जो झुकाव है वह उनकी स्फुट रचनाओं, गीतिसंग्रह और खण्डकाव्यों में परिलक्षित होता है । श्रीरामचन्द्र के प्रति उनके मन में जो आस्था है इसका परिचायक है महाकाव्य "उत्तरायण" और समस्यामूलक काव्यांग 'बालि वध'। वर्माजी के मानवतावादी और आशावादी व्यक्तित्व का प्रतिफलन उनकी रचनाओं में उपलब्ध है । गायक वर्माजी के संगीत ज्ञान का परिचायक है उनके गीतिकाव्य संग्रह । अभिनेता होने के कारण उनके नाटककार व्यक्तित्व का प्रतिफलन प्रबन्ध काव्यों में स्थान-स्थान पर दृष्टिगत होता है ।

अध्याय - दो

रामकुमार वर्मा के महाकाव्यों का विश्लेषणात्मक अध्ययन

यद्यपि विभिन्न विद्वानों ने महाकाव्य के लक्षण और स्वरूप निर्धारित करने का प्रयास किया है तो भी आचार्य विश्वनाथ[1] द्वारा प्रस्तुत लक्षण प्रायः सर्वमान्य हैं । हम भी उसी के आधार पर आगे रामकुमार वर्मा के महाकाव्यों का क्रमशः विश्लेषण करेंगे ।

---

1. सर्गबन्धो महाकाव्यं तत्रैको नायकः सुरः ।।
सद्वंशः क्षत्रियो वापि धीरोदात्तगुणान्वितः ।
एकवंश भवा भूपाः कुलजा बहवोऽपि वा ।।
शृङ्गारवीरशान्तानामेकोऽङ्गी रस इष्यते ।
अङ्गानि सर्वेऽपि रसाः सर्वे नाटकसन्धयः ।।
इतिहासोद्भवं वृत्तमन्यद्वा सज्जनाश्रयम् ।
चत्वारस्तस्य वर्गाः स्युस्तेष्वेकं च फलं भवेत् ।।
आदौ नमस्क्रियाशीर्वा वस्तुनिर्देश एव वा ।
क्वचिन्निन्दा खलादीनां सतां च गुणकीर्तनम् ।।
एकवृत्तमयैः पद्यैरवसानेऽन्यवृत्तकैः ।
नातिस्वल्पा नातिदीर्घाः सर्गा अष्टाधिका इह ।।
नानावृत्तमयः क्वापि सर्ग कश्चन् दृश्यते ।
सर्गान्ते भाविसर्गस्य कथायाः सूचनं भवेत् ।।
संध्यासूर्येन्दुरजनीप्रदोषध्वान्तवासराः ।
प्रातर्मध्याह्नमृगयाशैलर्तुवनसागराः ।।

एकलव्य का महाकाव्यत्व

महाकाव्य में युग जीवन के संघर्ष का चित्रण होता है । तत्कालीन समाज में जातिप्रथा प्रचलित थी । इसके विरुद्ध गाँधीजी के नेतृत्व में अछूतोद्धार आन्दोलन का प्रचलन हुआ । वर्माजी ने गाँधीजी के इस अछूतोद्धार आन्दोलन से प्रभावित होकर "एकलव्य" की रचना की ।

कथानक

कथानक महाकाव्य की रीढ़ है । इसलिए कथानक सरस और लोकप्रसिद्ध होना चाहिए । आधुनिक महाकाव्यों का कथानक पौराणिक या ऐतिहासिक होता है । "एकलव्य" का कथानक पौराणिक है । "महाभारत" में वर्णित एकलव्य की कथा को वर्माजी ने अपने महाकाव्य का आधार बनाया है । एकलव्य आदर्श शिष्य का प्रतीक है । इसके कथानक में वर्माजी ने अपनी मौलिक उद्भावना द्वारा कुछ परिवर्द्धन और परिवर्तन किये हैं जो उनकी अपनी विशेषता है ।

वर्माजी ने एकलव्य के मुख से आचार्य द्रोण द्वारा सींक से वीटिका निकालने की कथा का वर्णन करके इसका शुभारंभ किया है जिसे वह अपने मित्र नागदन्त को बताया था । एकलव्य लौह -खण्ड के क्रय करने के लिए राजधानी गया था, लौटते समय उसने गुरु द्रोण को देखा जो मंत्र शक्ति द्वारा सींक से वीटिका निकालते हैं । एकलव्य पर गुरु द्रोण का अमोघ प्रभाव पडा और वह स्वयं द्रोण को गुरु मानकर लौटता है -

---

1. संभोगविप्रलम्भौ च मुनिस्वर्गपुराध्वराः ।
रणप्रयाणोपयममन्त्रपुत्रोदयादयः ।।
वर्णनीया यथायोगं साङ्गोपाङ्गा अमी इह ।
कवेर्वृत्तस्य वा नाम्ना नायकस्येतरस्य वा ।।
नामास्य सर्गोपादेयकथया सर्गनाम तु ।

हिन्दी साहित्य दर्पण - षष्ठपरिच्छेद पृ: 549-551.

"चाहता मैं शिक्षा धनुर्वेद की हूँ तुमसे,
प्रभु ! मुझे दिव्य मंत्र दे दो, गुरु मेरे हो ।"[1]

राजकुमारों के साथ वे राजमहल की ओर प्रस्थान किये । गुरु द्रोण हस्तिनापुर की राजसभा में अपना परिचय देते हुए उनकी आर्थिक कठिनाई, द्रुपद द्वारा उनका अपमान आदि का वर्णन करते हैं । भीष्म द्रोणाचार्य को कुमारों के गुरु के रूप में नियुक्त कर लेते हैं । द्रोण राजकुमारों को विविध अस्त्र-शस्त्र प्रयोग में समर्थ बना देते हैं । उन्होंने कुमारों को लक्ष्य-वेध केलिए एकाग्रचित्त होने का उपदेश दिया । अर्जुन को अहंकार और द्वेष पर विजय प्राप्त कर युद्ध में प्रवीण होने का आदेश भी देते हैं । द्रोण कौरव और पाण्डवों को अस्त्र-शस्त्र प्रयोग में निपुण बना देते हैं । आचार्य द्रोण की शिक्षादान की कथा सारे देश में फैल जाती है । इसके फलस्वरूप राजवंशी और अन्यजाति के कुमार भी शिक्षा ग्रहण करने के लिए भिन्न-भिन्न वेश में आने लगे । एकलव्य पर आचार्य द्रोण का प्रभाव इतना पडता है कि पाषाण में उनकी मूर्ति अंकित करता है, नागदंत, माँ और पिता से भी द्रोण द्वारा सींक से वीटिका निकालने की घटना का वर्णन करता है । वह यह प्रण भी करता है कि गुरु द्रोण से बाण विद्या सीखेगा । वे पिता के साथ पाण्डव और कौरव कुमारों के शस्त्र प्रदर्शन देखने जाते हैं । पाण्डव और कौरव कुमारों के अस्त्र शिक्षा के सामाजिक प्रदर्शन होते हैं । युधिष्ठिर ने धनुष के प्रयोग में, भीम और सुयोधन ने गदा प्रयोग में तथा अर्जुन ने धनुष प्रयोग में अपनी अपनी निपुणता प्रकट की । एकलव्य आचार्य द्रोण के दिव्य चरणों की ओर देखकर वहाँ खडा रहा । एकलव्य द्रोण के पास पहुँचता है और अपना परिचय देते हुए कहता है - "जय ! गुरुदेव जय । एकलव्य दास हूँ ।" लेकिन द्रोण यह कहते हैं कि एकलव्य नाम का मेरा कोई शिष्य नहीं है । बाद में वह अपना परिचय देता है और कहता है कि जिस दिन आपने कूप से सींक बाण से वीटिका निकाली उस दिन से मैं आपका शिष्य हूँ । ज्ञान प्राप्ति के इच्छुक एकलव्य को देखकर वे बहुत प्रसन्न होते हैं । लेकिन वे इस प्रकार सोचते हैं कि

---

1. एकलव्य - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 24.

वे अर्जुन को इसलिए अस्त्र-शस्त्र कौशल में अजेय बनाना चाहते हैं जिससे वे द्रुपद से शीघ्र ही प्रतिशोध ले सकेंगे । लेकिन वे कैसे एकलव्य को रोक सकें जिसमें सफलता प्रच्छन्न है । द्रोण एकलव्य को शिष्य के रूप में नहीं स्वीकार करते हैं और वे अपनी असमर्थता इस प्रकार प्रकट करते हैं -

"किन्तु मेरे शिक्षण के वे ही अधिकारी हैं,
जो कि भूमि-पुत्र नहीं, किन्तु भूमि-पति हैं ।"[1]

इस सर्ग में वर्माजी ने उस युगीन समस्या की ओर इशारा किया है कि शिक्षा का सूत्र गुरु के हाथ में नहीं है । राजनीति ने गुरु को अपना अधीन बनाया है । द्रोण अपनी असमर्थता प्रकट करके कहते हैं -

"जाओ, हे निषादपुत्र ! तुम हो अस्वीकृत !"[2]

एकलव्य द्रोण को मन ही मन गुरु मानकर लौट जाता है । मित्र गुरु द्रोण द्वारा अस्वीकृत एकलव्य की हँसी उड़ाते हैं । एकलव्य धनुर्वेद की साधना केलिए घोर वन में चला जाता है । उसकी माँ उसके वियोग में तड़पती रहती है । एकलव्य वन पहुँचता है और वह भूमिकण से गुरु की मूर्ति का निर्माण करने का निश्चय करता है । सामाजिक व्यवस्था के प्रति एकलव्य आक्रोश प्रकट करता है किन्तु अपने गुरु द्रोण के प्रति उसके मन में तनिक भी विद्रोह भावना नहीं -

"गुरुकुल है कहाँ, यहाँ तो राजकुल है ।"
हाय, गुरुदेव ! क्या परिस्थिति के जाल ने,
खींचा तुम्हें भूमिपतियों की राजधानी में ।
x x x x x x x x x x
जिसने किया है भेद मानव के पुत्रों में
भूमि पति, भूमि पुत्र वर्ग हो गए हैं दो ।"[3]

---

1. एकलव्य - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 126.
2. वही - पृ: 127.
3. वही - पृ: 177.

उन्हें अपनी माँ की याद आती है । उनका मित्र नागदंत वणिकों के हाथ में सन्देश भेजता है । लेकिन उनके साथ जाने को तैयार नहीं होते । एकलव्य भूमिकण से द्रोण की मूर्ति बनाते हैं और वन्दना करके अपना अभ्यास आरंभ करते हैं । प्रतिदिन की साधना से अभ्यास का विकास हो जाता है और गुरु के संकेत से वे नई बाण विधा सीखने लगे और अद्वितीय धनुर्धर बन जाते हैं । इस सर्ग में वर्माजी ने जाति-प्रथा के विरुद्ध अपना विद्रोह यों प्रकट किया है -

"हम हैं अछूत, तो हमारे अंग-स्पर्श से,
आर्यों के सु-अंग क्या कु-अंग बन जावेंगे'"[1]

वर्माजी ने वर्गहीन समाज की स्थापना और साम्य व्यवस्था का समर्थन किया है । यथा -

"किन्तु शूद्र और ब्राह्मणों में भेद कैसा है'
जबकि संपूर्ण अंग मानवों के सब में'"[2]

आचार्य द्रोण को स्वप्न में एक श्यामल कुमार का दर्शन होते हैं जो निरन्तर अभ्यास द्वारा धनुर्वेद साधना की सिद्धि पा रही है । आश्चर्य की बात यह है कि स्वयं द्रोण ही उन्हें शिक्षा दान देते हैं । द्रोण ऐसा प्रण कर लेते हैं कि वे पार्थ को ऐसा अद्वितीय धनुर्धर बना देंगे जिसकी समानता कोई भी शिष्य न कर सकें । लेकिन उस श्यामल कुमार के सामने पार्थ को हार स्वीकार करना पडेगा जिससे वे अपना प्रण न पूर्ण निभा पायेंगे । इससे उसके मन में संघर्ष उठते हैं और वे अर्जुन को उस कुमार की खोज करने का आदेश देते हैं और वे वारणावत में मृगया हेतु जाते हैं । अर्जुन वन में उस शिष्य की खोज करता रहा । कुमारों को वापस न लौट देखकर गुरु द्रोण भृत्य को कुमारों के लिए भोजन ले जाने का आदेश भी देते हैं । भृत्य के साथ चले श्वान एकलव्य के आश्रम में

---

1. एकलव्य - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 198.
2. वही ।

पहुँचता है जहाँ एकलव्य अपनी साधना में लीन रहते हैं । श्वान एकलव्य को देखकर भौंकता है । एकलव्य श्वान के मुँह में बाण फेंकते हैं । उसने पुनः उसके मुँह में सात बाण छोड दिए । लेकिन उसके मुँह से एक बूँद रक्त भी न निकला । श्वान अर्जुन के पास पहुँचता है । श्वान का अनुगमन करके पाण्डुपुत्र एकलव्य के आश्रम में पहुँचते हैं । एकलव्य के साथ उनका परिचय होता है । इसके बाद राजकुमार वापस लौटते हैं । एकलव्य की धनुर्वेद विद्या देखकर अर्जुन के मन में द्वन्द्व उत्पन्न हो जाते हैं । जो ज्ञान एकलव्य ने गुरुमूर्ति के संकेत से प्राप्त किया, वह अर्जुन स्वयं गुरु के सम्मुख अभ्यास करके भी प्राप्त न कर सका जिससे वह दुःखी हो जाता है । पार्थ, द्रोण को अपनी शपथ की याद दिलाते हैं । यदि वे एकलव्य को शिक्षादान करेंगे तो वे ही अद्वितीय बन जायेंगे । द्रोण अर्जुन को सांत्वना देते हैं और उसके साथ एकलव्य के आश्रम जाने का निश्चय भी करता है । पार्थ के साथ अपने आचार्य को देखकर वे बहुत आनन्दित होते हैं और उनका प्रणाम करते हैं । धनुष संधान से पुष्प वर्षा करके उनका स्वागत करते हैं । द्रोण एकलव्य की प्रशंसा करते हुए कहते हैं तुम आज के अजेय धनुर्धारी हो । यह सुनकर पार्थ द्रोण को प्रण की याद दिलाते हैं । गुरु की प्रण पूर्ति के लिए वे यह प्रण लेते हैं कि वे कभी धनुर्विद्या का प्रयोग न कर पायेंगे । इससे भी पार्थ सन्तुष्ट नहीं होते । अपने गुरु की विवशता देखकर एकलव्य यह निश्चय कर लेता है कि गुरुदक्षिणा के रूप में अपना दक्षिणांगुष्ठ ही समर्पित करेंगे जिससे पार्थ ही अद्वितीय बन जायें । वह स्वयं दक्षिणांगुष्ठ काटकर गुरुदक्षिणा के रूप में गुरु के चरणों में समर्पित कर देता है । कटे हुए अंगुष्ठ देखकर आचार्य द्रोण यों कराह करने लगे कि -

"मेरी प्रण पूर्ति में विनष्ट निज साधना
एक क्षण में ही कर डाली, शिष्य ! धन्य हो ।"[1]

गुरु द्रोण ने एकलव्य का आलिंगन किया और उनकी प्रशंसा की -

---

1. एकलव्य - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 296.

"हा, तुम्हारी गुरुता में गुरु हुआ लघु है ।"[1]

"गुरु हुआ लघु" जैसे श्रेष्ठ शब्दों का प्रयोग अपने योग्य शिष्य के लिए कोई सच्चा गुरु ही कर सकता है । एकलव्य की गुरु भक्ति और महादान के सम्मुख पार्थ नतमस्तक हो जाते हैं और वे एकलव्य से क्षमा भी माँगते हैं । इतने में एकलव्य की माँ वहाँ पहुँचती है और पुत्र के कटे हुए अंगुष्ठ देखकर अत्यन्त दुःखी हो जाती है और द्रोण से यही प्रार्थना करती है कि द्रोण उनकी आँखें अपनी सेवा में लीजिए यदि शिष्य-माता से दक्षिणा लेने का विधान है। जिससे वे अपने पुत्र का खण्डित अंगुष्ठ न देख सकें । एकलव्य आचार्य द्रोण को वन-खंड की सीमा तक पहुँचाते हैं ।

नाटक की संधियों का प्रयोग

"एकलव्य" में नाटक की पंच संधियों - मुख, प्रतिमुख, गर्भ, विमर्श, निर्वहण - का पालन हुआ है । प्रारंभिक सर्गों में मुख सन्धि है । "आत्म निवेदन" और 'साधना' सर्गों में प्रतिमुख संधि है । इन दोनों सर्गों में एकलव्य अपने लक्ष्य की ओर आगे बढ़ते हैं और द्रोण को गुरु के रूप में स्वीकार करते हैं । "साधना" सर्ग में गर्भ संधि है । इसमें कथानक की चरम अवस्था - एकलव्य की धनुर्वेद ज्ञान की प्राप्ति है । "लाघव" सर्ग में विमर्श संधि है । इस सर्ग में पार्थ के साथ एकलव्य की भेंट होती है । "दक्षिणा" नामक अन्तिम सर्ग में निर्वहण संधि है । एकलव्य को अपने प्रयत्न का फल मिलता है । द्रोण उसे अद्वितीय धनुर्धर स्वीकार करते हैं और कथानक की समाप्ति भी होती है ।

सर्गबद्धता

भारतीय आचार्यों के अनुसार महाकाव्य सर्गबद्ध होना चाहिए । इसमें कम से कम आठ सर्ग होना चाहिए । वर्माजी ने "एकलव्य" महाकाव्य में इन नियमों का पालन किया है । प्रस्तुत महाकाव्य 14 सर्गों में आबद्ध है जैसे क्रमशः दर्शन, परिचय,

---

1. एकलव्य - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 296.

अभ्यास, प्रेरणा, प्रदर्शन, आत्म-निवेदन, धारणा, ममता, संकल्प, साधना, स्वप्न, लाघव, द्वन्द्व और दक्षिणा ।

वर्माजी ने अमित्राक्षर छन्द में इस महाकाव्य की रचना की । स्वयं वर्माजी ने आधुनिक कवि - 3 - में इसकी ओर संकेत किया है ।[1]

सर्गान्त में भावि कथा की पूर्व सूचना होनी चाहिए । प्रस्तुत महाकाव्य के द्वितीय, तृतीय, पंचम, षष्ठ, नवम, द्वादश और त्रयोदश सर्गों में कथा की पूर्व सूचना सर्गान्त में मिलती है और प्रथम, चतुर्थ , सप्तम और एकादश सर्ग में सर्गान्त के कुछ पूर्व ही भावि कथा की सूचना मिलती है । लेकिन नवम सर्ग की पूर्व सूचना आठवें सर्ग में और दशम सर्ग की सूचना नवम सर्ग में नहीं मिलती ।

चरित्रचित्रण

भारतीय आचार्यों के अनुसार महाकाव्य का नायक देवता या उच्च-कुलोद्भव होना चाहिए । लेकिन वर्माजी ने इस नियम का पालन नहीं किया है । उन्होंने निषाद वंश में उत्पन्न एकलव्य को इस महाकाव्य का नायक बनाया है । एकलव्य महाभारत का एक महान् किन्तु उपेक्षित वीर है । वह एक आदर्श गुरु भक्त, व्रती, अद्वितीय धनुर्धर एवं महान् दानी है । एकलव्य ने जिस आदर्श गुरुभक्ति का परिचय दिया उसके आगे सब नतमस्तक हो जाते हैं । वर्माजी व्यक्ति की अपेक्षा उसके शील को महत्व देते हैं । एकलव्य के नायकत्व के संबन्ध में उन्होंने जो मत प्रकट किया है वह द्रष्टव्य है - "एकलव्य ने जिस आचरण का परिचय दिया है, वह किसी उच्चकुल के व्यक्ति के आचरण के लिए भी आदर्श है । वह "अनार्य" नहीं "आर्य" है, क्योंकि उसमें "शील" का प्राधान्य है । यही कारण है कि उसमें महाकाव्य के नायक बनने की क्षमता है, भले ही वह "सुर" अथवा "सद्वंश" में उत्पन्न "क्षत्रिय" नहीं है ।"[2] एकलव्य गुरु की प्रणपूर्ति के लिए अपने

---

1. आधुनिक कवि -3 - पृ: 31.
2. एकलव्य - डॉ. रामकुमार वर्मा - "आमुख" - पृ: 6.

दक्षिणांगुष्ठ को गुरुदक्षिणा के रूप में स्वयं समर्पित कर देते हैं जिससे पार्थ ही अद्वितीय धनुर्धर बन जायें । एकलव्य की आदर्श गुरुभक्ति के सम्मुख पार्थ नत मस्तक हो जाते हैं । यथा -

"क्षमा करो गुरुभक्ति सीखी आज तुम से ।
मैं ने राजवंश की अहम्-भावनाओं से ।
गुरु को था हीन माना । तुमने निषाद हो,
गुरु का महत्व सिखलाया इस विश्व को ।"[1]

इसमें अर्जुन ने संपूर्ण विश्व को गुरु भक्ति के आदर्श विशेषण देकर निषादकुमार एकलव्य की प्रतिष्ठा बढ़ाई है ।

एकलव्य इस महाकाव्य का केन्द्र बिन्दु है । एकलव्य के चरित्र का विकास अनेक रूपों में हुआ है ।

सर्वप्रथम वर्माजी ने ज्ञान प्राप्ति के इच्छुक एकलव्य का चित्रण हमारे सम्मुख प्रस्तुत किया है । आचार्य द्रोण द्वारा सींक से वीटिका निकालने की घटना देखकर वह अत्यन्त प्रभावित हो जाता है । आचार्य द्रोण से धनुर्वेद शिक्षा प्राप्त करने का निश्चय करता है और आचार्य द्रोण को गुरु मानकर घर लौटता है -

"चाहता मैं शिक्षा धनुर्वेद की हूँ तुमसे,
प्रभु ! मुझे दिव्य मंत्र दे दो, गुरु मेरे हो ।"[2]

उन पर आचार्य द्रोण का इतना प्रभाव पड़ता है कि स्वप्न में भी द्रोण का दर्शन होता है । वह आचार्य द्रोण के सम्मुख शिष्य बना लेने की प्रार्थना करता है ।

---

1. एकलव्य - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 297.
2. वही - पृ: 24.

द्रोण उन्हें यह समझाते हैं कि धनुर्वेद साधना तो आसान नहीं है जिसके लिए दिन-रात की तपस्या आवश्यक है । यह सुनकर वह अपने लक्ष्य से पीछे नहीं मुड़ता । वह आचार्य द्रोण से यह निवेदन करता है -

"रात बने लक्ष्य और दिन मेरा बाण हो ।
जीवन के यज्ञ पर अग्नि का मुकुट हो ।"[1]

इससे एकलव्य की शिक्षा पाने की अदम्य इच्छा का परिचय मिलता है ।

"देव ! धनुर्वेद को मैं दूँगा अर्घ्य स्वेद का,
दृष्टि एकमात्र लक्ष्य को ही पहचानेगी ।
x x x x x x x x x x
यदि लक्ष्य-वेध में न सफल बनूँ मैं तो,
काट के समर्पित करूँगा करांगुष्ठ मैं ।"[2]

द्रोण द्वारा अस्वीकृत हो जाने पर वह वन चलकर निरन्तर अभ्यास से धनुर्विद्या सीख लेता है ।

आचार्य द्रोण से हुई पहली भेंट से ही वह निश्चय करता है कि वह आचार्य द्रोण का शिष्य बनेगा। माता-पिता से भी वह अपना आग्रह प्रकट करता है और वह आचार्य के सम्मुख प्रार्थना करता है । आचार्य द्रोण द्वारा तिरस्कृत हो जाने पर भी वह अपने निश्चय में अड़िग रहा -

"आप गुरु मेरे हैं, रहेंगे सब काल में,
हानि क्या ! प्रत्यक्ष नहीं, मेरे मन में तो है !"[3]

---

1. एकलव्य - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 119.
2. वही - पृ: 120.
3. वही - पृ: 127.

वह वन जाकर भूमिकण से गुरु की मूर्ति बनाता है उनके संकेत से ही धनुर्विद्या सीखता है । अपने दृढ़निश्चय के कारण द्रोण द्वारा तिरस्कृत होने पर भी निराश नहीं होता और वह अपने लक्ष्य पर पहुँचता है ।

उनका व्रत है आचार्य द्रोण से बाण-विद्या सीखना । वह अपने व्रत को पूरा करने का प्रण भी करता है -

"मैं तो आर्य गुरु द्रोण से,
बाण-विद्या सीखूँगा । पिता-श्री मेरा प्रण है ।"[1]

कैसी भी परिस्थिति हो वह द्रोण को ही गुरु बनाने का निश्चय करता है और अपनी साधना की पूर्ति के लिए स्वयं को समर्पित करने को तैयार हो जाता है । यदि वह अपनी साधना में असफल बन जायें तो अपना करांगुष्ठ समर्पित करने को भी तैयार हो जाता है ।

गुरु द्वारा अस्वीकृत हो जाने पर गृह-त्याग करके वह वन पहुँचता है तब से उनकी साधना प्रारंभ होती है । वन पहुँचकर वह कुटिया बनाता है और भूमिकण से गुरु की मूर्ति बनाता है और उनके संकेत से साधना प्रारंभ करती है । वह कभी भी द्रोण के प्रति द्वेष न करता । एकलव्य उनकी अस्वीकृति का कारण भीष्म की राजनीति को मानता है । एकलव्य गुरु मूर्ति के संकेत से निरन्तर साधना करता रहा । एकलव्य ने अंतर्दृष्टि से गुरुमूर्ति के समक्ष ही नए नए बाण और धनु निर्मित किए । वह नये नये अस्त्रों के प्रयोग करने में सफल बना । आकर्षण, विकर्षण, पर्याकर्षण, अनुकर्षण, मंडलीकरण, पूरण, स्थारण, आसन्नपात, दूरपात और पृष्ठपात धनुष की विविध गतियाँ हैं । लक्ष्य साधना के लिए अनेक आसनों का अभ्यास करना पडता है जिनमें मुख्य है - आलीढ़, प्रत्यालीढ़, विशाख, समपाद, असम, गरुड़ क्रम, दर्दुर क्रम और पद्मासन । एकलव्य इन सभी आसनों का अनुष्ठान करने में सफल निकलता है ।

---

1. एकलव्य - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 91.

वन पहुँचे एकलव्य को अपनी माँ और बीती घटनाओं की याद आती हैं । वह इस प्रकार सोचता है कि जब मुझे अपनी माँ की सेवा करना है, तब मैं व्रत धारी बनकर वन में बैठा हूँ । वह माँ से क्षमा माँगता है -

"किन्तु, माँ ! क्षमा हो, व्रत होते हैं निभाने को,
अद्भुत आदर्श क्या न प्राप्त किये जाते हैं?"[1]

उसका विश्वास है, प्रण पूर्ति की शिक्षा उसने माँ से ही प्राप्त की है इसलिए उसकी सारी विजय का अधिकारी उसकी माँ है ।

एकलव्य आदर्श गुरुभक्त का प्रतीक है । वह गुरुनिन्दा सुनने को तैयार नहीं । गुरु का परिहास और धनुर्शक्ति का अपमान सह नहीं सकता -

"शान्त ! परिहास न हो मेरे पूज्य गुरु का !
और अपमान न हो धनुर्वेद-शक्ति का ।"[2]

एकलव्य भूमिकण से गुरु की मूर्ति बनाता है । ब्रह्म वेला में गुरु पूजा करने वाला गुरुभक्त एकलव्य का चित्रण वर्माजी ने किया है । अपने आश्रम में पहुँचे गुरु का स्वागत उसने बाण से पुष्प वर्षा करके किया -

"जय ! जय ! गुरुदेव की" ।
ऐसा कह एकलव्य ने प्रणाम करके,
धनुष संधान किया और एक बाण ही
छोडा, जिसने लता के वृन्त झकझोर के
श्री गुरु-चरणों पर पुष्प-वर्षा कर दी ।"[3]

---

1. एकलव्य - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 183.
2. वही - पृ: 133.
3. वही - पृ: 281.

एकलव्य गुरु की प्रण पूर्ति के लिए अपना दक्षिणांगुष्ठ काटकर गुरुदक्षिणा के रूप में समर्पित कर देता है, जिससे पार्थ ही अद्वितीय धनुर्धर बन जायें। उसका यह महादान आदर्श गुरुभक्ति का प्रमाण है।

एकलव्य अपनी कठिन साधना द्वारा लक्ष्य प्राप्ति में सफल होता है। वह इतना कुशल धनुर्धर बन जाता है कि पार्थ भी उसके सम्मुख निष्प्रभ हो जाता है। पार्थ उसकी साधना देखकर ईर्ष्या करने लगता है। भौंकते श्वान के मुँह में छोडे सात बाण उसकी अद्वितीयता का प्रमाण है -

"श्वान पुनः भौंका और एकलव्य लक्ष्यी ने,
सात बाण शब्द लक्ष्य ले के छोडे धनु से।
बाण इस विधि से चले कि श्वान-मुख में
कस गए, बिना क्षत किए निज गति में।"[1]

एकलव्य की साधना का परिचय सुनकर द्रोण पार्थ के साथ वन पहुँचते हैं। उनकी साधना देखकर प्रसन्न हो जाते हैं और वे एकलव्य को कुशल धन्वी और अजेय धनुर्धारी स्वीकार करते हैं। द्रोण उसकी प्रशंसा करते हैं -

"किन्तु जानता हूँ धनुर्वेद, कहता हूँ मैं -
तुम-सा कुशल धन्वी दूसरा नहीं हुआ।
× ×   × ×   × ×   × ×   × ×
अर्जित किया जो धनुर्वेद वह सिद्ध है
और तुम आज के अजेय धनुर्धारी हो"[2]

पार्थ भी एकलव्य की अद्वितीयता को स्वीकार करता है -

---

1. एकलव्य - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 248.
2. वही - पृ: 287.

"यह सत्य है कि ऐसा लाघव मुझे कभी,
प्राप्त नहीं होगा और एकलव्य वीर ही
इस पृथ्वी-तल-मध्य अद्वितीय धन्वी हो,
शासन करेगा इस सारी आर्य-जाति का ।"[1]

एकलव्य की कुशलता देखकर द्रोण विवश भी हो जाते हैं क्योंकि उन्होंने अर्जुन को अद्वितीय बनाने का प्रण किया था ।

एकलव्य के व्यक्तित्व को ऊपर उठानेवाला एक और रूप है - महादानी का । एकलव्य गुरु को प्रण पूर्ति में सफल बनाने केलिए गुरु के माँगे बिना अर्धचन्द्र मुख बाण से अपने दाहिने हाथ का अंगूठा काटकर गुरुदक्षिणा के रूप में समर्पित कर देता है । वह निज साधना को सदैव के लिए त्याग देता है । उसके इस महान दान से आचार्य द्रोण सराह करते हैं -

"क्या किया, हे एकलव्य ! तुमने !
मेरी प्रण पूर्ति में विनष्ट निज साधना
एक क्षण में ही कर डाली, शिष्य ! धन्य हो ।"[2]

गुरु के प्रति मानसिक तथा शारीरिक निष्ठा के कारण भारतीय संस्कृति में गुरुभक्ति के प्रतीक के रूप में एकलव्य प्रातः स्मरणीय है ।

वर्माजी ने एकलव्य को ज्ञान प्राप्ति के इच्छुक, दृढ़निश्चयी, व्रती, मातृभक्त, एकान्त साधक, आदर्श गुरुभक्त, अनुपम धन्वी, महादानी आदि रूप में चित्रित करके समुचित सम्मान का योग्य बनाया है ।

---

1. एकलव्य - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृः 265.
2. वही - पृः 296.

आचार्य द्रोण

प्रस्तुत महाकाव्य का दूसरा प्रमुख पात्र है आचार्य द्रोण । कौरव और पाण्डव कुमारों के गुरु के रूप में "महाभारत" में आचार्य द्रोण का महत्वपूर्ण स्थान है । "महाभारत" में स्वयं एकलव्य से गुरुदक्षिणा के रूप में दक्षिणांगुष्ठ माँगनेवाले आचार्य द्रोण का चित्रण किया गया है ।[1] जो उनके चरित्र पर सदा के लिए लगा हुआ कलंक है । वर्माजी ने अपनी मौलिक उद्भावना द्वारा इस कलंक को दूर करने की चेष्टा की ।[2] अपने प्रयत्न में कवि सफल हुए हैं । द्रोण पर लगे इस कलंक को दूर करने में कवि कहाँ तक सफल हुए हैं इसके लिए उनके चरित्र के हर पहलू का विश्लेषण करना समीचीन होगा । द्रोण निश्चय ही महान् चरित्र के अधिकारी हैं ।

वर्माजी ने महर्षि भरद्वाज के पुत्र और परशुराम शिष्य आचार्य द्रोण का चित्रण मनोहर ढंग से खींचा है -

"श्वेत जटा, विस्तृत ललाट, कसी भौंहें हैं
नेत्र हैं विशाल, रक्तवर्ण, उठी नासिका
श्वेत स्मश्रु बीच ओंठ, जैसे शुभ्र अभ्रों की
ओट संध्याकाल-मध्य दुर्ग का कलश है ।"[3]

---

1. तमब्रवीत् त्वयाङ्गुष्ठो दक्षिणो दीयतामिति ।।
एकलव्यस्तु तच्छ्रुत्वा वचो द्रोणस्य दारुणाम् ।
श्रीमन्महाभारतम्-आदिपर्व - पृ: 175.

2. गुरु का हृदय खंड खंड हो, असंभव !
दक्षिणांगुष्ठ ही हो खंड खंड मेरा जो कि
पार्थ को बना दे अद्वितीय धन्वी विश्व में ।
गुरु प्रण पूर्ति करे सब काल के लिए
जय गुरुदेव । यह रही मेरी दक्षिणा ।
एकलव्य - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 296.

3. वही - पृ: 12.

"एकलव्य" महाकाव्य में द्रोण के कई रूप हमारे सम्मुख आते हैं - आर्थिक कठिनाई से दुःखी, स्वाभिमानी, गुरु, भीष्म की राजनीति से विवश और व्यथित द्रोण ।

हम देख चुके हैं कि मंत्र शक्ति द्वारा सींक से वीटिका निकालने वाले द्रोण का रूप वर्माजी ने सबसे पहले पाठक के सम्मुख प्रस्तुत किया है । राजसभा में द्रोण स्वयं अपना परिचय देते हैं । धनुर्वेद ज्ञान प्राप्त द्रोण आर्थिक कठिनाई के कारण इधर उधर भटकते हैं । वे अर्थ की कामना करते हुए परशुराम के पास जाते हैं जो अपना सर्वस्व दान करके वन जा रहे हैं । लेकिन उसे अर्थ नहीं मिलते केवल अस्त्र-शस्त्र ही मिलते हैं । वे अपने मित्र द्रुपद के पास पहुँचते हैं । उनका विश्वास था कि वे निश्चय ही उनकी सहायता करेंगे । लेकिन द्रुपद द्वारा उनका अपमान होता है । उनकी विवशता का चित्र अपनी सूक्ष्म दर्शी प्रतिभा से कवि ने चित्रित किया है -

"पत्नी के दृगों में अश्रु बिन्दु कुछ छलके,
शिशु चुपचाप था, उदास माँ के पार्श्व में ।
क्षोभ और ग्लानि से हृदय अंगार जैसा
धक्-धक् जलता था ।"[1]

अन्त में वे पत्नी के कहे अनुसार उनका भाई कृपाचार्य से मिलने के लिए हस्तिनापुरी पहुँचता है । तभी राजकुमारों से उनकी भेंट होती है ।

इस महाकाव्य में द्रोण के स्वाभिमान का चित्रण हुआ है । पिता की मृत्यु के बाद सारा वैभव नष्ट होने लगा, शिष्यों की संख्या भी कम होने लगी । भले ही उन्हें धन का अभाव है फिर भी वह अपना स्वाभिमान नहीं खोने देता । उनका दृढ़ निश्चय है -

---

1. एकलव्य - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 50.

"सीखा नहीं हाथ का पसारना कि दान दो,
आश्रम रहे या चला जाय शून्यगर्त में ।"[1]

आचार्य द्रोण के व्यक्तित्व को ऊपर उठाने वाला अन्य रूप है आदर्श आचार्य का । आदर्श गुरू के रूप में उनका चरित्रोद्घाटन करने में वर्माजी सफल हुए हैं । उनकी प्रखर मेधा और अद्भुत धनुर्वेद ज्ञान इसका परिचायक है । वे उन्हें राजकुमारों को धनुर्वेद ज्ञान देने के साथ ही अपने कर्तव्य की याद दिलाते हैं और उन्हें अहंकार और द्वेष पर विजयपाने का आदेश भी देते हैं -

"ज्ञान-गिरि चढ़ना सहज है, किन्तु वीर !
अहंकार - द्वेष जीतना महाकठिन है ।
जीले इसको हे वीर ! युद्ध में प्रवीण हो,
अग्र शत्रु ये हैं, फिर अन्य कोई शत्रु है ।"[2]

वे राजकुमारों को अस्त्र-शस्त्र संचालन में कुशल बना देते हैं । दुर्योधन और भीम गदा युद्ध में, नकुल और सहदेव असि युद्ध में प्रवीण बन जाते हैं । अर्जुन अद्वितीय धनुर्धर बन जाते हैं । राजकुमारों के शस्त्र प्रदर्शन से सन्तुष्ट भीष्म आचार्य द्रोण की शिक्षा-नीति की प्रशंसा करते हैं ।[3]

वे भीष्म की राजनीति के अधीन होने के कारण एकलव्य को शिष्य न बना सकते हैं । द्रोण एकलव्य में योग्य शिष्य के आवश्यक गुण पाते हैं । तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था के कारण उन्हें यह कहना पड़ा -

"जाओ, हे निषाद पुत्र ! तुम हो अस्वीकृत !"[4]

---

1. एकलव्य - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 36-37.
2. वही - पृ: 61.
3. वही - पृ: 113.
4. वही - पृ: 127.

इसका कारण यह है कि वे तो राजगुरु हैं, उन्हें भीष्म की राजनीति का पालन करना पडता है । भीष्म की राजनीति से बन्धित होने के कारण उन्हें यह कहना पडा -

"राजगुरु हूँ, विशेष पद की मर्यादा है ।
शिक्षा-नीति राज-नीति के पदों है चलती ।"[1]

जब द्रोण को स्वप्न में उस श्यामल कुमार के दर्शन होते हैं जो निरन्तर अभ्यास द्वारा धनुर्वेद साधना की सिद्धि पूर्ण कर रही है तब उसे बहुत दुःख हो रहा है क्योंकि केवल एक निषाद पुत्र होने के कारण उसे शिष्य न बना सके । दूसरों को वे शिक्षा न दे सके क्योंकि "गुरुकुल" के स्वामी नहीं, राजकुल के सेवी हैं । अपनी असमर्थता के कारण उनका हृदय व्यथित हो जाता है -

"शिक्षा की त्रिवेणी का पवित्र तीर्थराज तो
सृष्टि में समस्त मानवों की कर्मभूमि है ।
प्रतिबन्ध कैसा' किन्तु यहाँ इसपुर में -
शासित हूँ सर्वदा कठोर राजनीति की
वज्र तर्जनी से मैं ! हा ! कितना विवश हूँ !
हो गया हूँ पुष्प मुरझाया - सा कूष्माण्ड का ।"[2]

वे किसी गुरुकुल की स्थापना न कर सके । वे अपने को भाग्यहीन मानते हैं ।

एकलव्य की साधना देखकर वे उसे अजेय धनुर्धारी स्वीकार करते हैं । तब पार्थ उन्हें अपने प्रण की याद दिलाते हैं । वे अत्यन्त विवश हो जाते हैं क्योंकि अपने प्रण का पालन न कर सके । वे अपनी विवशता प्रकट करते हैं -

---

1. एकलव्य - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 126.
2. वही - पृ: 223.

"वत्स, एकलव्य ! तुम धन्य हो !
गुरु की प्रतिज्ञा - पूर्ति में प्रयत्नवान हो,
किन्तु तुम देखो आज गुरु की विवशता,
निज प्रण-पूर्ति में जो बना असमर्थ है ।"[1]

यों आचार्य द्रोण के चरित्रोद्घाटन में कवि सफल हुए हैं ।

पार्थ

एकलव्य के उदात्त चरित्र के सम्मुख पार्थ का चरित्र फीका पड़ गया है । इस महाकाव्य में पार्थ का चरित्र चित्रण वीर, स्वार्थी, ईर्ष्यालु और दंभी के रूप में हुआ है

सबसे पहले पार्थ इस महाकाव्य में एक वीर के रूप में हमारे सामने आता है जो अद्वितीय धनुर्धर बनने के लिए निरन्तर लक्ष्य संधान कर रहा है । द्रोण को पार्थ के लक्ष्य संधान की क्षमता पर इतना विश्वास होता है कि वे द्रुपद से प्रतिशोध लेने में योग्य होगा । द्रोण उसे धनुर्वेद में अद्वितीय बना देने का प्रण भी करते हैं ।

उसका दूसरा रूप है स्वार्थी का । द्रोण के आदेश के अनुसार वन में वह एकलव्य की खोज करता है । एकलव्य से उसका मिलन होता है । एकलव्य की लक्ष्य साधना देखकर उसे अद्वितीय धन्वी मान लेता है । इसके बाद उसके मन में उत्पन्न द्वन्द्व का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण कवि ने किया है । एकलव्य का लाघव देखकर उसके प्रति ईर्ष्या करता है । लौटकर वह आचार्य द्रोण को अपने प्रण की याद दिलाता है -

---

1. एकलव्य - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 29.

"उस दिन आपने हृदय से लगा मुझे,
कितनी प्रसन्नता से प्रण यह था किया -
"पार्थ ! सुनो, कोई मेरा शिष्य कभी स्वप्न में,
तुमसे न श्रेष्ठ होगा धनुर्वेद-शिक्षा में ।"[1]

अपने स्वार्थ के कारण वह एकलव्य से ईर्ष्या करता है । उसकी ईर्ष्या देखकर द्रोण उसे ईर्ष्यालु न होने और स्वार्थ त्याग करने का आदेश देते हैं ।[2]

पार्थ के चरित्र का एक अन्य रूप है दंभ का । पार्थ को अद्वितीय बना देने केलिए एकलव्य यह प्रण करता है कि वह कभी शर हाथ में न लेगा । लेकिन पार्थ इससे सन्तुष्ट न होता है । अपने क्षत्रियत्व पर गर्व करते हुए यही कहता है -

"पार्थ भी है क्षत्रिय, विराट व्रतधारी है,
क्या निषाद-पुत्र की कृपा की भीख माँग के
अद्वितीय धन्वी की पताका फहराएगा?"[3]

एकलव्य, आचार्य द्रोण और पार्थ जैसे तीनों प्रमुख पात्रों के अलावा सुयोधन, द्रुपद, हिरण्यधनु नागदंत, युधिष्ठिर, नकुल, सहदेव, अश्वत्थामा, कृपाचार्य, भीष्म, एकलव्य की माँ, गाँधारी और कुन्ती इस महाकाव्य के गौण पात्र हैं । लेकिन इन गौण पात्रों के चरित्र का क्रमशः विकास प्रस्तुत काव्य में नहीं हो पाया है । इसलिए हम यहाँ इनकी विशद चर्चा आवश्यक नहीं समझते ।

---

1. एकलव्य - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 270.
2. वही - पृ: 271.
3. वही - पृ: 291.

रस

भारतीय आचार्यों के अनुसार महाकाव्य में शृंगार, वीर या शान्त रस की प्रमुखता होनी चाहिए। लेकिन पाश्चात्य आचार्यों ने महाकाव्य में वीर रस को प्रमुख स्थान दिया है। वर्माजी ने इस महाकाव्य में भक्ति, करुणा और वीर रस को स्थान दिया है। इनमें से भक्ति रस की प्रधानता ही प्रस्तुत महाकाव्य में देख सकते हैं।

भारतीय आचार्यों ने जिस भक्ति रस की उद्भावना की है उसमें ईश्वर विषयक प्रेम ही स्थाई भाव है। किंतु प्रस्तुत काव्य में गुरु के प्रति स्थिर प्रेम तथा श्रद्धा स्थाई भाव है। भारतीय संस्कृति तथा वाङ्मय में गुरु को ईश्वर के समतुल्य माना गया है। ऐसे महान् गुरु के प्रति निष्ठापूर्वक प्रेम अनुकूल रसांगों की संगति से रस रूप में निष्पन्न होता है।

इस महाकाव्य में एकलव्य की गुरु भक्ति का प्रतिपादन ही प्रमुख रूप से हुआ है। "दक्षिणा" सर्ग में एकलव्य की गुरु भक्ति का चरम आदर्श देख सकते हैं। गुरु भक्ति से प्रेरित होकर ही उसने अपने करांगुष्ठ को दक्षिणा के रूप में समर्पित किया है।

गुरु की अमोघ प्रतिभा से वह बहुत प्रभावित हो जाता है। इसलिए वह द्रोण को ही अपने गुरु मान लेता है। अपनी इस अचल निष्ठा के कारण वह स्वयं द्रोण के पास जाता है और धनुर्वेद ज्ञान की शिक्षा माँगता है। गुरु द्वारा अस्वीकृत हो जाने पर भी वह अपने निश्चय से विचलित नहीं होता और अपनी निष्ठा की पूर्ति के लिए वह वन जाकर गुरु की मूर्ति बनाता है, उसे चेतन मानता है और उनके संकेत से धनुर्वेद सीखता है। गुरुद्वारा अस्वीकृत होने पर उसके मन में दुःख या विद्रोह की भावना नहीं होता और गुरु के प्रति उसके मन में अश्रद्धा भी नहीं होता। इतना ही नहीं गुरु को ही नहीं तत्कालीन राजनीति को दोषी मानता है। उसकी अविचल निष्ठा अप्रतिम है। वह दूसरों के मुख से गुरु की निन्दा तो सह नहीं सकता। जब एकलव्य का धनुर्वेद कौशल देखकर पार्थ यह कहता है कि उन्होंने यह ज्ञान-दान हमको नहीं दिया है तब द्रोण पार्थ के मुँह से गुरू की निन्दा सह न सकता -

"सावधान, आर्य ! गुरु-निन्दा एक क्षण भी,
सुन न सकूँगा आपके वाचाल मुख से !"[1]

पार्थ के साथ आए आचार्य द्रोण को देखकर वह बहुत प्रसन्न हो जाता है । उसकी मनोदशा का चित्र वर्माजी ने सुचारु ढंग से खींचा है ।[2] वह गुरु का दुःख सह नहीं सकता । अपने गुरु की प्रण-पूर्ति के लिए अपना दक्षिणांगुष्ठ जो एक धनुर्धर केलिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है उसे गुरुदक्षिणा के रूप में समर्पित कर देता है । यह घटना उसकी गुरुभक्ति की चरम सीमा है । एकलव्य के हृदय में स्थाई रूप से स्थित भक्ति भाव भक्ति रस के रूप में परिणीत हो जाता है । गुरु भक्ति की इस चरम सीमा का वर्णन वर्माजी ने किया है। यथा -

"क्षण ही में अर्धचन्द्र-मुख-बाण वेग से,
तूर्ण से निकाल कर लिया वाम कर में ।
गुरु-मूर्ति के समीप हाथ रख दाहिना,
एक ही आघात में अंगुष्ठ काटा मूल से ।"[3]

यहाँ स्थाई भाव गुरु विषयक भक्ति है । आलंबन विभाव-आचार्य द्रोण, उद्दीपन विभाव - प्रण पूर्ति में असफल रहने वाले गुरु की करुण दशा, अनुभाव-क्षण में तूर्ण से अर्ध चन्द्र मुख बाण हाथ में लेना, संचारी भाव आनन्द के साथ एक ही आघात से अंगुष्ठ काट डालना । इस प्रकार गुरु भक्ति विषयक स्थाई भाव विभाव, अनुभाव और संचारी भाव के संयोग से भक्ति रस में परिणत हुई ।

---

1. एकलव्य - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 254.
2. वही - पृ: 280-281.
3. वही - पृ: 296.

कुछ आलोचकों ने "एकलव्य" में वीर रस की प्रधानता स्वीकार की है ।[1] तरु शाखा पर सर्प को देखते समय शीघ्र उस पर बाण छोडने केलिए एकलव्य उत्सुक हो जाता है । यहाँ क्षण भर के लिए एकलव्य के हृदय में वीर रस का संचार होता है । लेकिन स्थाई रूप से, उसके मन में वीर रस का स्थाई भाव उत्साह नहीं रहता । इसीलिए वीर रस को प्रस्तुत काव्य का प्रधान रस मानना संगत नहीं । वीर रस के लिए यह उदाहरण लिया जा सकता है ।

"अरे, तरु-वृन्त पर एक काला सर्प है ।
एकलव्य ने उठाया शीघ्र कोदंड-बाण,
"जय गुरुदेव !" कह लक्ष्य लिया वृन्त का ।
तीर छोडा, क्षण में ही फण उस सर्पका,
कट कर नीचे गिरा तरु-निम्न भूमि में ।"[2]

वीर रस का स्थाई भाव उत्साह है । काला सर्प आलंबन विभाव है, तरु वृन्त पर फण फैलाकर लेटना उद्दीपन विभाव है, लक्ष्य करने केलिए शीघ्र कोदंड बाण उठाना औत्सुक्य तथा " जय गुरुदेव ! कहकर वृन्त का लक्ष्य लेना संचारी भाव है । इन विभाव, अनुभाव और संचारी भाव के संयोग से वीर रस की निष्पत्ति होती है ।

प्रस्तुत काव्य में दो तीन प्रसंगों में करुणरस की अभिव्यंजना भी हुई है । "एकलव्य" के "परिचय" नामक दूसरे सर्ग में करुण रस की योजना मिलती है । द्रुपद द्वारा अपमानित द्रोण, उनकी पत्नी और शिशु का जो वर्णन वर्माजी ने किया वह करुण रस का उत्तम उदाहरण है ।

---

1. डॉ. रामकुमार वर्मा का काव्य - प्रेमनाथ त्रिपाठी - पृ: 193.
2. एकलव्य - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 203.

"पत्नी के दृगों में अश्रु बिन्दु कुछ छलके,
शिशु चुपचाप था, उदास माँ के पार्श्व में ।
फल बिखरे थे मंच के पदस्तल पर,
क्षोभ और ग्लानि से हृदय अंगार जैसा
धक्-धक् जलता था । मेरा रोम रोम ही
सूची के समान खिंच लगा मुझे छेदने !
पल-पल का कष्ट, युग युग की पीड़ा थी ।"[1]

यहाँ आलंबन - द्रोण की पत्नी, उद्दीपन उनकी आँसू भरी आँखें, अनुभाव क्षोभ और ग्लानि के कारण हृदय का अंगार जैसे जलना, संचारी भाव - क्षोभ और ग्लानि, स्थाई भाव-शोक । इन विभाव, अनुभव संचारी भाव के संयोग से स्थाई भाव शोक करुण रस के रूप में निष्पन्न हुई ।

"दक्षिणा" सर्ग में भी करुण रस की योजना हुई है । एकलव्य के कटे हुए अंगुष्ठ देखकर दुःखी एकलव्य की माँ का चित्रण भी करुण रस से रंगीन है । अपनी प्रण-पूर्ति में असफल रहनेवाले आचार्य द्रोण की दशा भी पाठक के मन में करुण भाव को उत्पन्न करने में सफल हुआ है ।

प्रकृतिचित्रण

प्रकृति और मानव मन का अभिन्न संबन्ध है । प्रकृति अपने सौन्दर्य से मानव मन को सदा आकर्षित करती रहती है । कवि मन तो प्रकृति सौन्दर्य से बहुत प्रभावित है । इसलिए इनकी रचनाओं में किसी न किसी रूप में प्रकृति वर्णन मिलता है ।

---

1. एकलव्य - डॉ॰ रामकुमार वर्मा - पृ: 50.

भारतीय आचार्यों ने महाकाव्य में प्रकृति चित्रण को अनिवार्य रूप से स्वीकार किया है । महाकाव्यों में निम्नलिखित रूपों में प्रकृति चित्रण मिलता है - आलंबन, उद्दीपन, अलंकार, मानवीकरण, उपदेशिका, प्रतीकात्मक, रहस्यात्मक,पृष्ठभूमि परक, दैवी संकेत, संवेदनात्मक तथा दूती रूप में । प्रस्तुत महाकाव्य "एकलव्य" में प्रकृति का चित्रण आलंबन, उद्दीपन, मानवीकरण, पूर्व पीठिका, संवेदनात्मक, रहस्यात्मक और उपदेशिका के रूप में हुआ है ।

वर्माजी ने आलंबन रूप में प्रकृति वर्णन करते समय बिंब ग्रहण की प्रणाली और नाम-परिगणन की प्रणाली अपनायी हैं । निम्नलिखित पंक्तियाँ बिंब ग्रहण प्रणाली का सरस उदाहरण है जो प्रातः कालीन प्रकृति का बिंब पाठक के सम्मुख प्रस्तुत करने में सफल हुआ है -

"अम्बर की नीलिमा में श्वेत रंग आ गया,
तारे कुछ फीके पड़े, वायु बही धीरे-से ।
जैसे स्वप्न सरक रहे हैं मन्द गति में,
और जीर्ण नींद-पत्र गिरा दृग-वृन्त से ।"[1]

"साधना" सर्ग में कवि ने प्रकृति का चित्रण नाम परिगणन की प्रणाली के अनुसार किया है ।[2] "ममता" सर्ग में प्रकृति का उद्दीपन रूप में वर्णन किया है । ग्रीष्म, हेमंत, शिशिर आदि ऋतुएँ एकलव्य के विरह से तडपनेवाली उनकी माँ के दुःख को और भी उद्दीप्त कर देते हैं ।

द्रोण का शरीर वर्णन करते समय कवि ने प्रकृति का चित्रण अलंकृत रूप में किया है -

---

1. एकलव्य - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृः 191.
2. वही - पृः 191, 192; 201.

"श्वेत स्मश्रु बीच ओंठ, जैसे शुभ्र अभ्रों की
ओट संध्या काल मध्य दुर्ग का कलश है ।"[1]

उपर्युक्त पंक्तियों में द्रोण के लाल ओंठ वर्णन करने केलिए प्रकृति का चित्रण अलंकृत रूप में किया है । इस प्रकार की प्रणाली के उदाहरण अन्यत्र भी मिल सकते हैं ।[2] प्रकृति के मानवीकरण की योजना भी हुई है । निम्न पंक्तियों में निद्रा को माता के रूप में चित्रित किया है जो जगरूपी शिशु को अपनी गोद में सुलाए हैं -

"आधीरात बीती । निद्रा जैसे एक माता है,
जग-शिशु को सुलाए स्वप्न-सजे अंक में
उसको निहारती है, शान्त मौन भाव से,
अपने सहस्र नेत्र-तारकों की दृष्टि से ।"[3]

प्रकृति के मानवीकरण का उदाहरण अन्यत्र भी मिलते हैं ।[4]

"प्रदर्शन" सर्ग में प्रकृति का वर्णन तो पूर्व पीठिका के रूप में हुआ है ।

"दिवस-सरोरुह की एक खुली पंखुडी,
पद्मराग-जैसी रविकोर दिखी प्राची में ।
जैसे एक वाक्य में अमोघ आशीर्वाद हो,
व्याप्त हो जग के स-जग कण कण में"[5]

---

1. एकलव्य - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 12.
2. वही - पृ: 31, 135, 237, 291.
3. वही - पृ: 173.
4. वही - पृ: 174, 200, 201, 245.
5. वही - पृ: 97.

"द्वन्द्व" सर्ग में प्रकृति का संवेदनात्मक चित्रण किया गया है । विहगों के वृन्द एकलव्य की कीर्ति का गान करते हुए पाण्डु पुत्रों की हँसी उड़ाते हैं -

"विहगों के वृन्द उड़े विपुल निनाद से,
वृक्ष-वृक्ष से, समीप ऊँचे वृक्ष-वृक्ष में ।
मानो कल-गान कर एकलव्य-कीर्ति का,
परिहास करते थे पाण्डु पाण्डु पुत्रों का ।"[1]

"द्वन्द्व" और "दक्षिणा" सर्ग में प्रकृति का संवेदनात्मक रूप में भी वर्णन मिलते हैं ।[2]

वर्माजी ने "साधना" सर्ग में प्रकृति का रहस्यात्मक रूप में चित्रण किया है

"एक सरिता में हैं अनेक सिन्धुगिरते,
नश्वर है लक्ष्य और शाश्वत सु-लक्षी है ।"[3]

इसमें सरिता और सिन्धु के माध्यम से ब्रह्म और जीव का वर्णन किया गया है । अपने भा की अभिव्यक्ति के लिए वर्माजी ने प्रकृति को उपदेशिका के रूप में ग्रहण किया है । शिक्षा- प्राप्त करने केलिए सभी अधिकारी हैं । इसी अभिव्यक्ति केलिए प्रकृति का सहारा लिया है -

"फूल फुलते हैं वे न घोषणाएँ करते,
"साधु ही सुगंधि के विशेष अधिकारी हैं ।
और जो असाधु है, समीप जाके उनके
जो सुगंधि है, वही दुर्गंधि बन जावेगी'."[4]

---

1. एकलव्य - डॉ रामकुमार वर्मा - पृ: 259.
2. वही - पृ: 263, 264, 299.
3. वही - पृ: 205.
4. वही - पृ: 222-223.

इनके अतिरिक्त प्रकृति का एक अन्य रूप में भी वर्णन मिलता है जो पात्र के मानसिक संघर्ष या द्वन्द्व का वर्णन करने के लिए लिया गया है । स्वप्न में एकलव्य के दर्शन के बाद आचार्य द्रोण के मन में संघर्ष चल रहा है, उसका मन अशान्त रहता है । उसका प्रतिफलन प्रकृति में भी देख सकते हैं -

"अंधकार की असीम कालिमा के क्रोड़ में,
क्रूरता का कोश लिए घन घिर आए हैं ।
घूम घूम घूरते हैं, घिरते दिशाओं में,
मायावी निशाचरों-से छोटे-बड़े होते हैं ।"[1]

इस प्रकार काव्य में प्रकृति का वर्णन विविध रूपों में वर्माजी ने किया है ।

चतुर्वर्ग में से किसी एक की प्राप्ति महाकाव्य का लक्ष्य होना चाहिए । इस दृष्टि से देखें तो "एकलव्य" का लक्ष्य धनुर्वेद ज्ञान की प्राप्ति की कामना है ।

भारतीय आचार्यों के अनुसार महाकाव्य के प्रारंभ में मंगलाचरण की योजना होनी चाहिए । वर्माजी ने प्रस्तुत महाकाव्य में किरात कार्मुकि और आदि कवि वाल्मीकि की वन्दना की है ।

महाकाव्य के नामकरण के संबन्ध में आचार्यों का मत यह है कि नामकरण, नायक, कथानक या अन्य किसी विशिष्ट आधार पर होना चाहिए । इस नियम का पालन करते हुए वर्माजी ने प्रस्तुत महाकाव्य का नामकरण इसके नायक "एकलव्य" के आधार पर किया ।

सर्गों का नामकरण वर्ण्य विषय के आधार पर होना चाहिए । इस महाकाव्य में सर्गों का नामकरण विषय के आधार पर किया गया है ।

---

1. एकलव्य - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 215.

उत्तरायण

"उत्तरायण" वर्माजी का दूसरा महाकाव्य है । इसमें महाकाव्य के लिए अनिवार्य तत्व विद्यमान हैं । नौ सर्गों में आबद्ध प्रस्तुत महाकाव्य का नायक तुलसीदास ऐतिहासिक पात्र है । इसका कथानक उदात्त है और इसमें पुष्ट चरित्र चित्रण मिलता है । उपयुक्त रसों की योजना और प्रकृति वर्णन भी स्थान स्थान पर मिलते हैं । मंगलाचरण का पालन भी हुआ है । श्री राम के चरित्र पर लगे काले धब्बे को पोंछना ही कवि का लक्ष्य है यह काम तुलसी के स्वप्न में दिखाई पड़नेवाले वाल्मीकि करते हैं । आगे "उत्तरायण" के महाकाव्यत्व का विस्तार से विश्लेषण करेंगे ।

कथानक

तुलसी के बचपन से वर्माजी ने कथा का आरंभ किया है । मातृ-पितृ विहीन तुलसी की बाल्यावस्था दारुण थी । वह घर की जूठन से अपनी भूख मिटाता रहा । इसी वक्त गुरु नरहरि से उनका मिलन होता है । वे उसे अपने आश्रम में लाकर राम-ज्ञान भी देते हैं । तुलसी ज्ञानी बन जाते हैं और राम-कथा गायन में समर्थ भी बन जाते हैं । एक दिन एक भक्त उनके पास अपनी बेटी को लेकर आते हैं और उनके सामने अपनी बेटी-रत्ना-की शादी करने का प्रस्ताव भी रखते हैं । रत्ना से उनकी शादी होती है । अपने प्रति तुलसी के अनुपम प्यार देखकर एक दिन रत्ना उसका व्यंग्य करती है और यह कहती है कि यदि यह प्यार राम के प्रति हो तो तुम्हें विश्व भीति कभी न होगी । इससे उनकी आँखें खोलती हैं और वे अपनी भूल पहचानते हैं । वे अपने इस वासनामय जीवन त्यागने का निश्चय करते हैं । घर त्याग कर जानेवाले तुलसी के मन में बीती बातों की - विवाह जीवन की - याद आती है । रत्ना का व्यंग्य उन्हें यह सांसारिक जीवन त्यागने की प्रेरणा देती है । संन्यास ग्रहण करने का निश्चय करनेवाले तुलसी के मन में राम-कथा लिखने की प्रेरणा जाग उठी । वे पुण्य प्रयाग चलने का निश्चय करते हैं । वे प्रयाग पहुँचते हैं । सुरसरि में स्नान करते समय एक नारी का क्रन्दन सुना

क्योंकि उसकी बेटी तो नदी में डूब रही है । तुलसी ने नदी में कूदकर उस बाला को बचाया । प्रयाग में पहुँचे तुलसी को यह अनुभव होता है कि उसे इस मायावी क्लेश से मुक्ति मिल गई हो । भरद्वाज के आश्रम में पहुँचकर उन्होंने सन्त का रूप धारण किया । उनके मन में भक्ति भाव ही है । माधव के मन्दिर में पहुँचकर राम भक्ति का पावन प्रसाद देने की प्रार्थना की । तुलसी ने काशी जाने का निश्चय किया । वहाँ के पुण्य स्थलों के दर्शन करने के बाद वाराणसी चला गया । वहाँ उन्होंने भक्तों को राम कथा सुनाया । उनकी राम-कथा भाषण सुनकर शैव पण्डितों में द्वेष उत्पन्न हो गये और उन्हें शारीरिक यातना भी दी । उसके बाद तुलसी काशी छोडकर चित्रकूट की ओर प्रस्थान किया । उन्हें राम के वनवास के कुछ प्रसंग याद आते हैं जो चित्रकूट में घटित हुए । इसके बाद वे बद्रीनाथ पहुँचते हैं । वे अवध पुरी जाकर राम कथा लिखने का निश्चय करते हैं । (काव्य रचना - पूर्वार्द्ध में) राम के पूर्वजों का परिचय देते हुए राम-कथा लिखना प्रारंभ की । राम का जन्म, याग-रक्षा, अहल्या-उद्धार, सीता स्वयंवर तक की रचना की । इसके बाद (काव्य-रचना उत्तरार्द्ध में) तुलसी ने राम के वनवास की कथा लिखी । सीतापहरण, शबरी, सुग्रीव आदि की कथा की ओर भी संकेत किया गया है । कुंभकरण, मेघनाद, रावण आदि का वध करते हुए सीता को स्वतन्त्र बनाना, उसके बाद सीता की अग्निपरीक्षा और रामाभिषेक तक की रचना की । सीता परित्याग को लेकर तुलसी के मन में द्वन्द्व उत्पन्न होते हैं । (सीता परित्याग के संबन्ध में तुलसी के विचार) स्वयं राम ने उनकी अग्नि परीक्षा की तब क्यों फिर सीता को त्यागने का निश्चय किया । सत्य पर अडिग रहनेवाले राम ने क्यों सीता का त्याग किया' सीता अपने को राम के प्रति पूर्ण रूप से समर्पण करती है । इसलिए उसने राम के साथ वन जाने का निश्चय किया । अनसूया ने भी उनके गौरव की सराहना की । जब पर्णकुटी से रावण ने उसका हरण किया तब वे असहाय होकर विलाप करती रही । जिसके शरीर की छाया भी पवित्र है ऐसी सीता पर क्यों विश्वास न आया' यदि प्रभु के मन में सीता पर विश्वास न होता तो उसे विदेह भवन में भेजकर सन्तोष पा सकते थे । तुलसी इस प्रकार सोचते हैं कि यदि सीता को यह कार्य स्वीकार्य होता तो भले ही उसके मन में दुःख हो फिर भी वह अपने घर रहती । लेकिन राम ने तो उन्हें विजन वन में भेजा ।

वे ऐसा नहीं सोचते कि वहाँ हिंस्र जन्तु हैं और सीता गर्भवती है । तबसे वह माँ से आज्ञा पाकर ही वन चली थीं/अब तो यह वन निष्कासन जो अवधि रहित है फिर भी माता से कुछ अनुशासन लिया' पर से संवाद सुनकर दुःखी होकर सीता को लक्ष्मण के साथ वन में भेज दी । सब भाई और स्नेही जन चुप रहे और सीता भी चुप रही । वह तो जीवन भर यंत्रणा सहती रहीं । वे राम से यह कह सकती थी कि "हे रघुनन्दन ! इतने वर्ष तक मैं आपके साथ ही वन चली फिर भी तुम मुझे न समझे । क्या मैं उस रजक नारी के समान हूँ' मेरा हृदय तो तुम्हारा प्रेम पान करता था । तुमने रावण का वध किया और मेरी अग्नि-परीक्षा भी ली । मेरे सतीत्व पर विश्वास होने पर भी तुम क्यों मौन रहे । जब रजक ने कोसा तब मैं गर्भवती हूँ और मेरे शरीर पर पातिव्रत का आतप है ।" हनुमान और विभीषण द्वारा यह समाचार सुना कि रावण तो सीता से हार गया है/फिर भी उसके मन में सन्देह का गरल क्यों पैठ गया' रावण को मारने के बाद राम ने सीता से यही कहा कि पापी रावण तो मारा गया और मैं यह जानता हूँ कि तुम तो पतिव्रता हो । राज सभा के समक्ष वे यह कह सकते थे कि "मैं तो सीता की अग्निपरीक्षा ली हूँ अग्नि और वायु उसकी साक्षी है । उस रजक ने अपनी पत्नी के सतीत्व पर शंका करते हुए उसे घर से बाहर निकालने को कहा और उसने यह भी कहा कि मैं राम नहीं हूँ जिसने सीता को जो रावण द्वारा हारी गयी होने पर भी साथ रखा है । वह रजक कहाँ था जब सीता की अग्नि परीक्षा की ! वह रजक तो दण्ड का भोगी होगा जिसने राज-नियम का त्याग किया है । यदि तुम कहते हो कि भारी लोकापवाद है तो मैं यह सारा वैभव छोडूँगा । जिस प्रजा के हृदय में सत्य नहीं है उस पर शासन करना असंभव है । चाहे लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न या रजक इसका नायक हो जायें । मैं यह राज्य छोडकर वन में रहूँगा जिससे सीता भी जीवन में कलंक से मुक्त रहें । मैं पिता की आज्ञा का पालन करने केलिए चौदह वर्ष वन में रहा । अब मैं अवधि रहित वनवास करूँगा और तुम रजक के साथ भूमि का ऐश्वर्य भोगो । मुझे सीता पर अटल विश्वास है मेरा यह जीवन तो उनके साथ सफल है ।" तुलसी कहते हैं कि इस प्रकार कहने वाले राम पूर्ण पुरुष हैं और उन्हें कोई भी भय नहीं है । आगे उत्तरकाण्ड के संबन्ध में कवि का

अपना दृष्टिकोण है-यह उत्तरकाण्ड किसी के उर का द्वेष अंकित करता है जो रामभक्ति का प्रचण्ड विरोधी है । इसके कथा-भाग में भेद है, उसकी शैली भी भिन्न है । श्री राम के चरित्र में भी अन्तर है । इस काण्ड में कुछ ऐसे प्रसंग हैं जैसे नीति हीन होकर लिखे गये हैं । उत्तरकाण्ड की गृद्ध उलूक और शंबूक की जो कथाएँ हैं वे सब कल्पित हैं । वाल्मीकि से तुलसी यह कहते हैं कि यह काण्ड तुम्हारा है । यह सारा काव्य राम की कथा पर लिखा है । अपने नायक का सत्य तुमने क्यों नहीं माना? क्या प्रभु ने तुम्हें संकेत किया । कवि तुम बतला दो कि मुझसे कुछ भूल हुई है? क्या प्रभु की करुणा मुझसे प्रतिकूल हुई है? तुम "उत्तर" का सारा रहस्य समझा दो, इस कसी हुई गाँठ को सुलझा दो । तरह तरह की चिन्ताओं से मथकर वे अश्रु बहाकर सो गये । ब्रह्मवेला का समय है । तुलसी को स्वप्न में आदि कवि वाल्मीकि के दर्शन होते हैं । वाल्मीकि का कथन ही राम और सीता के चरित्र पर लगे कलंक को दूर करते हैं । वाल्मीकि का कथन है "हे कविवर ! मैं रामायण की रचना करके उनके पुण्यचरित्र के सुगंध को संसार भर में फैलाकर धन्य हो गया हूँ । क्या तुम्हें यह शंका है कि मैं ने राम का अनुचित चरित्र लिखा है । उत्तर-काण्ड में राम का चरित्र कुछ विकृत हो गया है । मैं रामायण का षट्काण्ड ही लिखा हूँ । किसी निर्मम कवि ने हृदय हीन होकर उसके साथ उत्तरकाण्ड जोड़ा है । नारी वर्ग सीता के पातिव्रत्य पर न्योछावर है । क्या ऐसी अनुपम सीता के सतीत्व पर राम सन्देह कर सके? यह तो झूठ है । सीता निर्वासन के संबन्ध में उनका मत है कि वैदिक दर्शन की प्रगति देखकर बौद्ध मतावलम्बियों ने उनकी प्रगति में बाधा डालने के लिए उस महापुरुष के चरित्र को कुछ गर्हित करने की चेष्टा की । इस मत से प्रेरित होकर बौद्ध कवि गुणाढ्य ने "बृहत्कथा" में राम के चरित्र में कुछ परिवर्तन किया । उसने रामाभिषेक के बाद सीता-निर्वासन का प्रसंग जोड़ा है । आगे सोमदेव ने भी "कथासरित्सागर" में इसी घटना का वर्णन किया । "बृहत्कथा" की भाषा तो पैशाची है । उलूक-गृद्ध की कथाएँ भी कल्पित हैं । कालान्तर में मेरी रचना में भी यह कथा जोड़ दी । यह बौद्ध मतावलंबियों का षड्यन्त्र था जिससे रामचरित की निन्दा संसार में फैल जायें । जब रामराज्य की सारी जनता सद्गुण संपन्न थे तब ऐसे राज्य में यह नीच रजक कहाँ से आया?

मर्यादा पुरुषोत्तम राम से शासित अवध में लांछन का प्रवेश कैसे हुआ' कलंक रहित सीता निर्वासन के प्रसंग से साधारण जनता भी दुःखी हो जाते हैं। तब इस निर्वासन का प्रसंग देखकर क्या राम के मन में आनन्द उत्पन्न होगा' क्या लोकापवाद के भय से राम ऐसा कुकृत्य करेंगे' उन्हें तो यह पूरा विश्वास है कि सीता तो कलंक रहित है। तब क्या वे परिषद् के सम्मुख यह स्थापित कर सकते थे' क्या इस लोकापवाद से रहित रहने के लिए उन्होंने सीता को जीवन भर दुःखी बनाया है' यह कभी नहीं होगा क्योंकि रघुवंश की नीति की कीर्ति तो सारे संसार में फैला है । उनके नाम का उलटा रूप ही - "मरा-मरा" - मुझे पापों से मुक्त किया ऐसे राम का यश कितना अनुपम है । ऐसे राम के चरित्र को मैं कैसे लांछित करूँ' आगे वाल्मीकि यह बताते हैं कि वे किस प्रकार एक कवि बन गए हैं' क्रौंचि के कातर स्वर से ही मेरी कविता की रचना हुई है तब मैं इस निरपराध सीता के निर्वासन को कैसे लिख सकता हूँ'" इतने में तुलसी का स्वप्न भंग हो गया उनकी निद्रा टूट गयी । वे कहते हैं - "हे महाकवि तुमने श्रीराम की सत्यकथा कह दी । रामायण के सत्य रूप के परिचय से मेरा शरीर रोमांचित हो जाता है । आपने ऋषियों द्वारा श्रीराम की स्तुति के साथ रामायण को समाप्त किया है और यह भी कहा है कि "उत्तरकाण्ड" व्यर्थ है । अब मैं इस मानस के प्रक्षिप्त अंग को छोड़ूँगा । राम-राज्य कहकर लव-कुश के होने का प्रसंग लिख दूँगा । अब मेरी शंकाएँ दूर हुईं । जो कथा पूर्ण रूप से सत्य है उसमें मेरा प्रवेश है । प्रातः काल का स्वप्न सत्य है । श्री राम कथा के गायक कवि वाल्मीकि तुमको प्रणाम ।"

प्रस्तुत महाकाव्य का कथानक नव सर्गों में आबद्ध है । प्रारंभिक पाँच सर्गों में भावि कथा की पूर्व सूचना मिलती है ।

वर्माजी ने इस महाकाव्य में विविध छन्दों का प्रयोग किया है । प्रथम, द्वितीय और तृतीय सर्ग में शक्तिपूजा छन्द, चतुर्थ सर्ग में माधवी छन्द, पंचम सर्ग में कवित्त घनाक्षरी, षष्ठ, सप्तम और अष्टम सर्गों में राधिका छन्द, तथा नवम सर्ग में समान सवाई छन्द की योजना मिलती है ।

चरित्र-चित्रण

इस विवेच्य महाकाव्य में वर्माजी ने भारतीय आचार्यों की नायक संबन्धी धारणा का पालन किया है । इस महाकाव्य का नायक तुलसीदास है जो ऐतिहासिक पात्र है । इसमें वर्माजी ने नायक तुलसी के जीवन की झांकी, उनकी काव्य-साधना आदि पर प्रकाश डाला है और नायक के माध्यम से ही अपने उद्देश्य की पूर्ति भी की है ।

वर्माजी ने "उत्तरायण" महाकाव्य के नायक तुलसी के चरित्र चित्रण में कुछ परिवर्तन किये हैं । लोक कथा के अनुसार तुलसी अपनी मायके गयी पत्नी रत्ना से मिलने के लिए मार्ग में कठिनाइयों का सामना करते हुए वहाँ पहुँचते हैं । तब अपनी पत्नी के व्यंग्य भरी कथन के प्रभाव से वे सांसारिक जीवन से विरक्त होते हैं । लेकिन इस महाकाव्य के अनुसार पतिगृह में रहनेवाली रत्ना के व्यंग्य से वह जीवन से विरक्त हो जाता है । इस परिवर्तन के कारण तुलसी का चरित्र कुछ उदान्त बन गया है । इस महाकाव्य में तुलसी के चरित्र का उद्घाटन निम्न रूपों में हुआ है ।

मातृ-पितृ विहीन तुलसी के बचपन का रूप सबसे पहले हमारे सम्मुख आते हैं । गरीब बालक तुलसी घर-घर की जूठन से अपनी भूख मिटाता है । अपनी दीन दशा कहनेवाले तुलसी को सब ओर से तिरस्कार ही मिलता है । उनकी गरीबी का वर्णन वर्माजी ने किया है । जैसे -

"घर-घर की जूठन से भरता था पेट, हाय !
चारों फल जैसे चार-चनों का था उपाय !
पैरों पड कर निज दीन दशा कहना पुकार,
पर द्वार-द्वार से ही मिलता था तिरस्कार !"[1]

---

1. उत्तरायण - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 26.

इसके बाद वर्माजी ने राम भक्त के रूप में उसका चरित्रोद्घाटन किया है। गुरु नरहरि ने उसे अपने आश्रम में लाकर राम-नाम का उपदेश दिया। गुरु के प्रति उसके मन में इतनी भक्ति है कि वे गुरु को नर नहीं हरि के समान मानते हैं।[1] उन्होंने बचपन में जो ज्ञान दिया वह उसे रामभक्त बनने में सहायक बन गया। वे राम कथा गायन में समर्थ बन गये। सारे देश में उनकी कीर्ति फैल गई -

"गुंजित था मेरे यश से राजापुर प्रदेश,
उस दिन कितना मोहक था मेरा शुभ्रवेश।"[2]

राम के प्रति इस अनन्य आस्था के कारण ही सांसारिक जीवन से विरक्त तुलसी ने रामचरित की रचना की।

इसके बाद तुलसी के चरित्र का अन्य रूप है पत्नी से अनन्य प्रेम करनेवाले पति का। उसके वासनामय वैवाहिक जीवन का चित्र वर्माजी ने खींचा है -

"उन्मत्त मिलन बन जाता था बेसुध वसन्त
मधु रजनी का क्षण एक-उसी में निशा-अन्त।
दिन हुआ कि जैसे किसी पुष्प का हो विकास,
कट गई रात-जैसे कि प्यास में भरी प्यास।।"[3]

द्वितीय सर्ग में वर्णित कुछ घटनाओं से उनके पति रूप का चित्र मिलता है।[4]

आगे उनके चरित्र का अन्य रूप है सांसारिक जीवन से विरक्त एक सन्त का अभी तक सांसारिक जीवन में डूबनेवाले तुलसी को उनकी पत्नी के व्यंग्य ने एक नये मोड पर उपस्थित किया। उनके व्यंग्य से वे अपनी भूल पहचानते हैं और सांसारिक जीवन को

---

1. उत्तरायण - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 27.
2. वही - पृ: 28.
3. वही - पृ: 30.
4. वही - पृ: 41.

त्यागने का निश्चय करते हैं । वे रत्ना से यह कहते हैं कि बीते दिनों को एक स्वप्न के समान मानो । तू ने जो कहा वह सच है कि शरीर तो नश्वर है एकमात्र राम ही मानस का मराल है । नश्वर जीवन से विरक्त उनका दृढ़ निश्चय है -

"छोडूँगा गृहस्थ-धर्म और वानप्रस्थ भी,
केवल संन्यास मेरा एक मात्र व्रत है ।
राम का चरित्र और उसकी ही वन्दना,
जीवन का ध्येय बने, यही मेरा मत है ।।"[1]

हमारे सम्मुख प्रस्तुत होनेवाला उनका अन्य रूप है अपने आराध्य के प्रति आस्था रखनेवाले कवि का । वे अवध पुरी जाकर रामचरित लिखने का निश्चय करते हैं और राम-जन्म के पुण्यपर्व के दिन में रचना का शुभारंभ करते हैं । षष्ठ और सप्तम सर्ग से उनके कवि व्यक्तित्व का परिचय मिलता है । रामराज्य तक लिखे तुलसी के मन में यह अन्तर्द्वन्द्व उत्पन्न होता है कि सीता-त्याग का प्रसंग सत्य है या नहीं । इस अन्तर्द्वन्द्व से व्यथित तुलसी को स्वप्न में वाल्मीकि के दर्शन होते हैं । उनके कथन से वे इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि सीता त्याग का प्रसंग सत्य सम्मत नहीं है और वे "मानस" से इस अंग को त्यागने का निश्चय करते हैं ।

इस प्रकार तुलसी के चरित्रोद्‌घाटन में कवि सफल हुए हैं ।

<u>रत्ना</u>

"उत्तरायण" का नायक तुलसी की पत्नी है रत्ना । यद्यपि प्रस्तुत काव्य के मुख्य कथानक के साथ रत्नावली का सीधा संबन्ध नहीं है तो भी इस काव्य के नायक तुलसी के चरित्र को स्थापित करने में निश्चय ही रत्ना का योगदान महत्वपूर्ण है ।

---

1. उत्तरायण - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 43.

इसलिए यद्यपि काव्य के प्रारंभिक अंशों में ही उसके चरित्र का जो रूप काव्य में उभर आया है उसका चित्रण करना उचित होगा । वर्माजी ने पहले पिता के साथ आनेवाली कन्या के रूप में उसका परिचय दिया है । उस लज्जित कन्या का रूप वर्णन वर्माजी ने इस प्रकार प्रस्तुत किया है -

"वह लज्जा से कुछ नमित, शुभ्र सुकुमार गात,
मुस्कान मधुर जैसे उगती है किरण प्रात ।
नवयौवन से अभिषिक्त, नवल तन इस प्रकार,
जैसे ज्योतित हो ज्योत्सना से जल की फुहार ।।"[1]

रत्ना के मुँह से निकले व्यंग्य भरी कथन से प्रेरित होकर तुलसी वासनामय जीवन छोडने का निश्चय करता है । तुलसी के महान बनने का एक मात्र कारण रत्ना का उपदेश ही है । उनके तीखे व्यंग्यका चित्रण वर्माजी के शब्दों में -

"रत्ना का था वह व्यंग्य - "कहाँ तक यह शरीर,
लिप्सा का वाहन होगा ओ मेरे अधीर !
नश्वर तन ! उससे करते हो दिन-रात प्रीति,
यदि यही राम-प्रति रहे, न होगी विश्व-भीति ।।"[2]

अपने इस तीखे कथन से वे पश्चाताप भी करती है -

"अरे, चल पडे इसी क्षण' हाय ! हन्त !
जीवित मैं कैसे रहूँ, तुम्हारे बिना कन्त'
यही जीभ क्यों न जल जाय ! हाय !
क्यों उठी बात !
है अन्धकार, तुम मत जाओ, है अभी रात !"[3]

---

1. उत्तरायण - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 29.
2. वही - पृ: 30.
3. वही - पृ: 34.

पति से अलग जीवन को वह रस हीन मानती है जैसे अलंकार रहित काव्य । पति-वियोग से दुःखी रत्ना का करुण चित्र वर्माजी के शब्दों में -

"भू पर रत्ना थी गिरी, गिरा था केश-भार,
भीगी-भीगी थी भूमि, जहाँ थी अश्रु-धार ।।"[1]

इस प्रकार कन्या और आदर्श पत्नी के रूप में वर्माजी ने रत्ना को इस विवेच्य महाकाव्य में प्रस्तुत किया है ।

रस
--

प्रस्तुत महाकाव्य में शान्त और भक्ति रस की योजना हुई है और शृंगार, करुण और वीर रस की निष्पत्ति स्थान स्थान पर हुई है ।

वासनामय जीवन बिताने वाले तुलसी पर एक दिन उनकी पत्नी तीखी व्यंग्य करती है । उनके कथन से तुलसी के मन में जीवन की क्षण-भंगुरता का बोध होता है और वैराग्य का भाव उत्पन्न होता है । निम्नलिखित पंक्तियाँ शान्त रस की उद्भावना में समर्थ बन गई है ।

"सुख-सेज त्याग मैं उठा, नेत्र में भरे नीर,
जैसे आत्मा दे छोड रूप-गर्वित शरीर ।
संपूर्ण वासना मृग-जल जैसी हुई दूर,
संस्कार राम का जागा-गूँजा नाद-तूर ।।"[2]

यहाँ स्थाई भाव वैराग्य, आश्रय-तुलसी, आलंबन विभाव-शरीर की नश्वरता का बोध, उद्दीपन विभाव-व्यंग्य द्वारा रत्ना का उद्बोध, अनुभाव-सुख-सेज त्याग कर उठना, आँखों में आँसू भरना और संचारी भाव-निर्वेद, राम का स्मरण है ।

---

1. उत्तरायण - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृः 36.
2. वही - पृः 31.

गुरु नर हरि के सत्संग से बालक तुलसी के मन में राम के प्रति भक्ति उत्पन्न होती है। राम-कथा में उसकी आस्था बढ़ जाती है। आस्था इतनी बढ़ जाती है कि वे सारे समय सुमधुर स्वर में राम-कथा गायन करने लगे।[1] विवाह जीवन बितानेवाले तुलसी के मन में रत्ना के कथन से फिर राम भक्ति जाग उठती है और वे गृहस्थाश्रम छोडकर संन्यास ग्रहण करने का निश्चय करते हैं। राम का चरित गान और उसकी वन्दना उनके जीवन का लक्ष्य बन जाते हैं। वे प्रयाग, वाराणसी, काशी, चित्रकूट, बद्रीनाथ आदि तीर्थ स्थानों में भ्रमण करते हैं। प्रयाग पहुँचे तुलसी की दशा उनकी भक्ति की चरम अवस्था है -

"तुलसी ने कर नमन, झुकाया शीश बडे उत्साह से,
श्रद्धा से दृग तरल हो गये अविरल अश्रु-प्रवाह से।
शान्त हो गया हृदय जो कि जलता था अन्तर्दाह से,
देखी भूमि राम के पावन चरण-चिह्न की चाह से।"[2]

यहाँ स्थाई भाव-देव विषयक रति, आलंबन विभाव-भगवान् राम की पुण्य भूमि, उद्दीपन विभाव - राम के पावन चरण चिह्न, अनुभाव-सिर झुकाना, अश्रु प्रवाह और संचारी भाव-उत्साह, हर्ष है।

केवल प्रथम सर्ग में ही श्रृंगार रस की योजना मिलती है। तुलसी और रत्ना के मिलन में श्रृंगार रस का समायोजन हुआ है।

"कुछ झुकी दृष्टि से देखा कन्या का स्वरूप,
जैसे मिल बैठी चारु चाँदनी और धूप।
सिर से सरका-सा वस्त्र कि जैसे पुण्यकाल -
यमुना के तट पर बीत रहा है, हो निढाल।।"[3]

---

1. उत्तरायण - डॉ. रामकुमार वर्मा - 28.
2. वही - पृ: 54.
3. वही - पृ: 29.

यहाँ स्थाई भाव-रति, आलंबन विभाव-रत्ना, उद्दीपन विभाव-लज्जा से सिर झुकाकर रहनेवाली रत्ना का सुन्दर शरीर और उसकी मधुर हास, अनुभाव-रत्ना का दर्शन और संचारी भाव-प्रेम के साथ रत्ना की ओर देखना है ।

तुलसी के चले जाने पर रत्ना की दीन दशा का जो वर्णन वर्माजी ने किया है वह पाठक के मन में करुण रस जगाने में समर्थ है -

"मैं स्तब्ध मौन, पर प्रण मेरा था दुर्निवार,
मैं शयन-कक्ष से चला खोलकर बन्द द्वार ।
भू पर रत्ना थी गिरी, गिरा था केश-भार,
भीगी-भीगी थी भूमि, जहाँ थी अश्रु-धार ।।"[1]

यहाँ स्थाई भाव शोक, आलंबन विभाव-पत्नी को छोड़कर जानेवाला तुलसी, उद्दीपन विभाव-शयन कक्ष का द्वार खोलकर जाना, अनुभाव-भूमि पतन और रोना, और संचारी भाव-विषाद दैन्य है ।

प्रस्तुत महाकाव्य के चतुर्थ सर्ग में वीर रस की योजना हुई है जो दयावीर का उदाहरण है । प्रयाग में स्नान करते समय तुलसी ने एक माँ का कातर स्वर सुना क्योंकि उनकी बेटी नदी में डूब रही थी । उसको बचाने केलिए तुलसी ने जो प्रयास किया वह वीर रस की उद्भावना में सहायक है -

"तभी आर्त्त-ध्वनि उठी - "बह गई मेरी बेटी धार में,
दौडो ! उसे बचाओ !" क्रन्दन डूबा हाहाकार में ।
तुलसी लीन हो रहे थे सुरसरि के वारि-विहार में
चौंक पडे-कितनी करुणा थी माँ के उस चीत्कार में !!
[illegible] [illegible] - प्रवाह की - ओर देखकर ध्यान से,

---

1. उत्तरायण - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 36.

समझ गये, कोई बाला है वस्त्रों की पहिचान से ।
वे न डरे उत्ताल तरंगों के फेनिल उत्थान से,
जल-प्रवाह को चीर बढ़े वे, बढ़े हुए दिनमान से ।।"[1]

यहाँ आलम्बन विभाव - क्रन्दन करनेवाली माँ, उद्दीपन विभाव हाहाकार, करुण चीत्कार, अनुभाव - जल प्रवाह को चीरकर आगे बढना और संचारी भाव निडरता है ।

प्रकृतिचित्रण

वर्माजी ने इस महाकाव्य के नवमसर्ग में प्रकृति-चित्रण बिम्बग्रहण प्रणाली पर किया है । निम्नलिखित पंक्तियाँ पाठक के मन में रात और उसकी नीरवता का चित्र प्रस्तुत करने में सहायक है -

"पक्षी समूह अपने कोटर में
दुबके हैं पाँखें सिकोड़,
सम्पुट आँखों के खग-शावक
हैं चौंक-चीखते सर मरोड़ ।
झोंके समीर के रह-रह कर
अपने छोरों को रहे जोड़,
जुगनू ऊपर-नीचे उड़कर
अपने से ही ले रहे होड़ ।।"[2]

कवि ने रत्ना के गोरे और सुन्दर शरीर का चित्र प्रस्तुत करने के लिए प्रकृति का सहारा लिया है जो वर्ण-साम्य का सरस उदाहरण है -

---

1. उत्तरायण - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 55
2. वही - पृ: 108.

"वह लज्जा से कुछ नमित, शुभ्र सुकुमार गात,
मुस्कान मधुर जैसे उगती है किरण प्रात ।
नवयौवन से अभिषिक्त, नवल तन इस प्रकार,
जैसे ज्योतित हो ज्योत्स्ना से जल की फुहार ।"[1]

यहाँ अलंकार रूप में प्रकृति का सहारा लिया गया है । रत्ना की बाँहों का सौन्दर्य दिखाने केलिए प्रकृति से उपमान चुन लिया है -

"मंजुल मृणाल-सी बाँह, कंठ की बनी माल ।"[2]

यहाँ प्रकृति का मानवीकरण भी मिलता है । अन्धकार को एक लालची के रूप में चित्रित किया है जिसमें मानों लोभ का प्रसार हो गया हो -

"अन्धकार जैसे अँगड़ाई ले फैल गया,
जैसे किसी लालची में लोभ का प्रसार हो ।"[3]

मुनिवृन्द के साथ चित्रकूट पहुँचे राम का चित्रण करते समय कवि ने प्रकृति का संवेदनात्मक रूप में चित्रण किया है । प्रकृति उनके स्वागत करने हेतु फूले हैं, चिड़ियाँ चहक रही हैं -

"लता-बेलि वृक्ष नये-नये फल-पुष्प लेके
स्वागत के हेतु मानो सजे अभिराम थे ।
चातक-चकोर-चक्क, शुक-पिक रुक-रुक
बोलते थे मानो स्वर-युक्त छन्द साम थे ।"[4]

रात की भयानकता को द्योतित करने केलिए प्रकृति का गंभीर रूप में चित्रण किया गया है प्रस्तुत प्रकृति चित्रण का यह अंश कथानक की पूर्व पीठिका के रूप में आती है -

---

1. उत्तरायण - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 29.
2. वही ।
3. वही - पृ: 38.
4. वही - पृ: 63.

अर्ध रात्रि । जन-पथ शून्य, दिशा स्तब्ध है,
वृक्ष जैसे ऊँघते-से छाँह में आकाश की ।
दिग्भ्रमित जुगनुओं के नन्हे-से उर में,
रह-रह दीखती हैं सिसकियाँ प्रकाश की ।"[1]

नायक तुलसी को "काम" (इच्छा) की प्राप्ति हुई है कि वाल्मीकि रामायण में प्रक्षिप्त उत्तरकाण्ड का सही विवेचन करना उनका काम था । इसकी पूर्ति तुलसी के स्वप्न में दिखाई पडनेवाले वाल्मीकि के कथन से होता है ।

वर्माजी ने इस महाकाव्य के प्रारंभ में श्रीरामचन्द्र की वन्दना की है । प्रभु राम से उनके चरित लिखने की कृपा भी माँगी है ।

"उत्तरायण" के नामकरण से यह अनुमान होता है कि कवि के मन में हुए यह प्रश्न कि वाल्मीकि रामायण का "उत्तरकाण्ड" प्रक्षिप्त है या नहीं का उत्तर पाने की यात्रा है । (उत्तर+अयन)

प्रस्तुत महाकाव्य में नौसर्ग हैं वे हैं - स्मृति, त्याग, प्रेरणा, उद्धार, प्रवास, काव्य-रचना (पूर्वार्द्ध) काव्य-रचना (उत्तरार्द्ध), अन्तर्द्वन्द्व और स्वप्न-दर्शन । वर्माजी ने प्रत्येक सर्ग का नामकरण वर्ण्य विषय के आधार पर ही किया है ।

<u>ओ अहल्या</u>

वर्माजी का तीसरा महाकाव्य है "ओ अहल्या" । इसका कथानक पौराणिक है । वर्माजी ने प्रस्तुत महाकाव्य द्वारा मुनिपत्नियों में एक मात्र अहल्या के चरित्र पर लगे कलंक को दूर करने का सफल प्रयास किया है । आगे प्रस्तुत महाकाव्य के महाकाव्यत्व पर विस्तार से विश्लेषण करेंगे ।

---

1. उत्तरायण - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 37.

कथानक

पौरस्त्य एवं पाश्चात्य विद्वानों के अनुसार महाकाव्य का कथानक लोकप्रसिद्ध अथवा ऐतिहासिक होना चाहिए । प्रस्तुत महाकाव्य का कथानक पौराणिक है । इसका कथानक लोक प्रख्यात होने के कारण पाठक इसे सहज ही हृदयंगम कर लेता है । साधारण रूप से महाकाव्यकार अपनी प्रबल और विशिष्ट कल्पना शक्ति द्वारा पौराणिक कथानक में कुछ परिवर्तन करके प्रस्तुत करते हैं । विवेचित महाकाव्य में वर्माजी ने अपनी मौलिक उद्भावना द्वारा कथानक में कुछ परिवर्तन किये हैं । वाल्मीकि रामायण में इन्द्र और अहल्या की भोगवृत्ति की कथा है । लेकिन इस महाकाव्य के अनुसार इन्द्र केवल अहल्या का तन-स्पर्श करता है गौतम द्वारा अहल्या को शाप देने की कथा में प्रसंगानुसार अन्तर है । मूल कथा के अनुसार गौतम उसे पाषाण बन जाने का शाप देता है । लेकिन प्रस्तुत महाकाव्य की नायिका अहल्या स्वयं अपने शरीर को पाषाण जैसा अनुभव करती है ।

प्रजापति के मन में बीती हुई घटनाओं की याद आती हैं । ब्रह्मा ने अपनी विजय पर घमण्ड करनेवाले सुरों की परीक्षा करने का निश्चय किया । उन्होंने यक्ष बनकर अग्नि, वायु और इन्द्र की परीक्षाली । उस परीक्षा में सब हारे गये । इन्द्र के समक्ष उमा प्रकट हुई और उनसे उन्हें यह पता चला कि वह यक्ष स्वयं ब्रह्मा था । उमा ने उन्हें यह समझया कि तुमने शत्रुओं पर जो जीत पाई वह केवल तुम्हारी नहीं । ब्रह्म की शक्ति के कारण तुम उन पर विजय पा सका । उन्हें यह आदेश भी दिया कि अपनी लघु उपलब्धियों पर घमण्ड न कर और उसे प्रभु की कृपा ही समझें । मैं विश्वकर्मा प्रजापति हूँ जो ब्रह्म या यक्ष का ही अंश हूँ । प्रजापति भू देवी से यह कहते हैं कि वे तो तपस्या के लिए जा रहे हैं और मन्वन्तर तक सृष्टि का कार्य तुम संभालो । लेकिन मेरे मन में एक इच्छा शेष रह गई है कि सारे सौन्दर्य को इकट्ठा करके एक विशेष नारी की सृष्टि करें । प्रजापति ने एक ऐसी सुन्दर नारी की रचना करने का निश्चय किया जिसे, देव, दानव या मानव ने कभी न देखा हो । प्रकृति के सारे सौन्दर्य तत्वों को चुनकर एक नारी की सृष्टि की और उसका नाम अहल्या रखा ।

जब इस नारी का स्वरूप निर्मित हो गया तब प्रजापति ने माया से उसका श्रृंगार करने का आदेश दिया । माया ने अपनी पूरी क्षमता से उसका श्रृंगार किया और प्रजापति का प्रणाम करके चली गयी । माया इस इतिहास को मन में न रख सकी । सारे लोक में देवी अहल्या की गाथा प्रचरित हुई । माया के मुख से अहल्या का सौन्दर्य वर्णन सुनकर इन्द्र ने उसे प्राप्त करने का निश्चय किया । उस वक्त प्रजापति तो इस चिन्ता में था कि अहल्या को किसके पास छोडकर वह तपस्या हेतु जाये । प्रजापति के पास इन्द्र का आगमन होता है । इन्द्र को अहल्या का परिचय देते हुए वे अपना निर्णय सुनाते हैं । इन्द्र प्रजापति से अहल्या को प्राप्त करने की उत्कट इच्छा प्रकट करते हुए उसे अपने को सौंपने की प्रार्थना करती है । लेकिन प्रजापति अहल्या को इन्द्र के हाथों में सौंपना उचित नहीं समझता है और वे गौतम को सौंपने का निश्चय प्रकट करते हैं और अहल्या को भी इसकी सूचना देते हैं । अहल्या इन्द्र को धिक्कारती है । प्रजापति अहल्या को साथ लेकर गौतम के आश्रम पहुँचते हैं और उसे वहाँ सौंपकर तपस्या हेतु जाते हैं । अहल्या कभी यह सोचती है कि इतना सौन्दर्य मुझे क्यों दी । उसके मन में इन्द्र और प्रजापति के बीच हुई बातों की भी याद आती है । तपस्या के बाद गौतम के आश्रम में प्रजापति का आगमन होता है । यह समाचार पाकर अहल्या बहुत आनन्दित हो जाती है । सभी आश्रमवासी यथोचित उनका स्वागत करते हैं । प्रजापति अहल्या की शादी के बारे में सोचते हैं । उसको ऐसा पति मिलना चाहिए जो माया से मुक्त हो, तप का अधिकारी हो । वे गौतम से अहल्या की शादी करने का निश्चय करते हैं । आश्रम में विवाह की सारी तैयारियाँ शुरू होती हैं । उधर इन्द्र तो शची पर क्रोध करने लगा और सुरपुरी निष्प्रभ होने लगी । गौतम और अहल्या की शादी संपन्न हुई । प्रजापति उनके साथ कुछ दिन रहकर अपने लोक की ओर प्रस्थान किया । गौतम और अहल्या यज्ञ और याग करके सुख पूर्वक जीवन बिताते हैं और पुत्र शतानन्द का जन्म भी होता है । इन्द्र को छोडकर सभी देवों को उनका यज्ञकार्य शिरोधार्य होता था । अपने पुत्र को गोद में लेकर वह गौतम के मन्त्र पाठ में साथ देती रही । एक दिन इन्द्र अपनी अतृप्त इच्छा की पूर्ति केलिए गौतम के आश्रम में पहुँचते हैं । गौतम ताम्रचूड की ध्वनि सुनकर स्नान हेतु गंगा की ओर निकल पडे । देवराज इन्द्र तो आश्रम में चोर बनकर छिप बैठा था । उसने

मृग-चर्म में लेटनेवाली अहल्या को देखा । अहल्या का सौन्दर्य देखकर वह अपना मन संभाल न सका । अहल्या के सौन्दर्य के प्रति मुग्ध इन्द्र गौतम का वेश धारण करके अन्तर घुस गये । द्वार खोलते ही एक काष्ठ दण्ड जो टिका था पृथ्वी पर ध्वनि करते हुए गिर पडा। अहल्या जाग उठी । गौतम को देखकर उसने पूछा कि "क्या आप कोई वस्तु भूल गये हैं?" गौतम ने यह उत्तर दिया कि वृक्ष पर पक्षियों को पास पास सोते देखकर मेरे मन में काम वासना जाग उठी है । यह सुनकर अहल्या यह प्रश्न करती है कि संयमी, सत्यव्रती आप क्या पक्षियों की शयन-दशा देखकर पूजा छोडकर आए हैं?" "गौतम का वेष धारण किये इन्द्र ने कहा कि जीव धारियों में काम वासना तो समान है । ऐसा कहकर इन्द्र ने अट्टहास किया । लेकिन उनका अट्टहास सुनकर अहल्या शंकित हो जाती है । लेकिन वह बिलकुल गौतम जैसा ही रहता है । अहल्या दृढ़ स्वर से इन्द्र से यह प्रश्न करती है कि मेरे पति जैसे वेष धारण किये तुम कौन हो । वह अपना परिचय देता है कि वह तो इन्द्र है । अहल्या इन्द्र से वापस जाने की प्रार्थना करती है । लेकिन इन्द्र फिर अहल्या से प्रेम का वरदान माँगता है । अहल्या फिर उसको वापस जाने का आदेश देती है । लेकिन इन्द्र अपनी अतृप्त इच्छा की पूर्ति हेतु अहल्या का आलिंगन करने के लिए आगे बढता है और उसका तन स्पर्श करता है । उसे ऐसा अनुभव हुआ कि एक प्रज्वलित ज्वाला से उसका हाथ जल रहा है । अहल्या उसे यह शाप देती है कि इन्द्रियों के अधीन रहनेवाले तुम्हें शान्ति न मिलेगी और सदैव लांछित रहेंगे । वह लज्जित होकर अहल्या से क्षमा माँगता है । इतने में गौतम वापस पहुँचता है और अहल्या सारी घटनायें बताती हुई कहती है -

"मात्र तन स्पर्श किया मेरा काम-भाव से,
इससे शरीर मेरा हो गया पाषाण - सा,
अब यह आपकी क्या, सेवा-योग्य है रहा?"[1]

---

1. ओ अहल्या - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 94.

वह अपने शरीर को भस्म करने की इच्छा प्रकट करती है । गौतम, अपना रूप धारण किये इन्द्र को नपुंसक और विफल हो जाने का शाप देते हैं । गौतम अहल्या को सांत्वना देता है और वे उन्हें "ऋषि नारियों की देवी" मानते हैं । लेकिन अहल्या अपने शरीर को अग्निज्वाला में नष्ट करने का प्रस्ताव रखती है । गौतम उसे पवित्र और पुनीत मानता है । उनके ही शब्दों में -

"देवी ! जानता हूँ मैं
तुम पातिव्रत द्वारा परम पुनीता हो ।"[1]

अहल्या को तप द्वारा मानसिक ग्लानि दूर करने का सुझाव देते हैं और साथ ही यह आश्वासन भी देते हैं कि गुरु विश्वामित्र और लक्ष्मण के साथ आनेवाले श्रीरामचन्द्र के चरण स्पर्श से तुम्हारा शरीर गंगाजल के समान पवित्र बन जायेगी । गौतम अपने आत्म-सत्व की हानि दूर करने हेतु तप करने का निश्चय करता है और यह कहते हैं कि श्रीरामचन्द्र के आगमन पर वे भी वापस आयेंगे । अहल्या राम मन्त्र का जप करती हुई श्रीराम की प्रतीक्षा करती रही । उस पुण्य तपोवन में विश्वामित्र के साथ राम और लक्ष्मण का आगमन होता है । यह प्रशान्त वन देखकर वे यह सोचते हैं कि इस वन में कोई आश्रम होगा । विश्वामित्र उन्हें अहल्या की संपूर्ण कथा सुनाते हैं । लक्ष्मण अहल्या के पास जाकर राम के आगमन का वृत्तान्त सुनाते हैं । अहल्या ने भक्ति के साथ प्रभु चरणों में प्रणाम किया । फिर अहल्या स्वयं अपनी कथा राम से कहती है । फिर प्रेम भाव के साथ अहल्या ने श्रीराम का चरण स्पर्श किया और प्रभु राम ने उन्हें आशीर्वाद दिया । राम से यह वरदान माँगा कि उनके चरणों का वन्दन ही मेरे जीवन का अनुष्ठान हो । प्रभु ने उन्हें वरदान दिया । इस अवसर पर कुछ शिष्य समेत गौतम का आगमन हुआ । उन्होंने भक्ति भाव से प्रभु राम की पूजा की । श्रीराम से आज्ञा पाकर वे अहल्या के साथ चले गये ।

---

1. ओ अहल्या - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 96.

सर्ग बद्धता

प्रस्तुत महाकाव्य द्वादश सर्गों में आबद्ध हैं और उसका नामकरण क्रमशः प्रजापति, सृष्टि, अवतरण, शृंगार, महर्षिगौतम, आगमन, निर्णय, परिणय, तप, इन्द्र, अहल्या और उद्धार है ।

सर्गान्त में भावि कथा की पूर्व सूचना होनी चाहिए । लेकिन कवि ने प्रस्तुत महाकाव्य की रचना में इस नियम का पूर्णतः पालन नहीं किया है । तीसरे, पाँचवें, षष्ठ और आठवें सर्ग में उसके बाद आने वाले सर्गों की पूर्व सूचना नहीं मिलती ।

चरित्रचित्रण

वर्माजी के प्रारंभिक दोनों महाकाव्य "एकलव्य" और "उत्तरायण" नायक प्रधान है । लेकिन उनका यह तीसरा महाकाव्य "ओ अहल्या" नायिका प्रधान महाकाव्य है । प्रस्तुत महाकाव्य का नामकरण इसकी नायिका अहल्या के नाम पर किया गया है । इसका नायक है गौतम । इसमें वर्माजी ने नायक गौतम की अपेक्षा अहल्या को प्रमुखता दी है । प्रस्तुत रचना द्वारा अहल्या के सतीत्व पर लगे कलंक को दूर करना ही उनका लक्ष्य है । विवेचित महाकाव्य में अहल्या को निष्कलंक और आदर्श पतिव्रता के रूप में चित्रित किया है । निश्चय ही अहल्या प्रमुख पात्र की अधिकारिणी है क्योंकि उसका चरित्र आदर्शयुक्त और अनुकरणीय है । महाकाव्य के नायक में चारित्रिक महत्ता आवश्यक है । यह गुण अहल्या में विद्यमान है । इसमें वर्माजी ने एक सुन्दर युवती और पतिव्रता पत्नी के रूप में अहल्या का चरित्रोद्घाटन किया है ।

"अवतरण" सर्ग में अहल्या को सबसे सुन्दर नारी के रूप में चित्रित किया गया है । मायाद्वारा शृंगार किये उसके रूप सौन्दर्य का चित्रण वर्माजी ने सरस शब्दों में किया है -

"भौंहों में थे लिखे काम के दो छोटे-से लेख,
बसी नेत्र की रेखाओं में कुहू निशा की रेख ।
वक्ष-स्थल पर नव प्रभात की कसी कंचुकी कान्त,
नक्षत्रों का हार सजाता था सारा उर-प्रान्त ।"[1]

उनका असीम सौन्दर्य देखकर इन्द्र उसे प्राप्त करने को लालयित हो जाते हैं । एक तरुणी के रूप में वर्माजी ने उनका वर्णन किया है -

"कभी सरोवर के जल में निज,
छाया देख लजाती है ।
कभी पक्षियों के कलरव में,
गाती मधुर प्रभाती है ।।"[2]

इसके बाद अहल्या नव-वधू के रूप में हमारे सम्मुख आती है । वर्माजी ने दुलहिन के रूप में अहल्या का वर्णन सुन्दर और सरस शब्दों में किया है -

"भूर्ज-वृक्ष के वल्कल से
सुकुमार शरीर सजाया था,
कुसुम-भूषणों की सज्जा में
नवल वसन्त समाया था ।।"[3]

अहल्या के चरित्र का उत्कृष्ट पक्ष है पतिव्रता पत्नी का । वह गौतम की अर्द्धांगिनी बनकर तप में भाग लेती है । उनका चित्र वर्माजी के शब्दों में देखिये -

---

1. ओ अहल्या - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 26.
2. वही - पृ: 55.
3. वही - पृ: 61.

"उनके समीप ही देवी अहल्या शोभित हैं ले मौन भाव,
उनकी सस्मित श्री से मानो है दीप्त तपोवन का प्रभाव ।
ऋषि गौतम यदि है अग्नि-रूप, तो स्वाहा-सी उनके समीप,
हैं देवि अहल्या जिनके उर में पातिव्रत का है प्रदीप ।।"[1]

वर्माजी ने इन्हें पुण्य सरोवर माना है । केवल पास पास सोते पक्षियों को देखकर कामवासना के कारण लौटे पति को देखकर (वास्तव में वह इन्द्र है) - जो संयमी, सत्यव्रमी है - उसे अविवेकी ठहराता है, पति के अनुचित बर्ताव देखकर आश्चर्यचकित हो जाती है । गौतम का छद्म वेश धारण किये इन्द्र को पहचानते समय वह बहुत क्रुद्ध हो जाती है । उनकी सतीत्व की श्रेष्ठता के कारण उनका तन स्पर्श करने पर इन्द्र को ऐसा लग रहा है कि मानो उसका हाथ प्रज्वलित ज्वाला से जल रहा हो । उज्वल अहल्या का रूप देखिए -

"देखा उसने कि अग्नि-मूर्ति-सी अहल्या है
जैसे ध्वान्त ध्वंसक धरा का धूमकेतु हो ।
जो कि धूम-धारा धरे धू-धू कर धधके,
और धीरे धीरे धरा ध्वस्त हो के धसके ।।"[2]

इतना ही नहीं वह इन्द्र को शाप भी देती है । गौतम को अहल्या के सतीत्व पर पूर्ण विश्वास है और स्वयं उसे "ऋषि नारियों की देवी" कहा है । इन्द्र द्वारा उनके तन-स्पर्श के कारण वह अपने शरीर को अपवित्र मानती है और उसे अपना शरीर पाषाण जैसे लग रही है और शरीर को अग्निज्वाला में भस्म करना चाहती है । अन्त में पति का कहना मानकर तप द्वारा आत्मग्लानि दूर करने का निश्चय करती है । श्रीराम के चरण स्पर्श से वह कृतार्थ हो जाती है । अहल्या के मुँह से अपनी कथा सुनकर श्रीराम ने उनके सतीत्व की प्रशंसा की -

---

1. ओ अहल्या - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 74.
2. वही - पृ: 93.

"फिर कहा-कि "तुम हो शुद्ध देवि !
तुमने पातिव्रत का प्रमाण
इस भाँति दिया है जिसके साक्षी
होंगे सब वैदिक पुराण ।।"[1]

वर्माजी अहल्या के चरित्रोद्घाटन इस प्रकार करके उनके सतीत्व पर लगे कलंक को सदैव के लिए मिटाने में सफल बन गये ।

महर्षिगौतम

इस महाकाव्य का एक अन्य प्रमुख पात्र है महर्षि गौतम जो अहल्या के पति हैं । वर्माजी ने महर्षि गौतम को आदर्श गुणों से सँवारा है । गौतम के सुचरित्र से प्रभावित होकर प्रजापति तप हेतु जाने के पहले उसे गौतम को सौंप देता है । तपस्या के बाद आनेवाले प्रजापति गौतम को ही अहल्या के योग्य पति के रूप में स्वीकार करते हैं । वे अपने आनेवाले भाग्य पर शंकित होकर पूजा करने केलिए जाते हैं और अहल्या से साथ चलने का प्रस्ताव रखते हैं । अपना छद्म वेश धारण करके अहल्या के साथ बुरा बर्ताव करने केलिए आए हुए इन्द्र से वे क्रुद्ध हो जाते हैं और उसे शाप भी देते हैं -

"दुर्मते ! तू मेरा वेश रख कर आया है,
हो जा रे नपुंसक तू शीघ्र ही "विफल" हो,
तेरी क्षुद्र वासना का मात्र यही दण्ड है,
देह पर नारी-चिह्न अंकित सहस्र हो ।"[2]

वे एक आदर्श पति हैं । इसीलिए वे अपनी पत्नी के सतीत्व पर शंका नहीं करते बल्कि उसके सतीत्व की प्रशंसा करते हैं । वे अहल्या को अपने शरीर को भस्म कर देने से रोकते हैं और उसे एक माता के दायित्व का पालन करने का आदेश भी देते हैं ।

---

1. ओ अहल्या - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 114.
2. वही - पृ: 95.

इन्द्र के प्रति क्रोध करने से आत्म-सत्व की जो हानि हुई उसे दूर करने केलिए तप करने का निश्चय करते हैं । श्रीराम के आगमन के वक्त वे लौट आते हैं और अपनी पत्नी के साथ वापस चले जाते हैं ।

प्रस्तुत काव्य में अहल्या और गौतम के अतिरिक्त वर्माजी ने इन्द्र और प्रजापति जैसे दो अन्य पात्रों का परिचय भी यत्र तत्र दिया है । किन्तु उनके चरित्र को विकसित होने का अवसर काव्य में प्राप्त नहीं हुआ है ।

प्रकृति चित्रण

प्रस्तुत महाकाव्य में स्थान स्थान पर प्रकृति चित्रण की योजना हुई है । आगे इस का विश्लेषण करेंगे ।

पंचम सर्ग का आरंभ वर्माजी ने प्रकृति चित्रण के माध्यम से शुरू किया है । इसमें प्रकृति का आलंबन रूप में चित्रण किया है । निम्न लिखित पंक्तियाँ पाठक के मन-तट पर प्रातः कालीन प्रकृति का सुन्दर चित्र खींचने में सक्षम है -

"सद्यः विवाहिता की लज्जा सा,
नवल प्रभा का है प्रसार ।
पल्लव-पल्लव में लगी अरुण,
किरणों की पतली-सी किनार ।।"[1]

गौतम के आश्रम में दिखाई पडने वाली पक्षियों की नामावली भी प्रस्तुत करते हैं । नवम सर्ग में गौतम और अहल्या के तप का वर्णन है । वर्माजी ने प्रस्तुत सर्ग के आरंभ में प्रकृति को पृष्ठभूमि के रूप में चित्रित किया है -

---

1. ओ अहल्या - डॉ॰ रामकुमार वर्मा - पृ: 37.

"रवि - कोर उठी प्राची में जैसे ॐ रूप,
किरणें फैलीं जैसे कि आरती गयी घूम ।
तरु-तरु की स्वर्णिम शिखा वायु की लहर सहित
आन्दोलित होकर अपने सुख में उठी झूम ।।"[1]

"इन्द्र" सर्ग के आरंभ में प्रकृति का दैवी संकेत के रूप में वर्णन मिलता है जिससे आनेवाली अशुभ घटना का कुछ संकेत मिलता है ।

"पक्षी सब सो गये हैं निज निज नीडों में,
जैसे भाग्य सोता है भविष्य के अँधेरे में ।
अध-सोया पक्षी चौंक, चीख भर लेता है,
जैसे किसी क्रूर ने ही चीर दिया शून्य को ।"[2]

निम्नलिखित पंक्तियाँ प्रातः कालीन लालिमा से युक्त, खिले हुए पुष्पों से अलंकृत, लताओं, सुगन्धित मन्द हवा, ओसों से लिपटे हुए पल्लवों से युक्त प्रकृति का बिंब प्रस्तुत करने में सक्षम हुआ है -

"नन्दन कानन की भाँति प्रफुल्लित
लगता है यह वन-विभाग ।
स्वागत करने के हेतु सुरभिमय
बहा मन्द शीतल समीर ।
सिंच गया पल्लवों में मोती-सा
अर्घ्य हेतु है ओस-नीर ।"[3]

---

1. ओ अहल्या - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 73.
2. वही - पृ: 76.
3. वही - पृ: 101.

परिणय के लिए सुसज्जित अहल्या का चित्रण करते समय कवि ने अंजन युक्त उनकी आँखों का उपमान प्रकृति से इस प्रकार लिया है जिसमें प्रकृति का आलंकारिक रूप में चित्रण मिलता है -

"नेत्रों में पतला अंजन
जैसे कि राहु की रेखा हो,
शीतल दृष्टि श्वेत कमलों से,
जैसे खुलकर देखा हो ।।"[1]

उपर्युक्त पंक्तियों में अहल्या की आँखों की तुलना दो उपमानों से की है । उनकी आँखों में लिपटे अंजन की तुलना राहु की रेखा से और उनकी विशाल आँखों की तुलना श्वेत कमल से की है । उषा देवी को एक चित्रकारी के रूप में मानवीकरण किया है जो प्रभात का चित्र खींचती हो -

"उषा देवी ने खींची थी मंगल प्रभात की रेखा,
आश्रम ने अपने भविष्य का नया चित्र था देखा ।।"[2]

"अहल्या" तथा "उद्धार" सर्ग में वर्माजी ने संवेदनात्मक रूप में प्रकृति का वर्णन किया है -

नभ श्वेत हो गया था, उषा देवी पूर्व में,
भाग्य का विधान देख विस्मित-सी हो गयी,
नव रश्मि से उन्होंने तापसी अहल्या को,
धैर्य का अमोघ वरदान मानों दे दिया ।।"[3]

उषा देवी ने तापसी अहल्या को धैर्य का अमोध वरदान प्रदान किया है ।

---

1. ओ अहल्या - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 62.
2. वही - पृ: 51.
3. वही - पृ: 100.

प्रस्तुत महाकाव्य का लक्ष्य "काम" की प्राप्ति है । कवि का लक्ष्य है मुनिपत्नियों में एकमात्र अहल्या के सतीत्व पर लगे कलंक को दूर करना । अपनी मौलिक उद्भावना द्वारा कवि इस प्रयत्न में सफल हुए हैं ।

प्रस्तुत महाकाव्य में वर्माजी ने पवन तनय हनुमान जी की वन्दना की है और उनसे अपने काव्य का पूर्ण और सफल अनुष्ठान होने का आशीर्वाद माँगा है ।

इस महाकाव्य का नामकरण वर्माजी ने इसके प्रमुख पात्र अहल्या के आधार पर किया है ।

वर्माजी ने हर सर्ग का नामकरण इसके वर्ण्य विषय के आधार पर किया है ।

निष्कर्ष

वर्माजी के तीनों महाकाव्यों के विश्लेषण से इनके महाकाव्यों में कुछ विशेषताएँ पायी जाती हैं । महाकाव्य की रचना के लिए आचार्य विश्वनाथ द्वारा स्वीकृत नियमों का अधिकांशतया पालन वर्माजी ने किया है । नायकत्व की दृष्टि से देखें तो वर्माजी ने "एकलव्य" और "ओ अहल्या" महाकाव्य में विश्वनाथ के लक्षण का उल्लंघन किया है । प्रथम में निषादपुत्र एकलव्य को नायकत्व प्रदान किया है और दूसरे महाकाव्य में मुनिपत्नी अहल्या को प्रमुख पात्र बनाया है । प्रथम में उनकी राष्ट्रीयता और मानवतावादी विचार धारा और दूसरे में नारी के प्रति उनकी श्रद्धा और सम्मान की भावना लक्षित होती है ।

"ओ अहल्या" महाकाव्य की उल्लेखनीय दो शिल्पगत विशेषताएँ हैं । एक तो इसकी प्रारंभिक "भूमिका" अहल्या के नाम पर पत्र के रूप में है । दूसरी विशेषता है "मंगलाचरण" के बाद और प्रथम सर्ग के पूर्व "प्रस्तावना" नामक अंश का प्रस्तुतीकरण जिसमें इस काव्य से संबन्धित कुछ मौलिक विचार कवि प्रकट करते हैं ।

भारतीय संस्कृति के प्रति कवि की श्रद्धा एवं आस्था कथानक के चुनाव की दृष्टि से उनके महाकाव्यों की विशेषता है । तीनों कथानकों का आधार पौराणिक है । भारतीय संस्कृति के अनुसार गुरु का स्थान सर्वश्रेष्ठ है । "महाभारत" में एकलव्य द्वारा स्वयं गुरुदक्षिणा के रूप में दक्षिणांगुष्ठ माँगने से आचार्य द्रोण के चरित्र पर कलंक लग गया है । वर्माजी ने अपनी मौलिक उद्भावना द्वारा आचार्य द्रोण पर लगे कलंक को दूर करके "आचार्य" शब्द को लांछन से मुक्त किया । वाल्मीकि रामायण का उत्तरकाण्ड प्रक्षिप्त है या नहीं इसका विवेचन दूसरे महाकाव्य "उत्तरायण" का लक्ष्य है । मुल वाल्मीकि रामायण में राम का जो उदात्त चरित्र है वह प्रक्षिप्त उत्तरकाण्ड में विकृत हो गया है । वर्माजी ने अपनी मौलिक उद्भावना द्वारा यह स्थापित किया है कि "उत्तरकाण्ड" प्रक्षिप्त है । तीसरे महाकाव्य "ओ अहल्या" की रचना द्वारा वर्माजी ने मुनि पत्नियों में एकमात्र अहल्या के सतीत्व पर लगे कलंक को दूर करने का प्रयास किया है । इस प्रकार कवि ने अपने महाकाव्यों द्वारा भारतीय संस्कृति के महान चरित्रों को उचित सम्मान देते हुए उनकी पुनः प्रतिष्ठा की है ।

शिल्प की दृष्टि से उनके महाकाव्यों की एक उल्लेखनीय विशेषता संवादशैली की योजना है जो तीनों महाकाव्यों - "एकलव्य", "उत्तरायण", "ओ अहल्या" - में दृष्टव्य हैं । यह शायद् वर्माजी के एकांकी नाटककार व्यक्तित्व का प्रभाव ही होगा ।

अध्याय – तीन

रामकुमार वर्मा के खण्डकाव्यों का आलोचनात्मक अध्ययन

जहाँ महाकाव्य के स्वरूप, लक्षण और तत्वों के संबन्ध में संस्कृत तथा हिन्दी के आचार्यों ने विशद विवेचन किया है वहाँ खण्डकाव्य के लक्षण तथा स्वरूप संबन्धी अध्ययन पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं है । विद्वानों ने खण्डकाव्य के लिए निम्नलिखित लक्षणों को स्वीकार किया है –

1. खण्डकाव्य में जीवन की किसी विशेष घटना या पक्ष का चित्रण होता है ।
2. खण्डकाव्य का कथानक महाकाव्य के समान ख्यात या इतिहास प्रसिद्ध होना अनिवार्य नहीं है । इसका कथानक काल्पनिक भी हो सकता है ।
3. इसका चरित्र कभी पौराणिक, कभी ऐतिहासिक और कभी काल्पनिक भी होता है ।
4. प्रकृति चित्रण की योजना यथास्थान होती है ।
5. कुछ खण्डकाव्यों में बीच में गीत योजना मिलती है ।

आगे उपर्युक्त लक्षणों के आधार पर वर्माजी के खण्डकाव्यों का विश्लेषण करेंगे । उन्होंने पाँच खण्डकाव्य लिखे हैं जो क्रमशः "वीर हमीर" "चितौड की चिता", "निशीथ", "संत रैदास" और "बालिवध" हैं ।

वीर हमीर

रामकुमार वर्माजी द्वारा लिखित प्रथम खण्डकाव्य है "वीर हमीर" । वर्माजी ने सन् 1298 ई. में अलाउद्दीन और वीर हमीर के बीच हुए ऐतिहासिक संग्राम को आधार मानकर "वीर हमीर" की रचना की । प्रस्तुत रचना के माध्यम से वर्माजी ने हमीर की

शरणागत वत्सलता और युद्ध वीरता का परिचय दिया है । रचना के "परिचय" शीर्षक भाग में वर्माजी ने अपना लक्ष्य भी प्रकट किया है - "मुझे विश्वास है कि इस खण्डकाव्य से हमारे नव युवकों के मन में आत्म-सम्मान, देश-भक्ति, आत्मोत्सर्ग, साहस और वीरता के भाव उदित होंगे । वे भारतीय गौरव के प्रति सजग रहते हुए कर्म क्षेत्र में आगे बढ़कर अपने साहस और उदात्त चरित्र का परिचय दें ।"[1] प्रस्तुत रचना का प्रेरक बिन्दु है वीर-पूजा की भावना ।

कथानक

वर्माजी द्वारा लिखित प्रस्तुत खण्डकाव्य "वीर हमीर" का कथानक ऐतिहासिक है । रणथम्भौर नरेश हमीर शरणागत, धीर, वीर और शक्तिशाली राजा हैं । एक दिन वे दरबारियों के साथ बैठे थे । उस समय दुःखी मंगोल वहाँ पहुँचा और हमीर से शरण की भीख माँगा । मंगोल अलाउद्दीन का सरदार था और किसी अपराध के कारण उसे मृत्युदण्ड दिया है । हमीर ने मंगोल को सुरक्षा का वचन दिया । यह समाचार सुनकर अलाउद्दीन क्रुद्ध हुए और दूत के माध्यम से यह सन्देश देते हैं कि यदि हमीर मंगोल को देकर उससे क्षमा न माँगे तो वह अवश्य रणथम्भौर पर आक्रमण करेगा । अलाउद्दीन का सन्देश सुनकर हमीर क्रुद्ध हो जाते हैं और दूत को यह आदेश देते हैं कि इन धमकियों से आर्य नहीं डरेंगे और यह भी कहा कि उसने मंगोल को जो वचन दिया है वह कभी झूठ न हो सकता । दूत के मुँह से सारी कथा सुनकर वे सारी तैयारी के साथ रणथम्भौर पर आक्रमण करने के लिए निकल पड़े । हमीर ने सैनिकों को देश की रक्षा केलिए अपने प्राण तक न्योछावर करने का आदेश दिया और उनमें आत्मविश्वास जगाया । सारी राजपूत सेना अपने देश की रक्षा हेतु कटि बद्ध होकर युद्ध क्षेत्र में खड़ी रही । उनका मन आत्मविश्वास से भरा था । आर्य और यवन सेना के बीच घोर संग्राम हुआ । राजपूतों ने अपने अलौकिक शक्ति-शौर्य से यवन सेना पर विजय प्राप्त की । बीच में

---

1. वीर हमीर - "परिचय" - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 14.

अचानक एक घटना घटित हुई जिससे राजपूतों की स्थिति बिलकुल पलट गई । हमीर का सचिव "सरजन" बडा दुष्ट था । आर्य सेना की वीरता देखकर वह असन्तुष्ट बन गया । जिस समय शत्रुसेना पराभव से भ्रमित होने लगा उस समय कृतघ्न सरजन दुष्प्रभावों में पड गया । वह विश्वासाघाती सरजन शत्रुपक्ष में जा मिला और अलाउद्दीन से यह कहा कि आप निश्चय ही दुर्ग तुडवा सकते हैं और मुझे अपना दास मानिए । आपकी सेना अब विजय प्राप्त करेंगी और दुर्ग पर आपकी ध्वजा फहरायेंगी । सरजन की बात सुनकर अलाउद्दीन ने सैनिकों को फिर युद्ध के लिए तैयार होने का आदेश दिया । सरजन का कुतंत्र जानकर सब दुःखी हुए । उन्हें यह मालूम हुआ कि इससे सारा रहस्य खुल जायेगा और रणथम्भौर पर यवन ध्वजा फहरायेगी । हमीर ने सैनिकों को अलाउद्दीन का सामना करने का आदेश दिया और नारियों से यह अनुरोध किया कि यदि युद्ध में उनकी हार हो जाय तो जौहर व्रत का पालन करके अपने प्राणों को न्योछावर करें । हमीर ने सारी जनता में स्वाभिमान की याद दिलाते हुए यह मत प्रकट किया कि क्षण के लिए भी दास रहना नहीं चाहते । मंगोल ने हमीर से यह प्रार्थना की कि उन्हें शीघ्र ही दास को दे दें क्योंकि उनके कारण ही देश में रक्त की नदियाँ बह रही है । हमीर इसकेलिए तैयार नहीं थे क्योंकि वे अपने वचन पर अडिग रहना चाहते थे । युद्ध के लिए शरीर को शस्त्रादिकों से सजाने केलिए हमीर आनन्द के साथ महल पहुँचे । हमीर ने रानी से सारी घटनायें बतायी और यह आशा प्रकट की कि यदि युद्ध में उनकी हार हुई तो वह सारी वेष भूषा के साथ जौहर व्रत का पालन करें । उसने आनन्द के साथ उनका प्रस्ताव स्वीकार किया । हमीर रानी से बिदा लेकर युद्ध क्षेत्र की ओर प्रस्थान किए । घोर संग्राम हुआ । आर्य सेना के साथ युद्ध करते शत्रु-दल पीछे हटने लगा । जब अलाउद्दीन को यह मालूम हुआ कि आर्यसेना पर विजय प्राप्त करना मुश्किल है तब अलाउद्दीन ने हमीर को मित्रता का सन्देश भेजा । युद्ध का अन्त हुआ । दोनों दलों के बीच मैत्री स्थापित हुई । अलाउद्दीन ने हमीर की ध्वजा ली और हमीर ने अलाउद्दीन की । आर्य सेना यवन-ध्वजा लेकर आनन्द के साथ लौटी । आर्यदल ने ज़ोर से हमीर का जयघोष कर दिया । दूर से ही यवन झंडा देखकर सबने यह निश्चय किया कि युद्ध में शत्रुदल की जय हुई है । यह जानकर सारी नारियाँ जौहर के लिए तैयार होने लगी । वे पूर्ण श्रृंगार के साथ आयीं, चिता को

प्रज्वलित किया । मातृभूमि की वन्दना करते हुए, मातृ-भू की जय ध्वनि करती हुई अनल में मिल गई और उन्होंने अपना नाम अमर बनाया । हमीर सेना सहित सहर्ष रणथम्भौर जा पहुँचे । लेकिन जब उन्होंने यह सुना कि नारियों ने सहर्ष जौहर का पालन किया तब वे दुःखी हुए । स्वयं किये भूल से दुःखी होकर वे अपने कर से सिर काट डाले । इस प्रकार उस माथ से बलि-वेदिका सज्जित हुई । भव्य भारत का वह प्रभायुत रत्न खो गया यह करुण समाचार सुनकर अलाउद्दीन दुःखी हुए । अलाउद्दीन ने दुष्ट सरजन को सज़ा दी जिसके कारण ही ये बातें घटीं और मंगोल को आश्रय दिया । जल्दी ही रणथम्भौर को प्रेम सन्देश भेजा ।

अंत में कवि ने हमीर का गुणगान किया है । कवि ईश्वर से यह विनय करते हैं कि धीर और वीर हमीर जैसे ओजस्विनी सन्तान से देश का उत्थान हो जाय । लेकिन ऐसी सर्वनाशक भूल कभी न हो जाय । आपकी शुभ दृष्टि भारत देश पर अनुकूल हो जाय ।

चरित्रचित्रण

खण्डकाव्य का चरित्र कभी पौराणिक या इतिहास प्रसिद्ध होता है और कभी कभी काल्पनिक भी होता है । प्रस्तुत खण्डकाव्य के पात्र हमीर और अलाउद्दीन ऐतिहासिक पात्र हैं । अन्य पात्र हैं मंगोल और सरजन । हमीर प्रस्तुत खण्डकाव्य का नायक है । इसमें हमीर के जीवन की महत्वपूर्ण घटना का चित्रण ही मिलता है । काव्य में निम्न रूपों में उसके चरित्र का विकास हुआ है ।

सबसे पहले हमीर का शरणागत रूप ही प्रस्तुत हुआ है । दीन हीनों के प्रति उसके मन में विशेष ममता है । जब राज्य चर्चा चलते समय एक दीन व्यक्ति का क्रन्दन सुनाई पड़ा तब एक दास ने आकर यह सूचना दी कि एक व्यक्ति आया है जो बहुत दुःखी है । उसने दूत को जो उत्तर दिया वह दीन हीन के प्रति उनकी विशेष आस्था का परिचायक है -

"दीन-हीनों को सदा सुख से अपना मैंने किया ।।
शीघ्र जाओ, भेज दो उसको अभी तुम हर्ष में ।
आज भी कुछ शेष है "उपकार" भारतवर्ष में ।।"[1]

हमीर दीन दुःखियों को बचाना अपना धर्म मानते हैं । शरणागतों की रक्षा करते समय यदि तन कट जाये तो भी वे पीछे हटना अपमान मानते हैं । मंगोल को अभयदान देने के कारण उसे अलाउद्दीन से युद्ध करना पडा । स्वयं मंगोल के कहने पर भी वे उसे अलाउद्दीन के हाथ में वापस देना बुरा मानते हैं ।

उनके चरित्र का अन्य गुण है वीरता । वे अलाउद्दीन की धमकियों से नहीं डरते और उसे युद्ध के लिए चुनौती देता है । दूत से वे यही कहते हैं -

"उस अलाउद्दीन से जाकर अभी कहना वहीं ।
धमकियों से यह वीर हमीर हुजूर ! डर सकता नहीं ।।
युद्ध को तैयार हो तो आर्य भी तैयार हैं ।
शत्रु - शोणित केलिये प्यासी हुई तलवार है ।।"[2]

वे अपने प्रभाव पूर्ण वाणी द्वारा सैनिकों को धीर बनाते हैं और उन्हें आत्मविश्वास प्रदान करते हैं -

"जय ! जय ! वीरो ! उत्साह तुम्हारा कवच बन गया है कठोर,
यह सेना, सेना नहीं, वीरता की हुँकृति की है हिलोर ।
बिजली की तुम में तडप, भले ही जग समझें तुमको किशोर,
जिस ओर तुम्हारे चरण बढ़े, है विजय वीश्वर ! उसी ओर !"[3]

---

1. वीर हमीर - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृः 5.
2. वही - पृः 20.
3. वही - पृः 38.

आर्यदल ने अपनी वीरता से शत्रुपक्ष को पराजित किया । अपने सचिव सरजन के षड्यन्त्र के कारण उन्हें एक बार फिर अलाउद्दीन का सामना करना पडा । हमीर के युद्ध का वर्णन वर्माजी के शब्दों में -

"धीर वीर हमीर भी निज शत्रुओं को मारते ।
सामने जो दिख पड़े उसको वहीं संहारते ।।"[1]

शत्रु सेना जो उनसे भी अधिक प्रबल है फिर भी अपने युद्ध कौशल द्वारा उन्हें हराया ।

हमीर के चरित्र की सबसे महत्वपूर्ण पहलू है उनके स्वाभिमान का, देश-प्रेम का । हमीर स्वाभिमानी व्यक्तित्ववाला वीर राजा है । उन्हें अपने वंश का गौरव है । अलाउद्दीन के दूत को उसने जो उत्तर दिया वह स्वयं उनके ही शब्दों में -

"जन्म मैं ने है लिया किस वंश में यह जान ले ।
आर्य की सन्तान को अब भी तनिक पहिचान ले ।।"[2]

शत्रुपक्ष से युद्ध करके वीरगति प्राप्त करना ही अच्छा मानते हैं लेकिन कभी भी शत्रु का दास बनकर जीना बुरा मानते हैं -

"युद्ध में हम शौर्य दिखला देश पर बलि जायेंगे ।
किन्तु जीवित रह जगत में दास क्या कहलायेंगे ?"[3]

वे देश केलिए मरना सौभाग्य समझते हैं । जब उन्हें सुरजन के दुश्चरित्र के कारण अलाउद्दीन का फिर सामना करना पडा तब वे राजपूत नारियों के सामने यही प्रस्ताव रखते हैं कि यदि युद्ध में उनकी हार हो जाय तो सारी राजपूत नारियाँ जौहर व्रत का पालन की जाय । इस प्रसंग में उनके स्वाभिमानी व्यक्तित्व का रूप भी उभर आते हैं -

---

1. वीर हमीर - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 69.
2. वही - पृ: 20.
3. वही - पृ: 33.

"क्योंकि हम सब आर्य हैं, स्वाधीन रहना चाहते ।
"हम तुम्हारे दास हैं अब" यह न कहना चाहते ।।
स्वर्ग के वैभव सभी चाहे हमारे पास हों ।
पर नहीं यह चाहते - क्षण के लिए भी दास हों ।।"[1]

मंगोल अपने को इस युद्ध का हेतु मानता है । इसलिए वह हमीर से यह विनय करता है कि उसे अपने शत्रु को दे दीजिए । आत्मगौरव से पूर्ण वाणी में उन्होंने उत्तर दिया -

"मैं तुम्हें दे दूँ कभी मंगोल ! हो सकता नहीं ।
क्या मुझे भी तोड़ते निज वचन देखा है कहीं ?
शत्रु को दे दूँ तुम्हें - भोगूँ सभी वैभव यहाँ ।
फिर भला मेरा बताओ क्षत्रियत्व रहा कहाँ ?
प्राण रहते तक कभी कायर कहाऊँगा नहीं ।
दूध जननी का कभी वीरो ! लजाऊँगा नहीं ।"[2]

अन्त में राजपूत नारियों के जौहर का समाचार सुनकर दुःखी होकर वे निज हाथ से अपना सिर काट डालते हैं । इस प्रकार पाठक के मन में प्रणपूर्ति में अडिग रहनेवाले आर्य, वीर योद्धा और स्वाभिमानी के रूप में उनका व्यक्तित्व उभर आते हैं ।

प्रस्तुत खण्डकाव्य का अन्य प्रमुख पात्र है अलाउद्दीन । हमीर के प्रति-नायक के रूप में उनका इस खण्डकाव्य में अनन्य स्थान है । वह तो शक्तिशाली शासक है । यह समाचार सुनकर वह क्रुद्ध हो जाता है कि जिस मंगोल को उन्होंने मृत्युदण्ड दिया था उसे हमीर ने अभय दान दिया है । वह दूत द्वारा यह सन्देश भेजता है कि यदि वह मंगोल को वापस नहीं दे तो युद्ध के लिए तैयार रहना । वीर योद्धा है, स्वाभिमानी है ।

---

1. वीर हमीर - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 52.
2. वही - पृ: 53-54.

वह अपने सैनिकों में धैर्य और आत्मविश्वास जगाकर युद्ध के लिए तैयार होता है । प्रबल सेना होने पर भी उसे हार स्वीकार करना पडा । हमीर के एक कृतघ्न सचिव की सहायता से वह फिर युद्ध करने केलिए तैयार होता है । वह तो नीति-कुशल है । जब उसे यह मालूम होता है कि युद्ध में उनकी हार निश्चय है तब हमीर के सामने संधि का प्रस्ताव रखता है और मैत्री स्थापित करता है । वह तो एक अच्छा मित्र है । जब उसे यह खबर मिलता है कि हमीर अपनी भूल के कारण स्वयं आत्महत्या कर डाली है तब वह बहुत दुःखी हो जाता है और रणथम्भौर को प्रेम सन्देश भेजता है । वह सुरजन को सज़ा देती है और मंगोल को आश्रय देता है । इस प्रकार वर्माजी ने अलाउद्दीन को स्वाभिमानी, वीर योद्धा, नीति-कुशल, अच्छे मित्र के रूप में चित्रित किया है ।

इस खण्डकाव्य के अन्य पात्र हैं मंगोल, सुरजन, रणधीर । प्रस्तुत कथानक में इनका स्थान उतना महत्वपूर्ण नहीं है ।

रस

प्रस्तुत खण्डकाव्य में प्रमुख रस के रूप में वीर रस की योजना हुई है । इसका कथानक हमीर और अलाउद्दीन के बीच हुए वाग्युद्ध, आक्रमण और युद्ध से संबद्ध होने के कारण वीर इस से ओतप्रोत है । प्रथम सर्ग "शरणागत" और "अन्त" सर्ग की कुछ घटनाएँ पाठक के मन में करुण रस को निष्पन्न करती है ।

"युद्ध" सर्ग में हमीर और अलाउद्दीन के बीच हुए युद्ध का वर्णन वीर रस के उद्रेक में सहायक है ।[1] आठवें सर्ग में पुनः हमीर और अलाउद्दीन के बीच हुए युद्ध का जो वर्णन है वह भी वीर रस के उद्रेक में सफल बन गया है -

---

1. वीर हमीर - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 45.

"पकड लो" "अब मार डालो" शब्द सुन पडने लगे ।
वीर सैनिक उभय-दल के शौर्य से लडने लगे ।।
रुंड-मुंड अनेक भू पर शीघ्र कट गिरने लगे ।
वीर गण उत्कर्ष से रणभूमि में फिरने लगे ।।
धीर वीर हमीर भी निज शत्रुओं को मारते ।
सामने जो दिख पड़े उसको वहीं संहारते ।।
घूमते रण में अभय हो आर्य-दल के संग में ।
थे अनेकों घाव यद्यपि रक्त-रंजित अंग में ।"[1]

यहाँ आलंबन विभाव-हमीर, उद्दीपन विभाव-शत्रुपक्ष का कोलाहल, अनुभाव-शत्रु पक्ष का संहार कर आगे बढना, संचारी भाव-निडरता, उग्रता आदि हैं । इस प्रकार इन विभाव, अनुभाव और संचारी भावों के संयोग से वीर रस की निष्पत्ति हुई है ।

प्रथम सर्ग में हमीर के दरबार में आये मंगोल की दशा करुण रस की उद्भावना में सक्षम है -

"व्यक्ति आया सामने क्रन्दन मचाता जोर से ।।
धीर वीर हमीर के पग पर दुखित हो जा गिरा ।
शोक से सन्तप्त था ही - रुक गई उसकी गिरा ।।
सिर खुला था पूर्ण, उसके वस्त्र अस्त-व्यस्त थे ।
क्यों न हो' उस समय उसके भाग्य-रवि जब अस्त थे ।"[2]

इस छन्द में स्थाई भाव-शोक, आलंबन विभाव -मंगोल, उद्दीपन विभाव - अलाउद्दीन द्वारा दी गई दंड की स्मृति, अनुभाव - खुला सिर, अस्त-व्यस्त वस्त्र, भूमि पतन और संचारी भाव-विषाद हैं ।

----

1. वीर हमीर - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 68-69.
2. वही - पृ: 6-7.

राजपूत नारियों की जौहर व्रत का समाचार सुनकर हमीर के मुख से निकले उद्‌गार पाठक के मन को करुण रस से डुबाने में सक्षम है ।

प्रकृति चित्रण

प्रस्तुत खण्डकाव्य में प्रसंगानुसार दो तीन स्थानों पर प्रकृति का मनोहारी चित्रण प्रस्तुत किया गया है । "युद्ध" सर्ग का आरंभ प्रकृति वर्णन से हुआ है । इस सर्ग का कथानक आर्य दल और अलाउद्दीन के बीच हुए संग्राम का है । इसके प्रारंभ में वर्माजी ने प्रकृति का चित्रण आलंबन रूप में किया है । प्रातः कालीन प्रकृति वर्माजी की दृष्टि में -

"रात्रि बीती, पूर्व के आकाश में लाली हुई ।
मन्द सुरभित वायु भी मन मोहने वाली हुई ।।
चन्द्र निष्प्रभ हो गये तारे सभी बुझने लगे ।
मधुर कंठों से सुखद कलरव सुनाते खग जागे ।।"[1]

सूरज की लाल किरणों से युक्त पूर्व दिशा, सुरभित वायु का मन्द प्रवाह और चिडियों के मधुर कलरव से युक्त प्रातः कालीन प्रकृति का चित्रण आलंबन रूप में किया गया है । उपर्युक्त पंक्तियाँ आगामी घटनाओं की पूर्व सूचना भी प्रस्तुत करती हैं ।

"निराशा" सर्ग में प्रकृति का संवेदनात्मक चित्रण मिलता है । जिस प्रकार वीर आर्यों का मन दुःख से भरा था उसी प्रकार तत्कालीन प्रकृति भी निष्प्रभ दीखती थी। प्रकृति का चित्रण देखिए -

---

1. वीर हमीर - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 39.

"व्योम में नक्षत्र-गण का तेज बिलकुल मन्द था ।
थी उषा की लालिमा अरविन्द का बन बन्द था ।।
चन्द्र टेढ़ा मुख लिये नभ में प्रभा से हीन थे ।
चक्रवाक प्रभात लख कर हर्ष में लवलीन थे ।।"[1]

आसमान में नक्षत्रों का फीका प्रकाश फैल रहा है, उषा की लालिमा कमल के लाल रंगों में सीमित हो गया, चन्द्रमा आसमान में तेजोहीन दिखाई देता था । सारी प्रकृति अपने वैभव से हीन दिखाई पडने लगी जिस प्रकार वीर आर्यों का मन दुःख से पीडित था ।

सर्गबद्धता

सर्गबद्धता खण्डकाव्य का अनिवार्य लक्षण नहीं है । लेकिन वर्माजी ने प्रस्तुत खण्डकाव्य में सर्गबद्धता का पालन किया है । इसमें ।। सर्गों की योजना हुई है जो क्रमशः "शरणागत", "वाग्युद्ध", "तैयारी", "उत्कर्ष", "युद्ध", "निराशा", "मिलन और बिदा", "विजय" और भूल", "जौहर", "अन्त", "विनय" हैं । प्रत्येक सर्ग का नाम वर्ण्य विषय के आधार पर रखा गया है और हर सर्ग का आकार छोटा ही है । खण्डकाव्य का नामकरण इसके नायक हमीर के आधार पर किया गया है ।

खण्डकाव्य की अन्य विशेषता है बीच में गीत योजना।"उत्कर्ष" और "जौहर" सर्ग में वर्माजी ने गीत योजना की है ।

संपूर्ण काव्य गीतिका छन्द में लिखा गया है ।

---

1. वीर हमीर - डॉ॰ रामकुमारवर्मा - पृ: 49.

चितौड की चिता

डॉ. रामकुमार वर्मा का द्वितीय खण्डकाव्य है "चितौड की चिता" । ऐतिहासिक घटना को आधार बनाकर ही उन्होंने प्रस्तुत खण्डकाव्य की रचना की है । इस विवेच्य खण्डकाव्य में कवि ने रानी करुणा को आदर्श क्षत्राणी के रूप में चित्रित किया है । इसमें जौहर व्रत के पालन द्वारा राजपूत नारियों के मर जाने का वर्णन है । अब हम खण्डकाव्य के लक्षणों के आधार पर प्रस्तुत रचना का विश्लेषण करेंगे ।

कथानक

प्रथम सर्ग का चयन वर्माजी ने प्रस्तुत रचना के कथानक की प्रस्तावना के रूप में किया है । इस ग्रंथ के प्रारंभ में दुःख और तज्जनित निराशा का वर्णन मिलता है । आनन्द के प्रकाश से आलोडित चितौड में दुःख के काले बादल छा गये हैं । जिस देश में पहले कामिनियों के मधुर गीत का स्वर सुनाई पडता था वहाँ अब पशुओं का कातर क्रन्दन सुनाई पडता है । चितौड का स्वर्णिम अतीत अब मिट्टी में मिल गया । कवि ने चितौड के वीर और देशप्रेमी राजपूतों के बारे में बताया है जो अपने देश की रक्षा के लिए अपना लौकिक जीवन त्यागकर कटिबद्ध हो गये हैं ।

चितौड में एक ऐसा समय था कि वीर क्षत्राणियों ने अपनी देश रक्षा हेतु अपने पुरुषों के साथ रणाङ्गण में प्रवेश किया था । इस प्रकार चितौड देश शत्रुओं के अधीन होने से बचा रहा । लेकिन यवन सेना अपने अपार सैन्य बल के साथ चितौड की ओर बढ़ने लगा । नगर का सारा वैभव नष्ट-भ्रष्ट हो गया, सुहागिनियों का सुहाग नष्ट हो गया और उन्हें जौहर व्रत के आयोजन द्वारा अपने शरीर को त्यागना पडा जिससे यवनों को केवल चिता की राख ही दिखाई पडा ।

द्वितीय सर्ग का प्रारंभ प्रकृति वर्णन से शुरू होता है । इसमें नवोढ़ा करुणा का चित्रण है जो अपने प्रियतम के चरणों पर माला अर्पित करने के लिए इच्छुक रहती है । वह उस उपवन में प्रियतम की प्रतीक्षा करती रहती है । उनके प्रियतम का आगमन होता है और दोनों एक दूसरे के बाहुपाश में आबद्ध हो जाते हैं ।

राणा संग्राम सिंह चितौड नरेश बन जाते हैं और चितौड में शांतिपूर्ण शासन चल रहा था । लेकिन यह शांति अधिक दिन न रही । यवनाधिप बाबर ने चितौड पर आक्रमण करने की धमकी दी । संख्या में न्यून राजपूती सेना ने उनका मुकाबला करने का निश्चय किया ।

अनेक दिनों तक राजपूत यवनसेना का सामना करते रहे । राणा ने अपने कौशल और पराक्रम से शत्रु को चकित कर दिया । फिर भी सेना की कमी के कारण उन्हें पराजय स्वीकार करना पडा । युद्ध में घायल राणा की मृत्यु हो गई । सारे देश में दुःख और अशान्ति फैल गई, राज्य में अत्याचार बढ़ने लगा ।

राणा के विरह से करुणा बहुत दुःखी थी । वह दिन-रात ईश्वर से शत्रुओं से अपने पति की रक्षा करने की प्रार्थना कर रही थी । उसी वक्त एक दासी ने रोते रोते राणा के प्राणान्त की खबर सुनाई । पति की मृत्यु की खबर सुनकर वह अत्यन्त दुःखी हुई । अपने प्रिय केलिए उन्होंने जो हार बनाया था वह टूट पडा । उसके मुँह से एक चीख निकली । वह बेहोश हो गई ।

षष्ठम सर्ग में पति वियुक्त करुणा की करुण दशा का वर्णन है । उनकी आँखों से आँसू उमडने लगे । उसके करुण विलाप चारों ओर फैल गया और वह विविध प्रकार से विलाप करने लगी । इस दुःख के बीच भी उसे मन को आनन्दित करने वाली बात थी किवह एक बच्चे को जन्म देनेवाली है । चारों ओर आनन्द का वातावरण छा गया । बालक का नाम उदयसिंह रखा । रानी के मन में उदयसिंह आशा-किरण समान बन गया ।

— G4973 —

उदयसिंह के वर्षगाँठ का दिन आ गया । सारे राजमहल में आनन्द फैल गया । बालक उदयसिंह सब के मन को छीन लिया । राणी करुणा भी आनन्द के साथ जीवन बिताने लगी । राज्य में अशान्ति और अनाचार फैलने लगा । सामन्तों ने कर देना बन्द कर दिया । चितौड की अशान्ति देखकर बहादुरशाह ने इस राज्य को अपने अधीन बनाने का निश्चय किया और चितौड पर आक्रमण करने केलिए निकल पडा । रानी करुणा ने मंत्री से राज्य में फैले हाहाकार और अनाचार का कारण पूछा । मंत्री ने रानी से सामंतों की अवसरवादिता, सेना की कमी और आर्थिक विषमता की बात बताई ।

रात बीत गई । प्रभात निकलने लगा । विभिन्न प्रकार की भावनाओं से उनका मन अस्थिर हो गया । रानी ने दूत को दिल्लीपति के पास भेजा गया/उसको एक संदेश भी दिया जिसमें बहादुरशाह की नीचता, उदयसिंह की बाल्यावस्था के बारे में बताकर अपनी असहायता का परिचय दिया । उसके पास हुमयूँ को रानी की तरफ से बाँधने के लिए एक राखी भी भेज दिया । दूत दिल्ली को ओर चल पडा ।

इसी वक्त दिल्ली में हुमयूँ और शेरशाह एक दूसरे से लड रहे थे । शक्ति-संपन्न शेरशाह ने हुमयूँ को पराजित किया । घोर युद्ध के कारण जब हुमयूँ उदास रहा था उसी वक्त दूत ने उसे रानी करुणा का सन्देश दिया । करुणा का सन्देश सुनते ही हुमयूँ ने अपने सिपाहियों को शेरशाह से लडना छोडकर चितौड को रक्षा केलिए प्रस्थान करने की आज्ञा दी ।

रानी करुणा अपलक दृष्टि से हुमयूँ की प्रतीक्षा करती रही । उनकी आँखें आँसू से भर गई और मन में आशा और निराशा का हलचल मच रहा था । उनका विश्वास था कि चितौड की रक्षा के लिए हुमयूँ ससैन्य निकले होंगे । वह देवी से हुमयूँ की रक्षा माँगी । उनका दुःख यह था कि अत्याचारी बहादुरशाह इन आर्य ललनाओं को छीन लेगा । उनका विश्वास था कि वह स्वयं इन लालनाओं को बहादुरशाह के हाथ से ज़रूर बचायेंगी । चाहे वह सारे देश को अपना अधीन बना लें तो भी नारी समाज को

छू न सकता । परन्तु उस ओर से धूल व्याप्त था जिसे देखकर वह यही सोचा कि हुमयूँ चितौड की रक्षा के लिए आ रहे हैं । लेकिन वह बहादुरशाह की सेना थी । उसने नारी समाज को चिता में अपने शरीर को त्यागने और पुरुषों को रणक्षेत्र जाने का आह्वान दिया

युद्ध भूमि जाने केलिए तैयार राजपूतों के मन में वीरता और शत्रु के प्रति क्रोध का भाव था । महलों में चिता की ज्वाला भभकने लगी । सभी आर्य ललनायें पूर्ण शृंगार करके मंगल-मय थाल सजायी । स्त्रियाँ पुष्प माला बना रही थी । चिता के चारों ओर पुष्प संचित था और छोटे छोटे दीप जल रहे थे । सारी नारियाँ पूजार्चन केलिए दुर्गा के मन्दिर की ओर निकल पडी । देवी से प्रार्थना करके वे मन्दिर से लौट पडीं । अपने पतियों का स्मरण करते हुए चिता के सम्मुख पहुँच गई । रानी करुणा ने लाल वस्त्र पहन कर चिता में पुष्प फेंके और सब नारियों को चितारोहण का आह्वान दिया । उदयसिंह को पास बुलाकर उसके कपोलों पर अपना अन्तिम चुम्बन अर्पित किया और उनको सांत्वना दी । वे चिता के पास आई । अपने केशों को उन्मुक्त कर चिता में मालाएँ डाल दीं । फिर उन राजपूत नारियों ने केसर से भाल सज्जित किया और मंगलमय वेश धारण करके प्रेम से प्रदक्षिणा की । चिता का पूजन करके कल-कण्ठों से अपने प्यारे देश चितौर का जय-गान किया और चिता के अंक में आसीन हुईं । सभी ललनाओं ने चिता में कूदकर अपना देह त्याग किया । चारों ओर निस्तब्धता छा गई । आज उनके चितारोहण की एक करुण कहानी ही शेष रह गई है ।

बहादुरशाह आ पहुँचे । राजपूतों ने उसके छक्के छुडा दिए । हर राजपूत अपने देश की रक्षा के लिए अपने प्राणों को न्योछावर करने केलिए तैयार हुए । जब हुमयूँ चितौड पहुँचे तब यवनों की जीत और रनिवास का ध्वंस हो चुका था । अंत में हुमयूँ ने बहादुरशाह को हरा ही दिया । लेकिन उनकी विजय निष्फल थी क्योंकि उन वीर क्षत्राणियों ने साहस और आत्मसम्मान के साथ अपने प्राणों को न्योछावर किया था । क्षत्राणियों के जौहर की खबर सुनकर दुःख से अपना मस्तक झुका लिया ।

अपनी विजय पर वह सन्तुष्ट नहीं हुआ । यह विजय निष्ठुर और प्रतिकूल भाग्य का उपहार था । उन्होंने अनेक बार दुःख प्रकट किया । वह ऐसा सोचने लगा कि चितौड देश की यह हार उनके जीवन की सुकुमार हार बनकर उसे सदैव बेचैन करती रहेगी ।

चरित्र चित्रण

प्रस्तुत खण्डकाव्य के प्रमुख पुरुष पात्र हैं - राणा संग्राम सिंह, बाबर, हुमयूँ और बहादुरशाह तथा स्त्री पात्र है करुणा । चरित्रचित्रण की दृष्टि से उदयसिंह का विशेष महत्व नहीं है । सब पात्र ऐतिहासिक हैं ।

राणा संग्राम सिंह प्रेमी और वीर योद्धा के रूप में प्रस्तुत रचना में चित्रित हुआ है । इस रचना के द्वितीय सर्ग में प्रेमी रूप में उसका चित्रण हुआ है । चाँदनी रात में प्रियतम करुणा के साथ उनके मिलन चित्रण में उनका प्रेमी रूप उभर आता है ।

उनके चरित्र की दूसरी पहलू है एक वीर राजपूत योद्धा का । वे बाबर के साथ आत्मसम्मान के साथ मुकाबला करने का निश्चय करते हैं । वे राजपूतों को देश की रक्षा करने केलिए कटिबद्ध हो जाने को प्रेरित करते हैं ।

रानी करुणा का चरित्र एक आदर्श क्षत्रिय नारी, बुद्धिमती शासिका, पतिव्रता और स्वाभिमानी देश प्रेमिका के रूप में चित्रित हुआ है । प्रारंभ में प्रियतमा के रूप में उसका परिचय मिलता है जो प्रियतम के मिलन के लिए उत्सुक रहती है । प्रियतम के लिए एक हार बनाना चाहती थी। लेकिन लज्जा के कारण वह ऐसा न करती है । इसके बाद वीर पतिव्रता क्षत्राणि के रूप में उसका चित्रण मिलता है । देश-रक्षा हेतु निकले पति की जीत केलिए देवी-देवताओं का पूजन करती है । राणा की मृत्यु का समाचार पाकर वह अत्यन्त दुःखी हो जाती है । बहादुरशाह के आक्रमण का समाचार पाकर वह दूत को हुमयूँ के पास भेजती है और एक राखी भी भेजती है । लेकिन हुमयूँ के आगमन में

विलंब होने के कारण वे सभी राजपूत नारियों के साथ जौहर व्रत का पालन करके अपने आत्मविश्वास की रक्षा करती है । इधर एक स्वाभिमानी देश प्रेमिका का रूप मिलता है

प्रस्तुत रचना में शृंगार, करुण और वीर रस की योजना है । प्रसंगवश इसमें प्रकृतिचित्रण का आयोजन हुआ है । प्रकृति का आलंबन और उद्दीपन रूप मिलते हैं । एक स्थान पर वर्माजी ने प्रकृति का संवेदनात्मक चित्रण भी किया है -

"पूर्व में उठी उषा की ज्वाल
छोड़कर नव-समीर निश्वास
कलखों मिस गा गान सहास
जल गई नभ में तारक-माल ।"[1]

उपर्युक्त पंक्तियाँ प्रस्तुत खण्डकाव्य के अन्तिम सर्ग से लिया गया है । राजपूत नारियों के चितारोहण से सारी प्रकृति भी दुःख प्रकट करने लगी ।

कवि ने इस काव्य ग्रंथ को द्वादश सर्गों में आबद्ध किया है । सर्गों का नामकरण नहीं किया है केवल प्रथम, द्वितीय ही रखा है ।

निशीथ

"निशीथ" वर्माजी का तीसरा खण्डकाव्य है । प्रस्तुत खण्डकाव्य में छायावादी खण्डकाव्य की भावगत तथा शैलीगत विशेषतायें उपलब्ध हैं । इसका कथानक काल्पनिक है जो असफल प्रेम-कथा को आधार बनाकर रचा गया है ।

---

1. आज के लोकप्रिय हिन्दी कवि रामकुमार वर्मा - सं. राधेकृष्ण श्रीवास्तव - पृ: 51.

कथानक

वर्माजी ने प्रस्तुत खण्डकाव्य का शुभारंभ इसके नायक सुकुमार के चरित्रांकन से प्रस्तुत किया है जो अकेला रहता है और उसका हृदय तरह तरह की चिन्ताओं से अशान्त रहता है । एक दिन फूल चुनने वाली कमला के पैर में काँटा चुभ जाता है और पीडा के कारण उसकी आँखें भर गईं । इस समय वहाँ पहूँचने वाला सुकुमार काँटा निकालता है । दोनों का परिचय होता है । तीसरे सर्ग में वर्माजी अपनी रचना के लक्ष्य की ओर इशारा करते हुए कहते हैं कि "इस रचना को मैं ऐसे भावों से सजाऊँगा जिससे पाषाण जैसे कठोर हृदय भी शिथिल बन जायें ।"[1]

वर्माजी ने प्रेम के बारे में बताते हुए उसकी नश्वरता की ओर भी संकेत किया है । वे इस प्रकार सोचते हैं कि मैं अपने इस प्रणय सुमन का हार किसको सौंप दूँ' आगे कवि ने सुकुमार के मन में इन्दिरा के प्रति जो उत्कट प्रेम है उसका वर्णन और प्रमिका के वियोग में तडपनेवाले उस प्रेमी का चित्रण भी किया है । फिर वर्माजी ने इन्दिरा के मन में सुकुमार के प्रति जो प्रेम है उसका वर्णन भी किया है । चतुर्थ सर्ग में कमला की मनोदशा का वर्णन है । वह सुकुमार की याद करती रहती है । उसके मन में सुकुमार के प्रति अनुराग उत्पन्न हो गया है । सुकुमार द्वारा उसके पैर से काँटा निकालने वाली घटना एक सुखद स्मृति के रूप में उसके मन में पैठ गई है । कमला और इन्दिरा एक दूसरे की सहेली है । एक दिन कमला इन्दिरा से अपने प्रेम के बारे में बताने लगी और कहते कहते बीच में रुक जाती है । तब इन्दिरा कमला से अपने प्रेम के बारे में बताती हुई कहती है कि उनके प्रिय का नाम "सुकुमार" है । इन्दिरा के मुँह से "सुकुमार" का नाम सुनकर कमला व्याकुल हो जाती है । उसके मुख पर स्वेदकण छा गए ।

---

1. गजरे तारों वाले - "निशीथ" - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 128.

षष्ठ सर्ग में सुकुमार की मनोदशा का वर्णन है । उसके मन में कमला के पैर से काँटा निकालने का स्मरण आता है और मन में द्वन्द्व उत्पन्न होता है । जिस इन्दिरा ने मन में मान पाया है वह स्थान अब कमला माँग रही है । कमला सुकुमार को एक प्रेम पत्र लिखती है । सुकुमार से प्रणय निवेदन करने के साथ उसके दर्शन की अभिलाषा भी प्रकट करती है । कमला का पत्र पढ़कर वह चकित हो जाता है । उसके मन में द्वन्द्व उत्पन्न हो जाता है । वह ऐसा सोचने लगा कि कैसे एक मन्दिर में दो प्रतिमाओं का स्थान होगा । वह इस निर्णय पर पहुँचता है कि उसके मन में केवल इन्दिरा का ही स्थान होगा और इन्दिरा के समीप ही उसका अधिवास होगा । सुकुमार अपनी असमर्थता दिखाकर कमला को पत्र भेजता है । वह जिसको प्यार कर चुका है उसके प्रति ही उसके मन में प्यार होगा । सुकुमार कमला से क्षमा भी माँगता है । पत्र पढ़कर कमला दुःखी हो जाती है । उसके मन में सुकुमार के प्रति रोष उत्पन्न होता है । पुरुष हृदय के प्रति उसके मन में घृणा उत्पन्न होती है और पुरुष को कपट मान लेता है । वह इस प्रकार सोचती है कि जिसे उसने पतवार समझकर हाथ उठाया था वह केवल एक तिनका था । उसके मन में अब केवल निराशा ही है । कमला अब अपने असफल प्रेम का प्रतिशोध करने का निश्चय करती है । वह यह देखना चाहती है कि सुकुमार कमला और इन्दिरा में से किसको पायेगा और इन्दिरा को कैसे जी भर कर प्यार कर सकेगा' सुकुमार मित्र से अपने मन की बात बताते हुए कहता है कि वह इन्दिरा की छवि का उपासक बन गया है । कमला अपनी सुन्दरता का प्यार लेकर आई है और अपने यौवन का संसार दिखाने का । उस प्यार में उसे विष की दाहक धार दिखाई पड़ता है । वह मित्र से अपने मन की बात कहता रहा । इसी वक्त उसके मित्र ने यह कह दिया कि कोई उनकी ओर आ रही है । उसने यह देखा कि कमला तो तीव्र वेग से आ रही है । कमला ने सुकुमार से यह कहा कि वह एक लघु संदेश लेकर आई है । जिस बाला ने अपनी आँखों में आपको लीन कर लिया है वह अब वियोग में जल रही है । उसकी आँखें अश्रुपूर्ण है और वह आपके दर्शन माँग रही है । वह रमानिवास की झील में व्योम की छाया में एक नौका पर आपकी प्रतीक्षा करती रहती है और उनकी आँखों से निर्झर अविरल रूप से बह रही है ।

इतना कहकर वह चली गई । कमला उसका उत्तर सुनने केलिए रुकी नहीं । यह बात सुनकर सुकुमार को बहुत आनन्द का अनुभव हुआ कि इन्दिरा उसमें इतनी लीन है । वह अपने को भाग्यवान समझता है और वह जल्दी से रमानिवास की ओर जाने का निश्चय करता है । कमला इन्दिरा के पास जाकर सुकुमार की दुश्चरित्रता के बारे में बताती है और उसके मन को भटकाने का प्रयत्न करती है । यह सुनकर इन्दिरा दुःखी हो जाती है । आधी रात का समय है । चारों ओर सन्नाटा ही है । केवल लहरों की मन्द ध्वनि ही सुनाई पड रही है । चन्द्रमा अस्त हो गया है । इस घोर अन्धकार में एक नौका जल्दी से आगे बढ़ रही है । अचानक एक शब्द सुनाई पडा । इस ओर आनेवाली कोई नौका इससे टकराकर उलट पडी । एक नारी का मन्द और करुण पुकार सुनाई पडा- "सुकुम्   आ   रहा !" उस अज्ञात स्त्री रत्न को बचाने के लिए सुकुमार कूद पडा । जल ने दोनों को अपने वक्षस्थल में लिया । उस समय रात तो अत्यन्त मलिन दिखाई पडी । प्रातःकाल निकल आया । नदी में दो सूनी नौकायें थीं । मानो वे यह पुकारती थी - "इन्दिरे कहाँ सुकुमार !" ﴾अन्त में वर्माजी ने कुछ कमाल ही किया है क्योंकि "इन्दिरे कहाँ सुकुमार !" इस पंक्ति से ही पाठक यह समझ सकते हैं कि कमला और सुकुमार ही नदी में डूब गए हैं ।﴿

चरित्र चित्रण

विवेच्य खण्डकाव्य में तीन पात्र हैं - सुकुमार, इन्दिरा और कमला । पहले सुकुमार के चरित्र का विश्लेषण करेंगे । प्रस्तुत खण्डकाव्य का नायक है सुकुमार । उसकी प्रेमकथा एक दारुण कथा बनकर समाप्त हो गई है । इसमें सुकुमार का चरित्रोद्घाटन निम्न रूपों में हुआ है ।

वर्माजी ने इस खण्डकाव्य में एक सुन्दर युवक के रूप में सुकुमार को पाठक के सम्मुख प्रस्तुत किया है । वह इस काव्य की नायिका इन्दिरा का प्रेमी है । वह बहुत चिन्तित दिखाई पडता है । दुःखी सुकुमार का चित्र वर्माजी ने यों खींचा है -

"चितवन में यौवन-मदिरा थी सूखी-सी छवि-हीन,
चिन्ता मानो विष की धारा उसमें थी क्या लीन?
आँखें मादक थीं पर उनमें आँसू थे दो चार,
उनमें घुला हुआ था कितना भीषण हा-हा-कार?"[1]

अन्यत्र उसके चरित्र का जो वर्णन वर्माजी ने किया है उसमें वह एक साधारण युवक के रूप में आता है जिस पर किसी युवती के रूपसौन्दर्य का प्रभाव पड़ा है। कमला के पैर से काँटे निकालने के बाद उनके बीच जो परिचय होता है उससे इसका अनुमान होता है -

"इन शब्दों के साथ खिल गई
मुख पर कुछ मुस्कान,
लोचन करते थे कमला की
मुग्ध माधुरी पान।"[2]

तीसरे सर्ग में वर्माजी ने उस प्रेमी हृदय का चित्रण मनोवैज्ञानिक ढंग से सुन्दर रूप में प्रस्तुत किया है मानो उसके हृदय में प्रेमिका की याद सदा बस गई है -

"दिन में तेरी स्मृति, निशि में है तेरा स्वप्न ललाम
प्रातः किरणें लातीं उसके मुख में तेरा नाम,
संध्याएँ कर देती अपने अन्धकार के साथ
गहरा उसका प्रेम, झुका कर चिन्तित विभ्रम माथ।"[3]

आगे भी वर्माजी ने प्रेमी युवक सुकुमार की मनोदशा का वर्णन किया है। कमला का प्रेम पत्र पढ़कर वह बहुत दुःखी हो जाता है। उसका मन अशान्त हो जाता है। उसके मन में संघर्ष चल रहा है। उसकी मनोदशा का करुण चित्र वर्माजी के शब्दों में -

---

1. गजरे तारों वाले - "निशीथ" - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 116.
2. वही - पृ: 126.
3. वही - पृ: 134.

"पत्र पढ़ा, पढ़कर सहमा, रुक गया चकित सुकुमार
मानों सिर ने पाया हो पर्वत-सा गुरुतर भार,
अन्तिम शब्द उठा लाया, अन्तस्तल से उच्छ्वास
पथराये-से नेत्र लगे थे क्षितिज-रेख के पास,

भाव बना था मृत-सा
निश्चल आँखें थीं सविषाद,
ज्वाला-सी उठती - दबती थी
उसके मन की याद ।"[1]

उसका मन एक युद्ध क्षेत्र बन गया है । एक ओर इन्दिरा की सुखद स्मृति और दूसरी ओर कमला की प्रेमाभ्यर्थना । अन्त में वह इस निश्चय में अडिग रहता है कि वह केवल इन्दिरा को ही अपने हृदय में स्थान देगा । वह इस प्रकार सोचता है कि कैसे एक ही मन्दिर में दो प्रतिमाओं का स्थान होगा' यहाँ एक सच्चे प्रेमी के रूप में उसका चरित्रोद्घाटन किया है । वह खुल्लं खुल्ला अपनी असमर्थता दिखाकर कमला को पत्र लिखता है ।

वह अपने मित्र से इस दुःखदघटना के बारे में बताता है । कमला के मुख से यह लघु संदेश सुनकर वह बहुत आनन्दित हो जाता है और अपने को भाग्यवान समझता है कि रमानिवास की झील में इन्दिरा उनकी प्रतीक्षा करती रहती है और उसके वियोग के कारण तडप रही है । वह अपनी प्रेमिका के दर्शन केलिए तीव्र गति से जाता है । लेकिन विधि ने उसके साथ क्रूरता का बर्ताव किया है क्योंकि उसका प्रेम एक करुण कथा के रूप में परिणत हो जाता है । नदी में डूबकर उसकी मृत्यु हो जाती है । वह प्रेम कथा के एक भाग्यहीन नायक के रूप में रह गया है जिसके प्रति पाठक के मन में सहानुभूति ही रह जाती है

---

1. गजरे तारों वाले - "निशीथ" - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 161.

इन्दिरा

विवेच्य खण्डकाव्य की नायिका है इन्दिरा । सुकुमार की प्रेमिका के रूप में इस काव्य में उसका स्थान है ।

केवल पाँचवें सर्ग में उसका चित्र पाठक के सम्मुख आता है । लेकिन तीसरे सर्ग में सुकुमार और इन्दिरा के प्रेम की एक झाँकी वर्माजी ने प्रस्तुत की है । कमला और इन्दिरा के बीच जो वार्तालाप होता है उससे उसका चरित्र पाठक के सम्मुख आता है । वह अपने प्रेमी के बारे में बताने में कुछ संकोच नहीं करती । उनका प्रेम शिष्ट है । इसका प्रेमी सुकुमार अपने मन मन्दिर में उस देवी की ही प्रतिष्ठा करता है । सुकुमार के प्रति उसके मन में जो अनन्य प्रेम है उसका चित्रण लेखक ने नायक के मुख से ही किया है -

"हाय, याद आता है अब वह सुखद मनोरम काल
जब बोली थी प्रिया इन्दिरा सिर का वस्त्र सम्हाल,
और उँगलियों में लपेट कर मुक्त केश के छोर
नमित माथ मुझ से सकुचाकर, देखवृक्ष की ओर,
"भूल न जाना, कहीं इन्दिरा
का छोटा-सा नाम,
और भूल जाना तो -
आना स्वप्नों में निष्काम !!"[1]

यदि वर्माजी ने कमला के प्रेम को वासनामय रूप में प्रस्तुत किया है तो इन्दिरा का प्रेम आदर्शमय रूप में । कमला के मुख से अपने प्रेमी की दुश्चरित्रता के बारे में सुनकर वह बहुत दुःखी हो जाती है जो सहज रूप से किसी भी प्रेमिका अनुभव करती है । (कमला ने सुकुमार की दुश्चरित्रता का जो परिचय दिया वह वास्तव में झूठा था ।) कमला की झूठी कथन से दुःखी इन्दिरा का चित्र देखिए -

---

1. गजरे तारों वाले - "निशीथ" - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 163.

"हुई इन्दिरा विकल, न आये
ओठों में कुछ बोल,
नेत्र उठ गये, आँसू का
पतला-सा परदा खोल ।"[1]

इसका प्रेम सफल न होता । वर्माजी ने एक असफल प्रेम की नायिका के रूप में ही उसका चित्र खींचा जो मृत्यु में भी अपने प्रियतम से मिल न सका । कवि ने अन्त में उसे यही आह्वान देकर इसकी समाप्ति की है कि -

"मिल जाओ, ओ मिल जाओ ।
हो जाओ एकाकार !!"[2]

कमला

कमला को वर्माजी ने इसकी नायिका इन्दिरा की सहेली के रूप में प्रस्तुत किया है और साथ ही सुकुमार से प्रेम करने वाली वासनात्मक प्रेम के प्रतीक रूप में ।

प्रातः काल फूल चुननेवाली एक सुन्दर रमणी के रूप में उसका चित्र हमारे सम्मुख आता है । उसके सौन्दर्य का चित्रण वर्माजी ने सुन्दर शब्दों में खींचा है -

"किरणें आईं, पूर्व दिशा की पीली खिड़की खोल
अविदित चारु चूम लेने "कमला" के कलित कपोल,
आई थी वह फूल तोड़ने को सुकुमारी बाल
उषः समान कपोलों पर लहरे थे दो-दस बाल,

---

1. गजरे तारों वाले - "निशीथ" - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 182.
2. वही - पृ: 184.

> ओठों में लाली थी, वैसा
> ही था कोमल गात,
> आँखों में यौवन का निकला
> था छवि-पूर्ण प्रभात ।"[1]

वह भी साधारण युवती के रूप में युवक को अपने हृदय में स्थान देती है । उसके मन में सुकुमार से हुई मधुर भेंट को याद रहती है । वह उसको अपने प्रिय के रूप में मान लेती है और उस सुखद स्मृति में लीन रहती है । वह अपनी सहेली इन्दिरा से अपने प्रेम के बारे में बताती है । लेकिन उसे पूरा न करती । कमला यह जानकर दुःखी हो जाती है कि इन्दिरा सुकुमार से प्रेम करती है । वह अपना प्रेम दिखाकर सुकुमार को पत्र भेजती है । लेकिन सुकुमार अपनी असमर्थता दिखाकर उसे पत्र भेजता है । यह जानकर वह सुकुमार और इन्दिरा से प्रतिशोध करने का निश्चय करती है । यह उसके चरित्र की विकृत पहलू है । सुकुमार और इन्दिरा के प्रति उसके मन में ईर्ष्या उत्पन्न होती है और वह इस प्रकार सोचती है -

> "दूँ अनुराग त्याग मन में
> भर लूँगी विषम विराग,
> ओ प्रतिहिंसे ! जाग-जाग
> तू मेरे मन में जाग !"[2]

वह अपने जाल पसारने का प्रयत्न करती है । सुकुमार के पास जाकर उसे यह समझाती है कि रमानिवास की झील में इन्दिरा उसके दर्शन की अभिलाषा करती हुई विरह दुःख में तडप रही है । यह सुनकर सुकुमार विश्वास करता है, उसके मन में तनिक भी शंका नहीं होती । उसी प्रकार कमला इन्दिरा के पास जाकर सुकुमार की दुश्चरित्रता के बारे में [illegible] फेरने का प्रयत्न करती है । इन्दिरा उसके कथन को सत्य ही

---

1. गजरे तारों वाले - "निशीथ" - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 122.
2. वही - पृ: 171.

समझती है । इस प्रकार वह अपने षड्यन्त्र द्वारा दोनों को अपने वश में लाती है । वह अपने प्रतिशोध को सच बनाती है जिससे सुकुमार इन्दिरा से प्रेम न कर सके ।

प्रकृति चित्रण

वर्माजी ने प्रस्तुत खण्डकाव्य में अन्य खण्डकाव्यों की अपेक्षा प्रकृति का सहारा अधिक मात्रा में लिया है । इसमें प्रकृति का विविध रूपों में चित्रण किया है ।

प्रथम सर्ग का आरंभ प्रकृति चित्रण से प्रारंभ होता है । प्रकृति का यह रूप इसके नायक सुकुमार की मनोदशा का चित्रण करने में सफल हुआ है । जिस प्रकार उसका मन अशान्त है उसी प्रकार प्रकृति भी -

"वायु-स्वरों में गाती थी सूखे तरु की नत डाल ,
मिला रहा फुफकार उसी में विष-कुबेर-सा व्याल,
वह भीषण संगीत भागता था सरिता के कूल ,
"टल-टल" कर, जो घृणावेश से बहती थी प्रतिकूल",[1]

इसमें प्रकृति के भीषण रूप का भी चित्र मिलता है । प्रातःकालीन प्रकृति का चित्र आलंबन रूप में किया है जो पाठक के मन में प्रभात की सुन्दर छवि प्रस्तुत करने में सफल हुआ है -

"काँप रही थी वायु और कारण भी था कुछ ज्ञात,
प्रात-युवक से हाथ छुडा कर भागी श्यामा -रात
तारे सारे ओस-रूप में भू पर गिरे अजान
xx xx xx xx xx

---

1. गजरे तारों वाले - "निशीथ" - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 116.

सौरभ के अंगों में हिलता था समीर सानन्द,
मानों थक कर घूम रहा हो नव उपवन में मंद ;
लतिकाओं के अंगों में कंपन था बारम्बार,
सुमन झूलते थे हँस कर पाकर समीर संचार ;"[1]

चतुर्थ सर्ग के आरंभ में रात का जो चित्रण किया गया है वह भी आलंबन के रूप में प्रकृति वर्णन का सुन्दर उदाहरण है ।[2]

कमला और सुकुमार के बीच हुए भेंट का चित्रण करते समय वर्माजी ने उस सर्ग के आरंभ में प्रकृति का जो चित्र उपस्थित किया है वह पृष्ठभूमि के रूप में हुआ है ।[3]

उपमान के रूप में प्रकृति का सहारा लिया है जो पुरुष के कपट को व्यक्त करने में सक्षम बन गया है -

"हँस कर चतुर, चुरा लेंगे स्त्री के मन के भाव
और करेंगे ऐसे कल-छल पूर्ण कमल-सेहाव,
रमणी भोली भ्रमरी-सी आकर होगी आसीन
ज्यों ही कर देगी उसमें अपना अस्तित्व विलीन,
त्यों ही कमल सम्पुटित होगा ।"[4]

द्वादश सर्ग के प्रारंभ में प्रकृति का जो चित्रण मिलता है वह भविष्य में होनेवाले अमंगल की पूर्व सूचना के रूप में है -

---

1. गजरे तारों वाले - "निशीथ" - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 120.
2. वही - पृ: 139.
3. वही - पृ: 121.
4. वही - पृ: 168.

"थी निशीथ – लहरों में स्थिर, सोती थी काली रात
पवन मचलता था, बालक-सा करता था उत्पात,
लहरों के हाथों से मानों थपकी देकर मन्द
करती थी वह शिशु का रह-रह कर रो उठना बन्द
तारों के मन धड़क रहे थे
मन में थे भयभीत,
क्योंकि तिमिर था – शशि-शासन था
नभ में हुआ व्यतीत ।"[1]

इस सर्ग में कथानक की समाप्ति होती है । इन्दिरा और सुकुमार का प्रेम असफल बना रहता है । इसकी सूचना सर्ग के प्रारंभ में मिलती है ।

सर्गबद्धता

प्रस्तुत खण्डकाव्य का कथानक द्वादश सर्गों में आबद्ध है । इसमें सर्गों का नामकरण नहीं किया गया है । अन्य खण्डकाव्यों की अपेक्षा इसका आकार बड़ा है ।

खण्डकाव्य का शीर्षक "निशीथ" रखा गया है । इस नामकरण की विशेषता यह है कि इसके कथानक की चरमसीमा और अन्त "निशीथ" में ही हुआ है । रात तो दुःख का प्रतीक है और इसका कथानक भी दुःखान्त है ।

वर्माजी ने "निशीथ" की रचना "सारछंद" में की है ।

---

1. गजरे तारों वाले – "निशीथ" – डॉ॰ रामकुमार वर्मा – पृ: 183.

सन्त रैदास

रामकुमार वर्माजी का चौथा खण्डकाव्य है "सन्त रैदास" । इसकी कथावस्तु मध्ययुग के भक्त कवि रैदास जी के जीवन की प्रमुख घटनाओं पर आधारित है । प्रस्तुत खण्डकाव्य में वर्माजी की मानवतावादी विचारधारा का प्रभाव देख सकते हैं । प्रस्तुत ग्रंथ के "आमुख" में वर्माजी ने इस रचना का उद्देश्य स्पष्ट किया है - "संत रैदास" खण्डकाव्य सन्तों की परंपरा में भक्ति का उत्कर्ष दिखलाने के लिए तथा मानव में समत्व भाव स्थापित करने के लिए लिखा गया है ।"[1]

वर्माजी जाति-पाँति के विरोधी थे । वे सब मानव में समत्व देखना चाहते थे । समाज तो निम्न वर्ग को घृणा की दृष्टि से देखते हैं । इसके विरुद्ध वर्माजी ने आवाज उठायी है -

"छूत का यह रोग उनके साथ क्यों है?
निम्न रखने में तुम्हारा हाथ क्यों है?"[2]

प्रस्तुत रचना में महात्मा गाँधीजी के हरिजनोद्धार का प्रभाव हम देख सकते हैं -

"देख लो इतिहास, अपना देश देखो,
पूज्य बापू का दिया उपदेश देखो ।"[3]

वर्माजी ने इस विवेच्य खण्डकाव्य का चयन रैदासजी के जीवन को आधार मानकर लिखा है जो निम्न जाति के माने जाते हैं ।

---

1. सन्त रैदास - डॉ. रामकुमार वर्मा - "आमुख" - पृ: 12.
2. वही - "प्रस्तावना" - पृ: 2.
3. वही - पृ: 3.

कथानक

प्रस्तुत खण्डकाव्य का कथानक ऐतिहासिक है । पहले सर्ग में रैदासजी का जन्म और उससे उत्पन्न चहल पहल और आनन्द प्रमोद का वर्णन है । उनका जन्म रविवार को हुआ था और उनका नाम "रवि" रखा गया जो बाद में रैदास के नाम से प्रसिद्ध हो गए । बालक रैदासजी पर भक्ति भावना का उदय होने लगा । वे अपने कक्ष में मूर्तियाँ सजाकर "राम-सीता" का नाम रटने लगे । लेकिन उसके माँ-बाप भक्ति भावना के विरोधी थे । उनके पिता तो चर्मकार थे । इसलिए उसने उन्हें भक्ति भावना छोडकर अपना कर्तव्य करने का आदेश दिया । वे धीरे धीरे अपने काम में लीन होने लगे । अपने बचपन के संस्कार के कारण वे बीच बीच में "राम" नाम जप करते रहे । भले ही वे जाति से चर्मकार हैं फिर भी बडे बडे लोग उनकी भक्ति की प्रशंसा करते रहे । पिता ने रैदास की शादी करने का प्रबन्ध किया । लोना से उनकी शादी संपन्न हुई । उनकी पत्नी भक्ति भावना के पोषक थी । दिन-ब-दिन उनकी भक्ति भावना बढ़ती रही और फल-मूल छोडकर उपवास करते रहे । उनके मुख से कविता की पंक्तियाँ निकलने लगीं । उनकी कुटिया में सन्त प्रेमानन्द का आगमन हुआ । वे उनके गीत सुनकर बहुत प्रसन्न हुए । प्रेमानन्द ने यह बताया कि निम्न जाति के होने के कारण उनके मन में जो संकोच है उसे दूर करो और उससे यह भी कहा कि वे सच्चे साधक हैं यह जानकर उनसे मिलने के लिए आया है । प्रेमानन्द ने रैदास की गरीबी देखकर उसे पारस पत्थर दिया, लेकिन रैदास ने उसे स्वीकार करने में असन्तुष्टि प्रकट की । रैदासजी उसे माया का द्वार मानते हैं । प्रेमानन्द ने उस पारस को छानी में रखा और वे प्रस्थान किए । कई दिन बीत गए । संत फिर वहाँ आया । उसने देखा कि रैदास तो भक्ति रस में अत्यन्त लीन हो रहे हैं । उनका घर तो वैसा ही है जो गरीबी का साम्राज्य है । उन्हें ऐसा लगा कि रैदास ने पारस का उपयोग न किया है । उसे संसार का सारा सुख व्यर्थ लगा । रैदास ने लोना के साथ उनका स्वागत किया । प्रेमानन्द इस प्रकार सोचने लगे कि स्वामी रामानन्द इसे देखकर निश्चय ही पुलकित होंगे और वे उसको अपना शिष्य बना लेंगे । वह तो

ऐसा शिष्य है जो माया-ममता से इतनी दूर रहता है और जिसमें प्रभु के प्रति भक्ति है, प्रभु की सेवा में लीन रहता है । पाँचवें सर्ग का आरंभ वर्माजी ने काशी नगर के वर्णन से किया है । काशी में विश्वनाथ के मन्दिर के अलावा एक श्रीनारायण क्षेत्र है जो वैष्णव जन का केन्द्र है । वहाँ स्वामी रामानन्द गहरे ध्यान में लीन रहते हैं । उनके दर्शन करके भक्त स्वयं को बड़ा भागी मानता है । वे श्रीरामानुज के भक्ति पंथ के अनुयायी हैं और उनके बारह शिष्य हैं जो भक्ति में श्रेष्ठ हैं । वे रामायण का पाठ करके सबके हृदय में भक्ति के भाव भरते हैं । ऐसे प्रभु की भक्ति भवसागर की नाव है । प्रभु तो भक्त के भक्ति की परीक्षा देते थे । एक दिन स्वामी रामानन्द पूजन कर ध्यानस्थ रहते थे । भक्त उनके दर्शन हेतु जुड़े हुए थे । प्रेमानन्द उनके दर्शन हेतु आये । उनके हाथ में पुष्प-हार था । उन्होंने रामानन्द का प्रणाम किया और हार पहनाया । फूलों के मकरन्द जैसी मधुर वाणी में उन्हें बैठने को कहा । प्रेमानन्द ने उनसे कहा कि उसके साथ रैदास नामक एक भक्त आया है, उसे आपके दर्शन करने की इच्छा है और उसे अपना शिष्य बना लें । रामानन्द ने यह उत्तर दिया कि यदि उसके मन में प्रभु के प्रति भक्ति है तो निम्न जाति के होने पर भी वे उन्हें अपना शिष्य बनायेंगे । यह सुनकर प्रेमानन्द रैदास को साथ लेकर रामानन्द के सम्मुख आए । रैदास ने दूर खड़े होकर भक्ति भाव से उनका प्रणाम किया । रामानन्द के कहे अनुसार रैदास ने एक पद सुनाया । रामानन्द ने उनकी सराहना की और उन्हें अपना शिष्य बनाया । रैदास मधुर स्वर में गीत गाते थे । सब लोग उनके गायन सुनने के लिए आते थे । उनकी कीर्ति फैल गई । एक बार चितौड की झाली रानी काशी आयी थी । वे विश्वनाथ के मन्दिर पहुँचकर दर्शन किये और गीत सुनाए । इसके बाद रानी रैदास की ओर प्रस्थान की । कुछ दूर पहुँचने पर ही भजन सुन पड़ी । रैदास के टूटे छप्पर के आगे रानी उतरी और उसका मन तो आनन्द से भरा था । इन्हें देखकर रैदास विचलित हो गए । रानी ने रैदास का प्रणाम करने के बाद अपना परिचय दिया । रानी ने यों कहा कि यहाँ आने पर उसे रैदास की भक्ति और काव्य-रचना का परिचय मिला और वे उनकी शिष्या बनने के लिए आई हैं । यह सुनकर रैदास चकित हो गए और रानी से यह कहा कि

वह तो चर्मकार है और गुरु चरणों का सेवी मात्र है । इसलिए रामानन्द के आश्रम में जाकर उनकी शिष्या बनने की प्रार्थना की । लेकिन रानी ने यह उत्तर दिया कि वह तो उन्हें गुरु मान चुकी है और उनकी शिष्या बनने का निश्चय किया है । उन्हें लोना सहित चितौड नगर चलने का आमन्त्रण दिया । रानी रैदास और लोना सहित चितौड की ओर निकले । सारी जनता ने जय जय ध्वनि से उनका स्वागत किया । रैदास के प्रति सबके मन में श्रद्धा थी । जहाँ पर सन्त रैदास के पद-चिह्न थे उसी के ऊपर स्मृति का चिह्न बनवाया । रैदास कुछ दिन वहाँ रहने के बाद पत्नी सहित अपने घर लौटे । बडे शास्त्र-पंडित भी उनके चरण पर शीश झुकाने लगे । जब वे चितौड से गुरुपद पाकर लौटे तब से वे भक्ति के गहरे रत्नाकर जैसे हुए । उनके मन में तनिक भी अहंकार नहीं था । उन्होंने अपना व्यवसाय न छोडा । लोना अपने पति की सेवा करती रही । रात में वह पति के साथ कीर्तन करती थी । उसे रैदास के पद कंठस्थ थे । दोनों का हृदय भक्ति भावना से पूर्ण थे । झाली रानी ने उनका जो सम्मान किया वे उन्हें प्रभु की कृपा समझकर उस पर रचना किया करती थी । उनके मन में प्रभु के प्रति भक्ति भावना बढ़ती रही और उन्होंने काव्य-रचना द्वारा प्रभु का कीर्ति-गान किया । लोना भी उनके साथ कीर्तन-गान करती थी, जिस प्रकार दीपक की लौ में दीपक बत्ती रहता है । उनके मन में राम के दर्शन करने की उत्कट इच्छा थी । उन्होंने बार बार राम से दर्शन माँगकर अनेक पद गाए । रैदास ने अनेक काव्य रचनायें कीं । उनकी भावना के सागर में काव्य-तरंग लहराने लगे । असहाय होकर भी वे दूसरों के सहायक हो गए और राम को पाकर वे स्वयं उसी में खो गए । उनकी जीवन-कथा इतिहास की अमर कथा बन गई । अबतक रैदास की छानी पारस से सजी है । बडे बडे शास्त्र चिन्तक उसका पार न कर पाया था । उन्होंने प्रभु का रहस्य खोजकर धर्म का मर्म बताया और जन-भाषा में मधुर काव्य का स्रोत बहाया। देश ने रैदास की भक्ति भावना पहिचानी ।

<u>चरित्र चित्रण</u>

प्रस्तुत खण्डकाव्य के पात्र हैं – रैदास के पिता, रैदास, रैदास की पत्नी लोना, सन्त प्रेमानन्द, स्वामी रामानन्द और चितौड की झाली रानी । प्रस्तुत खण्डकाव्य में वर्माजी ने भक्त और कवि के रूप में रैदास का चित्रण किया है ।

रैदास के मन में बचपन से ही भक्ति भावना विद्यमान थी । बालक रैदास मन्दिरों से जो गीत सुनाया जाता था वह गुनगुनाता रहा और डगर-मोड पर जो मूर्तियाँ बनी थीं, खेलना छोडकर उसकी ओर देखते रहना उनकी आदत थी । नटखट रैदास का चित्र वर्माजी ने यों खींचा है –

"या किसी का कमण्डल उठा भागता,
किन्तु फिर लौट कर वह क्षमा माँगता ।
या चिढ़ाता कभी ढोंगियों को चढ़ा,
पढ़ दिया मंत्र उलटा जो उसने पढ़ा ।"[1]

वे प्रभु की मूर्ति बनाकर अपने कक्ष में सजाते थे और पूजा करके "राम-सीता" नाम लेते थे । रैदास के पिता भक्ति भावना का विरोधी था । पनहीं बनाते समय भी रैदास राम-मन्त्र जपते थे । लोगों ने उनकी भक्ति की सराहना की । लोना के साथ उनकी शादी होने के बाद भी उनका भक्ति भाव कम नहीं हुआ –

"मंगल विवाह से गृहस्थ हुए रविदास,
किन्तु रही पूरी भक्ति जीवन के ढंग में ।
पत्नी साथ रहती थी किन्तु वे निरन्तर ही,
पूर्ण सुख पाते रहे भक्ति की तरंग में ।"[2]

---

1. सन्त रैदास – डॉ. रामकुमार वर्मा – पृ: 16.
2. वही – पृ: 25.

वे सांसारिक जीवन में लीन नहीं हुए, भक्ति मार्ग में आगे बढ़ते रहे । नंगे पैर चलने वाले सन्तों को वे बिना मूल्य लिये पद त्राण देते थे और उनसे यही प्रार्थना करते थे कि -

"एक मूर्ति मेरे लिए लायें सीता राम जी की,
यदि आप लौट कर इसी मार्ग आते हैं ।"[1]

उनके इस कथन से राम के प्रति उनकी भक्ति का परिचय मिलता है । दिन-ब-दिन उनकी भक्तिसाधना बढ़ती रही । उनके कीर्तन ने काव्य का रूप धारण किया । सन्त प्रेमानन्द उनकी भक्तिभावना देखकर प्रसन्न हो गये । उनकी भक्ति साधना देखकर वे विस्मित हो जाते हैं । वे प्रभु को अपना धन मानते हैं और उन पर इस सांसारिक सुख-दुख का प्रभाव नहीं पडता -

"जिसके धन हैं राम, संतवर !
निर्धनता है उससे दूर,
टूटा-सा घर हो पर मन है
प्रेम-भावना से भरपूर ।"[2]

रैदासजी का विश्वास यह है कि जिसके पास राम जैसा धन है निर्धनता उससे दूर रहता है । वे यही कहते हैं कि मेरा घर तो टूटा सा है लेकिन मेरा मन राम के प्रति प्रेम भावना से भरपूर है । वे श्रीराम को ही अपना धन मानते हैं । सन्त प्रेमानन्द द्वारा दिये पारस पत्थर को वे माया का द्वार समझते हैं । सच्चा भक्त तो विरागी होता है । उनकी भक्ति में विराग का भाव भी स्पष्ट झलकता है -

xx xx xx - "महाप्रभु !
पारस है न मुझे स्वीकार,
मूल्यवान हो किन्तु मुझे यह
लगता है माया का द्वार ।"[3]

---

1. सन्त रैदास - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृः 26.
2. वही - पृः 42.
3. वही - पृः 45.

मूल्यवान पारस पत्थर को वे माया का द्वार समझते हैं अतः वे सन्त प्रेमानन्द द्वारा दिये पारस पत्थर को स्वीकार करने में हिचकते हैं । वे अपने प्रभु को रत्न सदृश मानते हैं । उनकी भक्ति से प्रभावित होकर स्वामी रामानन्द उसे शिष्य बना लेते हैं । शिष्य रैदास से मिलकर कबीर प्रसन्न हो जाते हैं । धीरे धीरे उनकी कीर्ति फैल गई । उनकी भक्ति का परिचय पाकर झाली रानी उनके दर्शन करने केलिए आती हैं । रानी, रैदास और लोना को चितौड ले जाती है और वे रैदास को अपना गुरु मानती हैं । रैदास की भक्ति से वे इतना प्रभावित हो जाती हैं कि उनके पद चिह्न जहाँ पर थे वहाँ स्मृति का चिह्न बनवाया । बडे बडे शास्त्र पंडित उनके पद पर शीश झुकाने लगे । इस प्रकार प्रस्तुत खण्डकाव्य में एक भक्त और विरागी के रूप में उनका चित्रण हुआ है ।

उनके व्यक्तित्व की अन्य पहलू है कवि व्यक्तित्व । भगवान के कीर्तन करनेवाले रैदासजी के मुँह से अनायास कविता की पंक्तियाँ निकलने लगीं । वर्माजी ने रैदासजी के कवि व्यक्तित्व को प्रस्तुत करने केलिए स्वयं रैदासजी की पंक्तियाँ उद्धृत किये हैं जिनसे पाठक उनके कवि व्यक्तित्व से परिचित हो जाते हैं । रामानन्द के दर्शन करने केलिए आए रैदास स्वयं उनके कहे अनुसार एक काव्य सुनाते हैं ।[1] यह सुनकर रामानन्द बहुत प्रसन्न हो जाते हैं और कहते हैं -

"मेरे प्रिय रैदास । तुम्हारी भक्ति ठीक है,
और काव्य भी आत्म-समर्पण का प्रतीक है ।
हुए आज से शिष्य हमारे सम्मुख आओ,
मेरे कर से प्रभु-प्रसाद तुम निर्भय पाओ ।"[2]

उनके काव्य में आत्मसमर्पण की भावना स्पष्ट रूप से झलकती है । प्रस्तुत खण्डकाव्य "संत रैदास" में रैदासजी के भक्त और कवि व्यक्तित्व का चित्रण हुआ है ।

---

1. सन्त रैदास - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 65.
2. वही - पृ: 66.

इस रचना के अन्य गौण पात्र हैं रैदास के पिता रघु, रैदास की पत्नी लोना, सन्त प्रेमानन्द, स्वामी रामानन्द और चितौड़ की झाली रानी । आगे रैदास के पिता और उनकी पत्नी के चरित्र का संक्षिप्त परिचय देते हैं ।

प्रारंभिक तीन सर्गों में पाठक को रैदास के पिता रघू का परिचय मिलता है । प्रारंभ में पुत्रजन्म के कारण आनन्दित पिता के रूप में उसका चित्रण किया है -

"जोड़ हाथ बार बार द्वार द्वार बैठ कर,
थे रघू प्रसन्न यहाँ बैठ, वहाँ पैठकर ।
चुम्बकीय यंत्र की सुई समान हो रहे,
घूम सभी ओर पुत्र-कक्ष की दिशा गहे ।"[1]

वह रैदास की भक्ति भावना का विरोधी था । वह उन्हें काम काज करने को प्रेरित करता रहा -

"सिखाऊँगा तुझको सभी काम मैं,
कि जिसमें कमाऊँ बडे दाम मैं ।
जो है काम कुल का उसे तू करे,
न कह "राम सीता" न "किसना" "हरे" ।"[2]

वह अपने पूत्र को कुल का काम सिखाना चाहता है जिससे उनका जीवन यापन होता है । वे पद-त्राण बनाने लगे । रैदास, बिना मूल्य लिये सन्तों को पद-त्राण देते देखकर उनके पिता क्रुद्ध हो जाता है क्योंकि इस प्रकार व्यवसाय की हानि होती रही । अन्त में वह क्रुद्ध होकर रैदास को घर के पीछे चले जाने का आदेश देता है ।[3]

---

1. सन्त रैदास - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 9.
2. वही - पृ: 19.
3. वही - पृ: 27.

रैदास की पत्नी लोना उनके भक्ति-भाव का पोषण करनेवाली है । वह उनकी भक्ति-भावना में साथ देती है -

"लोना भी उनके पीछे रहती है लघु-छाया-सी,
प्रभु सेवा में लीन, रही वह नाम-मात्र जाया सी ".[1]

लोना रैदास के पीछे उनके हर काम में साथ देती रही । रात में वह पति के स्वर में स्वर मिलाकर कीर्तन करती थी । रैदास द्वारा रचित सभी पद उनको कंठस्थ थे । इसी प्रकार प्रस्तुत खण्डकाव्य में लोना रैदास की सहवर्तिनी के रूप में पाठक के सम्मुख आती है ।

रस

इस विवेच्य खण्डकाव्य में प्रमुख रूप से शान्त रस की योजना हुई है । इस ग्रंथ की भूमिका में वर्माजी ने स्वयं इसकी ओर संकेत किया है ।[2] यह खण्डकाव्य रैदास की भक्ति भावना से ओतप्रोत है । भक्त कवि के रूप में उनका चित्रण हुआ है । एक भक्त का मन कभी भी सांसारिक आकर्षणों में नहीं रमता । वह प्रभु को ही अपना सर्वस्व मान लेता है । उसी प्रकार सन्त रैदास के मन में कभी भी इन आकर्षणों के प्रति मोह नहीं रहता । इतना ही नहीं वे स्वयं बनाये पद-त्राणों को बिना मूल्य लिये देते हैं । वे अपने प्रभु को रत्न समान मानते हैं । एक दिन स्वामी प्रेमानन्द का उन्हें पारस पत्थर देना और उसे माया का द्वार समझकर उनका अस्वीकार करना जैसी घटना में शान्त रस की योजना हुई है -

"देखो, यह पारस पत्थर है,
इसको कर लो अंगीकार,
xx xx xx xx
बोले वे कर जोड़ - "महाप्रभु ।
पारस है न मुझे स्वीकार,

---

1. सन्त रैदास - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 92.
2. वही - पृ: 14.

मूल्यवान हो किन्तु मुझे यह
लगता है माया का द्वार ।
इसके द्वारा स्वर्ण बनेगा
वह उत्पन्न करेगा मोह,
स्वार्थ बढ़ेगा और परस्पर
इसके द्वारा होगा द्रोह ।"[1]

यहाँ स्थाई भाव-निर्वेद, आश्रय-सन्त रैदास, आलम्बन विभाव-पारस पत्थर को माया का द्वार समझना, {जगत् की असारता का बोध} उद्दीपन विभाव- यह ज्ञान कि स्वर्ण जो मोह और स्वार्थ को उत्पन्न करनेवाला है, अनुभाव-हाथ जोडना और संचारी भाव वैराग्य है । इसमें स्थाई भाव निर्वेद विभाव, अनुभाव और संचारी भाव के संयोग से शान्त रस में परिणत हुआ ।

अनपढ़ होते हुए भी रैदास जी अपनी काव्य कुशलता का जो परिचय देते हैं वह श्रोता के मन में अद्भुत रस की उद्भावना में सहायक है -

"रविदास-कक्ष के समीप हो रही है भीड़,
सभी प्रेम - मग्न हुए, बही रस-धारा है ।
xx xx xx xx
देखो, रविदास अति-प्रेम-भाव-मग्न होके,
अपना सरस गीत स्वर से सुनाते हैं ।
रागिनी के सारे स्वर, उत्सुक हैं कंठ में आ,
और अलंकार स्वयमेव चले आते हैं ।

---

1. सन्त रैदास - डॉ. रामकुमार वर्मा - "भूमिका" - पृः 44-45.

आँखें बन्द करते हैं, श्याम पुतलियों बीच,
राम-श्याम बार बार आकर समाते हैं ।
नाम जैसे शब्द-गुण देता रविदास को है,
सुनें सन्तों-बीच अहा ! किस भाँति गाते हैं ।"[1]

यहाँ स्थाई भाव-विस्मय या आश्चर्य, आलंबन विभाव-अनपढ़ रैदास की अमोघ काव्य-प्रतिभा, उद्दीपन विभाव-प्रेम भाव में मग्न होकर मधुर स्वर में उनका गायन, अनुभाव-प्रेम मग्न होकर लोगों का इकट्ठा रहना, संचारी भाव- उनका गायन सुनकर प्रेम मग्न होकर रहना ।

प्रकृति चित्रण

प्रस्तुत खण्डकाव्य में प्रकृति चित्रण की योजना भी हुई है । पाँचवें सर्ग में वर्माजी ने स्वामी रामानन्द का परिचय प्रस्तुत करते समय आलंबन रूप में प्रातःकालीन प्रकृति का वर्णन किया है -

"एक दिवस जब उषाकाल की विमल घड़ी थी,
नभ रंजित था और धरा पर शान्ति बड़ी थी ।
मलय समीरण मन्द जाह्नवी छू कर आयी,
पुष्पों की मृदु सुरभि सकल आश्रम पर छायी ।"[2]

उपर्युक्त पंक्तियों में प्रशान्त वातावरण से युक्त आश्रम का वर्णन है । दो स्थानों पर उपमान रूप में प्रकृति का सहारा लिया है -

"स्वर्णिम-अलिनी मुख धोये,
जैसे कि पुष्प परिमल में ।"[3]

---

1. सन्त रैदास - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 29-30.
2. वही - पृ: 59.
3. वही - पृ: 76.

इन पंक्तियों में झाली रानी के गंगा में उतरने का चित्रण है जिसकी उपमा पुष्प के परिमल में अलिनी के मुख धोने से की है । अन्य स्थान में उपमान रूप में प्रकृति का चित्रण मिलता है । यथा -

"इतना कह रानी के मुख
पर मुस्कान खिली थी,
जैसे कि कमल के दल से -
रवि की नव किरण मिली थी ।"[1]

रानी के मुस्कान की तुलना कमल की पंखुडी में पड़नेवाली सूरज की नव किरण से की है ।

सर्गबद्धता

प्रस्तुत खण्डकाव्य का कथानक सर्गबद्ध है । यह सात सर्गों में आबद्ध खण्डकाव्य है । इसमें वर्माजी ने सर्गों का नामकरण नहीं किया है । खण्डकाव्य का नामकरण वर्माजी ने इसका नायक सन्त रैदास के नाम पर किया है । महाकाव्य के समान इसमें भी मंगलाचरण की योजना हुई है । इसमें वर्माजी ने श्रीराम और सरस्वती की वन्दना की है । इसके अतिरिक्त एक 'प्रस्तावना' भी लिखा है जिसमें वर्माजी ने समाज में मानव की समानता पर ज़ोर देते हुए अपना विचार प्रस्तुत किया है । वर्गहीन समाज की स्थापना ही उनका अभीष्ट है ।

छन्द

वर्माजी ने महाकाव्य के समान प्रत्येक सर्ग अलग अलग छन्दों में लिखा है । उन्होंने दूसरे सर्ग में उर्दू शैली का छन्द अपनाया है । घनाक्षरी, वीर, छप्पय, हरणी, राधिका, सरसी आदि छन्दों में प्रस्तुत खण्डकाव्य की रचना की गई है ।

---

1. सन्त रैदास - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 85.

बालि वध

डॉ. रामकुमार वर्मा ने सन् 1989 ई. में इस समस्या मूलक काव्यांग की रचना की । वर्माजी ने इस रचना के माध्यम से उस समस्या का समाधान किया है कि श्रीराम ने "विटप ओट" से बालि का वध क्यों किया? उन्होंने स्वयं इस काव्यांग के प्रारंभ में अपनी रचना के लक्ष्य की ओर इशारा की है - "शक्तिशाली श्रीराम ने "विटप ओट" से "बालि वध" क्यों किया, किस कारण उन्हें "व्याध" कहकर लांछित किया गया । श्रीराम का "विटप ओट" से बालि को मारने का क्या औचित्य था, इसके स्पष्टीकरण के लिए अनेक विद्वानों, राम-कथा के प्रेमियों और मित्रों का आग्रह था । सारी परिस्थितियों पर विचार करने के उपरान्त मैं इसी निष्कर्ष पर पहुँचा कि श्रीराम का वानर बालि को विटप ओट से मारना ही एक मात्र विकल्प था । इसी दृष्टि से मैं ने इस काव्यांग की रचना की ।"[1] वर्माजी ने श्रीरामचन्द्र की वाणी से ही इस समस्या का समाधान किया है । इस रचना में भी कवि ने मंगलाचरण का पालन किया है जो विद्वानों द्वारा महाकाव्य का लक्षण स्वीकार किया है । आगे इस काव्यांग का विस्तार से विवेचन करेंगे ।

कथानक

प्रस्तुत रचना के कथानक का आधार पौराणिक है । "प्रवेशक" से इसका कथानक शुरू होता है । सारे कपि सैनप राम के पास खडे हुए थे । इन वानरों की शंका थी कि जब बालि ने सुग्रीव को भारी वज्र-चोट से व्याकुल किया तब पूर्ण शक्तिशाली राम ने ओट से छिपकर बालि को क्यों बाण मारा? कवि गण के इस प्रश्न के उत्तर रूप में इस रचना के कथानक की योजना हुई है । श्रीराम ने यह उत्तर दिया कि तुम्हारे मन में यह सन्देह उत्पन्न हो गया है कि मैं ने क्यों दुःखी सुग्रीव से स्नेह किया और वृक्ष की ओट से तीक्ष्ण शर-संधान करके बालि को मारा । बालि ने व्यंग्य स्वर से यह कह दिया

---

1. बालि वध - डॉ. रामकुमार वर्मा - "इस रचना के संबन्ध में" - पृ: 8.

मैं व्याध हूँ जबकि स्वयं उसने ही घोरतम अपराध किया था । वह स्वयं व्याध और पिशाच था । उसने सती और असहाय अनुज पत्नी को वासना के विष से भरे नाराच से मारा । ऐसे अधम को मारना क्या अन्याय हुआ । व्याध तो वह है जो अज्ञात होकर आक्रमण करते हैं । मैं तो अज्ञात नहीं हूँ सबको मेरा आगमन ज्ञात है । स्वयं हनुमान ने अपने कंधों पर चढ़ाकर, सम्मान देकर मुझे यहाँ लाया है और तारा ने बालि को यह उपदेश दिया था कि राम और लक्ष्मण हमारे देश आ पहुँचे हैं । उसने बालि को यह समझाया कि ये दोनों आपका अहंकार चूर्ण करेंगे, उनको जीतना असंभव है । इसलिए उनको अपना मित्र बना लें । लेकिन मरकट बालि को अपनी शक्ति का अभिमान था । इसलिए मैं ने तीर का सन्धान किया । यह तो सच है कि मैं ने ओट से ही बाण मारा । लेकिन मेरा आघात स्पष्ट था ।

आगे श्रीराम उन्हें यह समझाते हैं कि उन्होंने क्यों बालि-वध में शीघ्रता की । उनके वनवास की दुर्वह अवधि पूर्ण होने के लिए एक वर्ष भी कम था उसी समय सीता का हरण हो गया था । लक्ष्मण के साथ उनकी खोज की गई । लेकिन कोई पता नहीं चला । अन्त में जटायु ने यही कहा कि रावण सूने आश्रम से सीता को ले गया है । फिर सुग्रीव ने कुछ आभूषण और वस्त्रों को दिखलाकर, जिन्हें सीता ने मार्ग में गिराया था, मुझे सांत्वना दी थी । रावण का राज्य तो शत शत योजनों में व्याप्त है और उसने अपने बाहुबल से विश्व को अधीन बनाया है । देव, यक्ष और किन्नर उसके दास हैं और उसके इन्द्र को भी जीत लेने वाला पुत्र है । वनवास की अवधि पूर्ण होने केलिए केवल कुछ महीने ही बाकी हैं और सीता की खोज करने में कौन मेरी सहायता करेगा यही मेरा दुःख था

यदि मैं ने युद्ध करने केलिए स्वयं बालि को ललकारा तो जीतने केलिए बालि स्वयं आप सब वानरों को न ढकेलता ' आप सब उसके वीर सैनिक थे और उसका आदेश पाकर युद्ध में लड़ेंगे ' लेकिन सुग्रीव के पास केवल चार मंत्री थे । यदि युद्ध हो जाय तो प्रथम मेरा युद्ध आप से होगा और सब यह जानते हैं कि मेरे तीक्ष्ण तीर क्षण में ही विपक्षी को समाप्त कर देते हैं । मैं यह जानता हूँ कि बालि सब प्रकार से अजेय है ।

सुरेन्द्र द्वारा दी गयी माला से वह शक्तिशाली था । बालि वध होने के बाद वीर सुग्रीव किष्किंधा के सर्वमान्य राजा बन गए हैं । और तुम वीर वानर उनके अधीन होकर उनकी सेवा करके अपने को धन्य मानोगे । मेरा मित्र सुग्रीव वानरों को साथ लेकर सीता की खोज करेंगे यदि तुम सब युद्ध में घायल हो जाये तो सुग्रीव क्या अकेले सीता की खोज कर पाते' यदि रावण ने अन्य स्थान छोडकर लंका में ही सती सीता को रखा होगा तो इस लंका में कौन पहुँच सकता है जो सौ योजन समुद्र से घिरा हुआ है । उसके पास तो केवल चार मंत्री हैं तब वे कैसे सिन्धु पार करने केलिए सेतु बाँध सकते हैं और रावण के वीरों से युद्ध करने केलिए सेना कहाँ मिलती' उस घोर युद्ध में अनेक दिन बिताना पडेगा जबकि एक दिन भी मुझे भारी है । आप किस प्रकार दशमुख से लोहा लेंगे जो बाहुबल से मंडलीक मणि है । मुझे यही चिन्ता है कि एक क्षण का वियोग भी जिसको असह्य है वह सती सीता रावण की लंका में कैसे जीवित रहेगी । एक बात और है जो कील के समान कसकती है । भरत ने मुझसे चित्रकूट में कही थी "यदि वनवास की अवधि बीत जाने पर भी आप नहीं आये तो मैं आत्मदाह करूँगा ।" सीता और भाई की अवधि यदि बीत गई तो मैं कैसे अयोध्या जाकर अपना मुख दिखलाऊँगा' मेरे पास केवल चार मास की अवधि है तब मैं बालि को सगर्व कैसे युद्धदान दे सकूँ' मित्र की प्राण रक्षा के लिए बालि से युद्ध करने केलिए और सीता की रक्षा के लिए रावण से युद्ध करने केलिए जितना समय लग जायेगा उतना समय वनवास की अवधि में शेष नहीं था । इसीलिए मैं ने बालि-वध शीघ्र किया । लंका में सती सीता जो मेरी प्रतीक्षा करती रहती है उनका उद्धार करना मेरा प्रण है और वनवास की समाप्ति होने तक मुझको भरत के पास जाकर उसको बचाना है । बालि ने भले ही क्रोध से मुझे व्याध कहा सम्मुख समर करने की स्थिति टाली है इससे कपि सेना को रक्तपात से बचाया । इसीलिए मेरी युक्तिपूर्ण नीति से तीन व्यक्तियों-सुग्रीव, सीता और भरत - के प्राणों की सुरक्षा हो गई । मेरा प्रण जो था उसे मैं ने न्याय से निभाया है । बालि के निधन पर उसकी सारी सेना हनुमान के साथ सीता को खोज लेगी । मैं वनवास पूर्ण करके अवध लौटूँगा और भरत भाई को भुज-भर भेटूँगा ।

वीर हनुमान जो वहाँ चुपचाप बैठे थे इस प्रकार बोले - यदि कोई भी यह कहेगा कि प्रभु राम ने व्याध रूप में बालि-वध छल से किया है तो मैं वज्र हाथों से उसका वध करूँगा ।

प्रभु की अर्थमयी वाणी से सत्य साकार हो गया था और आसमान में प्रभु का जयजयकार अविरल गूँज रहा था ।

चरित्र चित्रण

प्रस्तुत रचना का प्रमुख पात्र है श्रीराम । इस काव्यांग में युक्तिपूर्ण कथन द्वारा अपने भक्तों की शंका दूर करनेवाले राम का चित्रण ही आद्यन्त हुआ है । साथ ही इसमें पत्नी वियोग से दुःखी पति और भ्रातृस्नेही का चित्रण भी मिलता है ।

वानरों का सन्देह यह था कि श्रीराम ने क्यों विटप की ओट से शर-संधान करके बालि को मारा' वे इसका युक्तिपूर्ण उत्तर देते हैं और उनका कथन सुनकर उनकी शंका दूर हो जाती है और यह कार्य वे उचित ही समझते हैं । श्रीराम का युक्तिसंगत कथन यह है कि वनवास की अवधि पूर्ण हो जाने केलिए एक वर्ष भी नहीं है । उसी समय सीता का हरण हो गया था । युद्ध करके बालि को हराना सुग्रीव के वश में नहीं है और युद्ध में उनकी मृत्यु अवश्य हो जायेगी । यदि बालि के साथ युद्ध हो जाय तो श्रीराम के तीक्ष्ण तीर से शत्रुदल का सर्वनाश हो जायेगा । सारी सेना उनके तीर से कट जाने पर बालि स्वयं युद्ध के लिए आएगा । इन्द्र द्वारा दिये गये वरदान से उन्हें शत्रु का आधाबल प्राप्त होगा । युद्ध जल्दी से समाप्त नहीं होगा और श्रीराम को यह ज्ञात है कि अपना बल पूर्ण ही रहेगा । उनका कथन है -

"जानता हूँ बालि सब भाँति से अजेय था ।
वह बलशाली था सुरेन्द्र-दत्त माला से
जो कि युद्ध-हेतु आता उसके समक्ष था
उसका समस्त बल आधा रह जाता था ।

किन्तु मेरा बल घट कर भी सम्पूर्ण है
पूर्ण से भी पूर्ण जाने पर शेष पूर्ण है
किन्तु यह बात स्पष्ट करने की है नहीं
मात्र अनुभव द्वारा यह जाना जाता है ।"[1]

भरत ने चित्रकूट में यह बात कही थी कि -

"वनवास की अवधि बीत जाने पर भी
आये नहीं आप तो करूँगा आत्मदाह मैं ।"[2]

भाई का यह प्रण भी उन्हें शीघ्र बालि वध करने केलिए प्रेरित किया । चार मास की अवधि ही बाकी है । अतएव सीता, भरत और सुग्रीव की प्राणरक्षा हेतु उन्होंने बालि से युद्ध नहीं किया । विटप की ओट से शर संधान करके उनका वध किया । इस प्रकार अपने युक्तिपूर्ण कथन से शंका दूर करने में वे सफल हुए ।

वानरों से बालि वध का कारण बताते समय जब उनके मुख में "सीता" शब्द आते हैं तब सीता के वियोग से दुःखी श्रीराम का चित्रण स्वयं वर्माजी के शब्दों में -

"सीता" शब्द आया ज्यों ही कंठ पर सहसा
लोचनों में अश्रुओं के बिन्दु लघु छलके,
जैसे एक क्षण में ही प्रेम की तरंगिनी
कुछ झुके वर्तुल किनारों पर हो रुकी ।"[3]

पत्नी वियोग से दुःखी राम का चित्रण उपर्युक्त पंक्तियों में मिल सकते हैं । वे सीता की खोज में इधर उधर भटकते हैं और जब जटायु उससे यह बताते हैं कि रावण ने उसकी चोरी की है तब वे अधिक दुःखी हो जाते हैं । वे इस प्रकार सोचते हैं -

---

1. बालि वध - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 39.
2. वही - पृ: 44.
3. वही - पृ: 32.

"एक क्षण का वियोग जिसको असह्य है
वह सती सीता कैसे रावण की लंका में
जीवित रहेगी मुझे यही एक चिन्ता है
उसके उद्धार हेतु शीघ्र ही प्रयत्न हो ।"[1]

श्री राम की चिन्ता यह है कि जिस सीता को वियोग का एक क्षण भी असह्य है ऐसी सीता रावण की लंका में कैसे जीवित रहेगी और वे उसके उद्धार के हेतु शीघ्र प्रयत्नशील हो जाते हैं । इस प्रकार पत्नी वियोग से दुःखी पति के रूप में राम का चित्रण हुआ है ।

इनके चरित्र का एक अन्य रूप है भातृस्नेही का । भाई को आत्मदाह से बचाने के लिए वे तुरन्त ही बालिवध करते हैं और रावण का वध करके सीता को स्वतन्त्र बनाती है और वनवास की अवधि पूर्ण होने पर अयोध्या पहुँचते हैं ।

रस

इस काव्यांग में करुण रस की योजना हुई है । जहाँ सीता हरण के बारे में स्वयं राम वानरों से बताते हैं -

"बात यह है कि जब मेरे वनवास की
दुर्वह अवधि एक वर्ष से भी कम है
हो गया हरण तब । मेरी सती सीता का
जो कि कभी स्वप्न में भी सोचा नहीं हमने ।
"सीता" शब्द आया ज्यों ही कंठ पर सहसा
लोचनों में अश्रुओं के बिन्दु लघु छलके ।"[2]

---

1. बालि वध - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 43.
2. वही - पृ: 32.

इसमें स्थाई भाव शोक है, आलंबन विभाव-वियुक्त सीता उद्दीपन विभाव-सीता हरण का स्मरण तथा तत्संबन्धी कथन, अनुभाव-आँखें भर आना, संचारी भाव-विषाद । यहाँ विभाव, अनुभाव और संचारी भाव के संयोग से करुण रस की निष्पत्ति हुई है ।

प्रकृति चित्रण

प्रस्तुत रचना में केवल अलंकार रूप में ही प्रकृति का चित्रण मिलता है । एक स्थान पर कवि ने श्रीराम की आँखों की तुलना नील इंदीवर से की है -

"नील इंदीवर सदृश थे नेत्र नीचे"[1]

दूसरे स्थान पर श्रीराम की मन्द मुस्कान की तुलना आसमान में प्रकाशित चाँदनी से की है -

"प्रभुवर राम हँसे अति सौम्य भाव से
जैसे पूर्ण चन्द्र का प्रकाश खिले व्योम में ।"[2]

उपर्युक्त पंक्तियों में श्रीराम के मन्द मुस्कान की तुलना आसमान में खिले पूर्ण चन्द्र के प्रकाश से की है ।

एक अन्य स्थान पर श्री राम के सम्मुख खडे हुए वानरों की पंक्ति का चित्रण देखिए -

"वानरों की पंक्ति भी उद्ग्रीव थी उस ओर
विविध रँग के बादलों से ज्यों उदित हो भोर ।"

---

1. बालि वध - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 23.
2. वही - पृ: 24.

उपर्युक्त पंक्तियों में वानरों की पंक्ति की तुलना विविध रंग के बादलों से उदित भोर से की है । इस प्रकार विवेच्य खण्डकाव्य "बालि वध" में कवि ने प्रकृति को केवल उपमान रूप में ही गृहीत किया है ।

इस काव्यांग को कवि ने सर्ग बद्ध नहीं किया है । इस रचना को प्रेरणा, "प्रवेशक" और "मंगलारंभ" जैसे तीन भागों में बाँट दिया है ।

प्रस्तुत रचना में मंगलाचरण की योजना है जिसमें रामदूत हनुमान की वन्दना की है । प्रस्तुत रचना का नामकरण घटना को आधार बनाकर किया गया है ।

निष्कर्ष

कथानक की दृष्टि से देखें तो डॉ. वर्मा ने खण्डकाव्य के प्रणयन के लिए ऐतिहासिक, काल्पनिक और पौराणिक विषयों को अपनाया है । प्रमुख रूप से उनकी दृष्टि ऐतिहासिक घटनाओं पर आधारित है । उनकी राष्ट्रीय भावना और मानवतावादी विचारधारा की अभिव्यक्ति क्रमशः "वीर हमीर", "चितौड की चिता" और "सन्त रैदास" में हुई है । महाकाव्य के समान खण्डकाव्य की रचना में एक विशेष प्रवृत्ति दृष्टिगत होती है वह है पौराणिक पात्रों के चरित्र पर लगे कलंक को दूर करना । यह प्रवृत्ति उनके समस्या मूलक काव्यांग "बालि वध" में अभिव्यक्त हुई है । उनके सभी खण्डकाव्यों में प्रसंगवश प्रकृति चित्रण की योजना हुई है । उनका खण्डकाव्य "वीर हमीर" में गीत योजना का विशेष प्रयोग है । वर्माजी के खण्डकाव्य "संत रैदास" और "बालि वध" में मंगलाचरण की योजना हुई है । आकार की दृष्टि से देखें तो "चितौड की चिता" और "निशीथ" अपेक्षाकृत बहुत बडा है । वर्माजी ने "संत रैदास" के अतिरिक्त अन्य खण्डकाव्यों में बीच में छन्द परिवर्तन नहीं किया है । अर्थात् उन्होंने प्रत्येक खण्डकाव्य में एक एक छन्द का ही प्रयोग किया है । किन्तु "संत-रैदास" में अलग अलग छन्दों का प्रयोग हुआ है ।

अध्याय - चार

रामकुमार वर्मा के गीतिकाव्य का विश्लेषण

गेयता या गीतात्मकता भारतीय काव्य धारा का मूल लक्षण है । हिन्दी में जो गीतिकाव्य शब्द प्रचलित है वह अंग्रेज़ी शब्द लिरिक का समानार्थी है । अनेक भारतीय और पाश्चात्य विद्वानों ने गीतिकाव्य की परिभाषा की है । विद्वानों द्वारा दी गई परिभाषाओं के आधार पर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि आत्माभिव्यंजना, संगीतात्मकता, अनुभूति का वैशिष्ट्य एवं उसकी पूर्णता, भावों का ऐक्य एवं संक्षिप्तता गीतिकाव्य के मूल तत्व हैं । आगे इन तत्वों के आधार पर वर्माजी के गीतिकाव्यों का विश्लेषण करेंगे । वर्माजी के सात गीतिसंग्रह हैं - "अभिशाप", "अंजलि", "रूपराशि", "चित्ररेखा", "चन्द्रकिरण", "संकेत" और "आकाश-गंगा" । "अंजलि", "रूपराशि", "चित्ररेखा", "चन्द्रकिरण" और "आकाश-गंगा", "गजरे तारों वाले" नामक संग्रह में संग्रहीत हैं जिसे हमने अपने अध्ययन का आधार माना है । "अभिशाप" और "संकेत", "आधुनिक कवि-3" में संकलित हैं । इसके अतिरिक्त "एकलव्य" और "ओ अहल्या" इन दो महाकाव्यों में तथा "वीर हमीर" खण्डकाव्य में यत्रतत्र गीतियोजना हुई है ।

1. आत्माभिव्यंजना

आत्माभिव्यंजना गीतिकाव्य का सर्व प्रमुख तत्व है । गीतिकाव्य में कवि के वैयक्तिक सुख-दुःख, हर्ष-शोक आदि भावनाओं का प्रतिफलन होता है । कवि के वैयक्तिक सुख-दुःख की अभिव्यक्ति गीतिकाव्य का प्रधान तत्व है । महादेवी वर्मा ने

गीतिकाव्य के इस तत्व की प्रधानता को स्वीकार किया है । इसकी विशेषता यह है कि वैयक्तिक होने पर भी पाठक उससे तादात्मय प्राप्त कर लेता है । डॉ. शकुन्तला दूबे के शब्दों में - "प्रत्युत आत्माभिव्यंजना सच्चे अर्थों में उसी को कहते हैं जहाँ कवि की आत्मा अखिल विश्व की आत्मा के साथ तदाकार हो अपना प्रकाशन करे । ऐसी आत्माभिव्यंजना का स्वरूप व्यक्तिगत होते हुए भी सार्वजनीनता को अपनाये हुए रहता है । आशय यह कि गीतिकाव्य में गीतिकार की निजी अनुभूति की व्यक्तिगत रूप में अभिव्यंजना तो होती है, किन्तु उसके स्वरूप की सार्वभौमिकता पाठक में तदनुरूप अनुभूति जागृत कर देती है ।"[1] कवि की वैयक्तिक अनुभूति पाठक में भी तदनुरूप अनुभूति जागृत करने में सक्षम है । कभी कभी कवि की वैयक्तिकता बहिर्मुखी हो जाती है । अर्थात् कवि किसी पात्र की भावनाओं से तादात्म्य प्राप्त करके उसके माध्यम से अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त करता है । इसमें भी कवि की आत्माभिव्यक्ति ही झलक उठती है । गीतिकाव्य में कवि के व्यक्तित्व की छाप प्रकट होती है । वैयक्तिकता की प्रधानता एवं रागात्मक तत्वों की तीव्रता के कारण व्यक्तिगत मौलिक उद्भावनाओं की अभिव्यक्ति होती है ।

कविता कवि-जीवन की अभिव्यक्ति है । गायक वर्माजी के गीतों में उनके जीवन की अभिव्यक्ति स्पष्ट रूप से झलकती है । स्वयं वर्माजी के शब्दों में - "कविताओं में मेरे जीवन की अभिव्यक्ति होती है ।"[2] आत्माभिव्यंजना का एक प्रकार है किसी बाह्य वस्तु पर अपनी भावनाओं का आरोप करना । "एकान्तगान"[3] शीर्षक गीत में इसी पद्धति का प्रयोग किया है । निर्जन वन में बहनेवाली निर्झर जो कठिनाइयों का सामना करते हुए अपने प्रियतम से मिलने के लिए निरन्तर आगे बढ़ रही है वह कवि की आत्मा है जो परमात्मा से मिलने केलिए निरन्तर साधना कर रही है । इस गीत में कवि ने परमात्मा से बिछुड़े अपनी आत्मा का आरोप उस निर्झर पर किया है ।

---

1. काव्यरूपों के मूलस्रोत और उनका विकास - डॉ. शकुन्तला दूबे - पृ: 287.
2. आधुनिक कवि - 3 - पृ: 7.
3. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 9.

कवि ने प्रत्यक्ष आत्माभिव्यंजना द्वारा परमात्मा के साथ अपना अटूट संबन्ध स्थापित किया है जो आत्माभिव्यंजना का एक अन्य प्रकार है -

"मैं तुम्हारे पास हूँ ।
तुम सुमन हो, मैं तुम्हारी
मंद मुग्ध सुवास हूँ ।"[1]

सांसारिक नश्वरता देखकर कवि के मन में पीडा, दुःख और निराशा का उदय होता है । उनके मन में एक प्रकार की अशान्ति भरी रहती है । कवि-मन की उस अशान्ति ही "अशान्त"[2] शीर्षक गीत में अभिव्यक्त हुई है । सांसारिक आकर्षणों में उलझकर रास्ता भटकने वाली दुःखी आत्मा का जो कराह "मैं भूल गया कठिन राह" गीत में सुन सकते हैं, वह पाठक के मन में भी तदनुरूप अनुभूति उत्पन्न करने में सक्षम है । कवि की वैयक्तिक अनुभूति से पाठक तादात्म्य प्राप्त कर लेता है -

"कितने दुख, बन कर विकल साँस
भरते हैं मुझमें बार बार,
वेदना हृदय बन तडप रही
रह रह कर करती है प्रहार ;"[3]

कवि के मन में दुःख विकल साँस बनकर भर रहे हैं । वेदना उसके हृदय में प्रहार करती है जिससे वह तडप रही है । इतना ही नहीं कवि को यह महसूस हो रहा है कि स्वयं उनके समान निर्झर भी किसी दुःख के कारण आँसू बहा रही है ।

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 272.
2. वही - पृ: 80.
3. वही - पृ: 193.

संगीतात्मकता

गीतिकाव्य में संगीतात्मकता का स्थान महत्वपूर्ण है । पाठक या श्रोता के मन में भावों का सहज प्रभाव डालने में संगीतात्मकता का स्थान महत्वपूर्ण है । वह भावचित्र को स्पष्ट करता है । संगीत के बिना गीतिकाव्य की अभिव्यक्ति अधूरी रह जाती है । मानव भावनाओं से उसका घनिष्ठ संबन्ध होता है । गीतिकाव्य में संगीतात्मकता को प्रमुख स्थान देते हुए डॉ. शकुन्तला दूबे ने स्पष्ट किया है - "...जब भाव अति संगीतात्मक रूप से शब्दों के माध्यम द्वारा फूट पडते हैं, तब गीतिकाव्य का जन्म होता है ।"[1] अलंकार गीतिकाव्य की संगीतात्मकता को अभिवृद्ध करते हैं । समुचित ध्वनि योजना द्वारा गीतिकाव्य अधिक संगीतात्मक हो जाता है । गीतिकाव्य में संगीतात्मकता का स्थान निर्धारित करते हुए डॉ. गणेश खरे ने अपना मत प्रकट किया है - "जिस प्रकार बिना आत्मा के शरीर और बिना शरीर के आत्मा का अस्तित्व नहीं होता , उसी प्रकार बिना आत्मानुभूति और संगीतात्मकता के प्रगीत का परिपूर्ण स्वरूप नहीं बनता ।"[2] संगीतात्मकता का आधार छन्द है । छन्द की संगीतात्मकता हमारी सूक्ष्म भावनाओं को स्पर्श करके शब्दों में भावानुरूप उत्तेजन भरती है । गीतिकाव्य में छन्द भावों को तीव्र बनाते हैं और भावों की तीव्रता के साथ संगीत फूट पडता है । गीतिकाव्य में छन्द की सहकारिता आवश्यक है । लय और अन्त्यानुप्रास के योग से उसका माधुर्य द्विगुणित हो जाता है । महादेवी वर्मा और रामदहिन मिश्र ने गीतिकाव्य की संगीतात्मकता पर ज़ोर दिया है ।

वर्माजी की गीतियाँ संगीतात्मक हैं । डॉ. गणेश खरे ने "आधुनिक प्रगीत काव्य" में वर्माजी के गीतिकाव्यों की चर्चा करते हुए अपना मत प्रकट किया है -

---

1. काव्य रूपों के मूल स्रोत और उनका विकास - डॉ. शकुन्तला दुबे - पृ: 293.
2. आधुनिक प्रगीत काव्य - डॉ. गणेश खरे - पृ: 25.

"एक कुशल गायक तथा संगीत-प्रेमी होने के कारण उनके गीत संक्षिप्त, सुगेय और कलात्मक हैं।"[1] "चित्ररेखा" में संकलित "निस्पन्दतरी, अति मन्द तरी"[2] गीत संगीतात्मकता की दृष्टि से सफल गीत है। अन्त्यानुप्रास के प्रयोग से गीतिकाव्य की संगीतात्मकता में वृद्धि होती है। देखिए "चन्द्रकिरण" में संकलित यह गीत -

"करुणा की आई छाया।
कोकिल ने कोमल स्वर भर कुंजों - कुंजों में गाया।
जब विश्व व्यथित था, तुमने अपना संदेश सुनाया,
तरु के सूखे-से तन में नव-जीवन बनकर आया।"[3]

उपर्युक्त पंक्तियों में अन्त्यानुप्रास की योजना - "या" - से गीत अधिक संगीतात्मक और सुगेय बन गये हैं। अन्त्यानुप्रास से युक्त अनेक गीत उनके गीति संग्रहों में उपलब्ध हैं।

अन्यत्र कवि ने कोमलकान्त पदावली का ऐसा प्रयोग किया है जिसमें अनुप्रास के माध्यम से संगीतात्मकता बढ़ गयी है -

"अविचल चल, जल का छल छल,
गिरि पर गिर गिर कर कल कल स्वर।
पल पल में प्रेमी के मन में,
गूँजे, ओ विरही निर्झर!"[4]

उपर्युक्त पंक्तियों में "ल", "छ", "ग", "र" जैसे व्यंजनों की आवृत्ति से अनुप्रास की योजना हुई है जो नाद सौन्दर्य उत्पन्न करने में सक्षम है।

---

1. आधुनिक प्रगीत काव्य - डॉ. गणेश खरे - पृ: 295.
2. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 220.
3. वही - पृ: 246.
4. वही - पृ: 9.

स्वरों में व्यंजनों की अपेक्षा अधिक संगीतात्मकता है -

"घटा घुमड़ कर आई ।
घोर घनी घहरी घिर कर भी
पूरी बरस न पाई ।"[1]

उपर्युक्त पंक्तियों में "ईकार की आवृत्ति से इस तथ्य की योजना हुई है । इस प्रकार के उदाहरण अन्यत्र भी उपलब्ध हैं ।

<u>अनुभूति का वैशिष्टय एवं उसकी पूर्णता</u>

अनुभूति का वैशिष्टय गीतिकाव्य का प्रधान तत्व है । गीतिकाव्य जीवन के तीव्रतम मनोवेगों की घनीभूत अनुभूति की अभिव्यक्ति है । गीतिकाव्य के माध्यम से कवि स्वानुभूति का चित्रण करते हैं । इसकेलिए अनुभूति की मर्मस्पर्शिता एवं सत्यता बहुत ज़रूरी है । कवि कल्पना के माध्यम से अनुभूति को मूर्त और अपरिचित को परिचित बना देते हैं । कवि अपने जीवन के किसी विशेष क्षण की अनुभूति को वाणी देते हैं । कभी कवि कल्पना के सहारे दूसरों के अनुभव को अपनाकर अनुकूल भावों की अनुभूति करते हैं । कवि का एक मात्र उद्देश्य यह है कि जिन मनोवेगों का घनीभूत रूप में स्वयं वे अनुभव कर चुके हैं उन्हें पाठक तक पहुँचाना है । अनुभूति की विशिष्टता परम आवश्यक है जो मनोवेगों की उत्कृष्टता पर निर्भर रहती है । जब कवि अपनी तीव्र अनुभूति को तीव्रतम रूप में अभिव्यक्त करते हैं तब वह सफल हो जाता है । गीतिकाव्य का महत्व आत्मानुभूति की प्रेषणीयता में है । कल्पना और बुद्धि आत्मानुभूति को अभिव्यक्त करने के साधन हैं ।

वर्माजी के सभी गीतों में अनुभूति की तीव्रता मिलती है । आधुनिक कवि-3 में कविता की परिभाषा करते हुए वर्माजी ने लिखा है "मैं ने कविता को अनुभूति के रूप में समझा है । इसीलिए मैं ने किसी हल्के क्षण में कविता नहीं लिखी ।"[2]

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 265.
2. आधुनिक कवि-3 - पृ: 7.

कवि अपने जीवन में पीड़ा और दुःख का अनुभव कर रहे हैं। निम्नलिखित पंक्तियों में उस अनुभूति का तीव्रतम रूप स्पष्ट झलकता है -

"मेरा हृदय भग्न है, उसके
टूटे हैं सब द्वार,
भाग गया है उससे
रोका - हुआ - अतिथि - सा प्यार ,
वृद्धा आशा के जीवन के -
लघु दिन हैं दो चार ,
नित्य निराशा के विष से मैं
करता हूँ उपचार !"[1]

कवि के तीव्रतम दुःख का चित्रण "चित्ररेखा" की निम्नलिखित पंक्तियों में अभिव्यक्त हुआ है, जिसमें कवि ने प्रकृति के सहयोग से कल्पना के सहारे अपनी अनुभूति की अभिव्यक्ति की है -

"यह पूर्व दिशा जो थी प्रकाश की
जननी छविमय प्रभापूर्ण,
निज मृत शिशु पर रख नमित माथ
बिखराती घन-केशान्धकार !!"[2]

जिस प्रकार पूर्वदिशा काले बादल के छा जाने से अंधकारपूर्ण हो जाती है उसी प्रकार कवि के मन में दुःख रूपी काले बादल छा जाते हैं।

---

1. गजरे तारोंवाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 86.
2. वही - पृ: 211.

पहले कोकिल की मधुर पुकार उसके मन में आनन्द का जो संचार किया था अब विरह के क्षणों में उनकी वेदना को तीव्र बना रही है । "कोकिल की यह कोमल पुकार"[1] में उसकी विरह वेदना की तीव्र अभिव्यक्ति हुई है ।

भावों का ऐक्य

भावों का ऐक्य गीतिकाव्य के लिए अनिवार्य प्रमुख तत्व है । प्रत्येक गीत में एक ही भावात्मक अनुभूति का चित्रण होता है । इसमें एक हीभाव, एक ही विचार, एक ही अवस्था अभिव्यंजित होती है । गीतिकार की चित्तवृत्ति अधिक आत्मकेन्द्रित होने के कारण उसमें एक ही भावना वर्तमान रहती है । गीत में आद्यन्त एक ही केन्द्रीय भावना का अभिव्यंजन अनिवार्य है जिससे एक ही भाव या अनुभूति का चित्रण पाया जाता है । भाव-समष्टि के लिए भावात्मक विशुद्धता आवश्यक होती है ।

वर्माजी के प्राय: सभी गीतों में भावों की एकता दृष्टिगत होती है । "अंजलि" में संकलित "ये गजरे तारों वाले" और "एकान्त गान" ऐसी रचनायें हैं जिसमें एक ही भावना आद्यन्त बनी रहती है । पहले गीत में तारों वाले गजरे बेचने जानेवाली रजनीबाला का और दूसरे में प्रियतम से मिलने केलिए जानेवाली प्रेमिका का चित्रण है । "रूपराशि" में संकलित "कंकाल" शीर्षक गीत में सांसारिक नश्वरता का चित्रण है । यह भाव इस गीत में आद्यन्त है । कवि अपने प्रिय से निकट संबन्ध रखना चाहते हैं । इसलिए वे अपने प्रिय के नूपुरों का हास बनकर प्रिय की मौन गति में राग भरना चाहते हैं । उनमें प्रिय के आगमन के पूर्व का लघु सन्देश देने की इच्छा है । इस प्रकार "परिचय" गीत में एक ही भाव की अभिव्यक्ति हुई है अर्थात् प्रिय से निकट संबन्ध स्थापित करना ।

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 210.

संक्षिप्तता

संक्षिप्तता गीतिकाव्य केलिए आवश्यक गुण है । भावनाओं को समाहित रखने केलिए संक्षिप्तता अनिवार्य है । इसके अभाव में पाठक का ध्यान खण्डित हो जाता है और अनुभूति की तीव्रता नष्ट हो जाती है । संक्षिप्तता का पालन करने केलिए कवि को अत्यन्त भाव व्यंजक शब्दों का चुनाव करने में सतर्क रहना चाहिए । सार्थक विशेषणों का प्रयोग करने में ध्यान रखना पडता है । गीतिकाव्य में कवि जीवन में घटित क्षण-विशेष का चित्रण करने का प्रयास करते हैं । इसलिए कवि इसकी संक्षिप्तता पर विशेष ध्यान रखते हैं । गीतिकाव्य गेय होने के कारण संक्षिप्ता इसका अनिवार्य तत्व है । प्रतिमा कृष्णबल के अनुसार "प्रगीतों का संक्षिप्त आकार उनके चित्रों को परस्पर अन्वित कर उनमें गेयता का समावेश करता है ।"[1] इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि विद्वानों ने संक्षिप्तता को अनिवार्यतत्व के रूप में स्वीकार किया है ।

वर्माजी के अधिकांश गीत छोटे आकार के हैं । कवि यह महसूस करते हैं कि सुख-दुःख मिश्रित इस संसार में दुःख की मात्रा अधिक है । इस भाव की अभिव्यक्ति के लिए वर्माजी ने अत्यन्त सार्थक शब्दों का प्रयोग किया है जिससे भाव भ्रंश न हो जाय । गीत की संक्षिप्तता को बनाये रखने केलिए ऐसे सार्थक शब्दों का प्रयोग करना है । "रूपराशि" में संकलित "जीवन का गगन विशाल" में कवि ने इस भाव की अभिव्यक्ति केलिए सार्थक शब्दों का प्रयोग किया है -

"सुख-शशि घटता रहता है
डसता भावस का व्याल ।
दुःख-रवि की अमर प्रखरता
प्रलयंकर रोष कराल ।"[2]

---

1. छायावाद का काव्य शिल्प - प्रतिमा कृष्णबल - पृ: 43.
2. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 62.

उपर्युक्त पंक्तियों में वर्माजी द्वारा प्रयुक्त "सुख-शशि" "दुःख-रवि" जैसे सार्थक शब्द व्यापक अर्थ को अभिव्यक्त करने में सक्षम बन गये हैं ।

गीतिकाव्य का वर्गीकरण

विद्वानों ने विषय और शिल्प को आधार मानकर गीतिकाव्य को दो रूपों में विभाजित किया है । विषय के आधार पर डॉ. वर्मा के गीतिकाव्य के सात भेद हैं - राष्ट्रीय-गीत, प्रेम-गीत, प्रकृति-गीत, रहस्यवादी-गीत, दार्शनिक-गीत, शोक-गीत और प्रार्थना-गीत । शिल्प के आधार पर इनके गीतिकाव्य के दो भेद हैं संबोधन गीत और चतुर्दशपदी । गीतिकाव्य के इन भेदों के आधार पर वर्माजी के गीतिकाव्य का विश्लेषण करेंगे ।

राष्ट्रीय गीत

राष्ट्रीय गीत का मूल स्रोत देशप्रेम है । राष्ट्रीय गीतों में देशप्रेम की अभिव्यक्ति होती है । देशप्रेमी के मन में अपने देश की हर वस्तु या व्यक्ति के प्रति रागात्मक भावना वर्तमान रहती है । यह देशप्रेम वैयक्तिक न होकर समष्टिगत चेतना है । राष्ट्रीय गीत में जन-एकता, जन-संस्कृति एवं जन-सेवा की भावनाओं की अभिव्यक्ति होती है । राष्ट्रीय गीतों के दो रूप देख सकते हैं । प्रथम है देश के सांस्कृतिक, दार्शनिक और राजनीतिक पक्षों से संबन्धित तथा द्वितीय में देशभक्ति और मातृभूमि वन्दना से संबन्धित । पहले प्रकार के गीतों का विषय है अतीत का गौरव गान, जातीय मर्यादा और देश की रक्षा केलिए अपने प्राणों को न्योछावर करनेवाले वीरों के प्रति श्रद्धा, उनकी प्रशंसा, स्वाभिमान आदि की अभिव्यक्ति । दूसरे प्रकार में मातृभूमि की वन्दना, स्तवन, प्रशस्ति आदि आते हैं । देश की दुरवस्था के प्रति आक्रोश, क्षोभ आदि भी इसका विषय होता है ।

वर्माजी के गीतों में राष्ट्रीय गीतों का महत्वपूर्ण स्थान है । उन्हें राष्ट्रीय भावना तो परंपरा से प्राप्त हुई है । देश प्रेम से प्रभावित होकर उन्होंने पढ़ाई छोड दी और गाँधीजी के असहयोग आन्दोलन में भाग लिया । "आकाश-गंगा" में संकलित "14 अगस्त 1947 की रात्रि में ..." शीर्षक गीत इनके राष्ट्रीय गीत का उदाहरण है । इसमें कवि कहते हैं कि जिस प्रकार आधी रात में वासुदेव का जन्म हुआ और जनता को क्रूर अत्याचारों से मुक्ति मिली उसी प्रकार आधी रात में ही भारत स्वतन्त्र हुआ और अंग्रेज़ों के क्रूर अत्याचारों से मुक्त हुआ । इसमें शिवाजी और महारानी लक्ष्मी जैसे देश प्रेमियों की ओर भी संकेत किया गया है । वे अपने देश को बापू की पवित्र साधना का पुण्य क्षेत्र मानते हैं । देश के प्रति उसके मन में इतना प्रेम है कि इस देश की पवित्र धूल को अपने शीश फूल मानते हैं -

"विश्व वंदना करेगा मेरे प्रिय देश की
जिसकी पवित्र धूल मेरे शीश फूल है ।"[1]

वर्माजी ने कुछ स्फुट गीत भी लिखे हैं जो देशभक्ति भावना से ओतप्रोत हैं । एक गीत में उन्होंने राष्ट्र के महान् नेता जवाहर लाल नेहरू के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित की है, अन्यत्र उनका शत शत प्रणाम किया है ।

प्रेम-गीत

प्रेम जीवन की सबसे सुन्दर, सबल और अनोखी अनुभूति है । कवि इस प्रेम भावना से प्रभावित होकर प्रेम प्रधान गीति काव्य की रचना करते हैं । अतः गीति काव्य में प्रेम जैसी कोमलतम भावना की अभिव्यक्ति देख सकते हैं । हिन्दी एवं अंग्रेज़ी गीतिकाव्य में प्रेमपरक गीतिकाव्य की बहुलता है । इन गीतिकाव्यों में श्रृंगार रस की अभिव्यक्ति हुई है । संयोग और वियोग श्रृंगार के चित्रण मिलते हैं । इसलिए कुछ गीति काव्य में प्रेम की मादकता है तो कुछ में विरहव्यथा का । प्रेमी की व्याकुलता,

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृः 356.

प्रिय की निष्ठुरता आदि का विश्लेषण इन गीतिकाव्यों में हुआ है । छायावादी युग में प्रेम प्रधान गीतिकाव्य की प्रचुरता है । इन कवियों ने प्रेम की मनोदशाओं का अधिक मनोवैज्ञानिक दृष्टि से चित्रण किया है ।

वर्माजी के प्रेम गीतों में लौकिक और आध्यात्मिक प्रेम के चित्रण मिलते हैं । निम्नलिखित गीत में प्रेयसी के विरह से व्याकुल कवि-मन का चित्रण है जो दिन-रात अपनी प्रेयसी की मिलन-प्रतीक्षा में बीतते हैं । आसमान में उदित तारे अपना हृदय खोलकर सन्ताप प्रकट करते हैं । वे प्रेयसी से ज्योति के समान सम्मुख होने की प्रार्थना करते हैं । वे प्रिया से मिलना चाहते हैं -

"मैं तुमसे मिल सकूँ यथा उर से सुकुमार दुकूल,
समय-लता में खिले मिलन के दिन का उत्सुक फूल,
मेरे बाहु-पाश से वेष्टित हो यह मृदुल शरीर,
चारों ओर स्वर्ग के होगा पृथ्वी का प्राचीर ।"[1]

कवि प्रेमिका से इस प्रकार मिलना चाहते हैं जैसे उर में सुकुमार दुकूल लिपटा रहता है और वे अपने बाहु-पाश से प्रेमिका के मृदुल शरीर को वेष्टित करना चाहते हैं । प्रिय-मिलन के लिए उत्सुक रहनेवाले उनकी चाह है -

"आओ, आज स्वर्ग-पृथ्वी
मिल कर हो जावें एक !
मेरे उर का आज तुम्हारे
उर से हो अभिषेक !!"[2]

प्रिया के आगमन से स्वर्ग और पृथ्वी मिलकर एक हो जायेंगे और प्रेमिका के हृदय से उनके हृदय का अभिषेक हो जायेंगे । उपर्युक्त पंक्तियों में लौकिक प्रेम का चित्रण मिलता है । अन्यत्र आध्यात्मिक प्रेम के दर्शन होते हैं -

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 42.
2. वही - पृ: 43.

"दिव्य जीवन है छवि का पान, यही आत्मा की तृषित पुकार ।
उभय अधरों में है सोल्लास, मृत्यु-जीवन का सम विस्तार ।
एक इस पार, एक उस पार, हटा दो घूँघट-पट इस बार ।"[1]

उपर्युक्त पंक्तियों में प्रेयसी के दिव्य सौन्दर्य का पान करने केलिए तृषित आत्मा की पुकार है । प्रेमिका के मुख में पडे घूँघट के कारण पूर्ण रूप से उनके दर्शन नहीं होते । इसलिए वे इस घूँघट को हटाने का अनुरोध करते हैं । घूँघट का तात्पर्य माया से है । नायिका के असीम सौन्दर्य देखकर चन्द्रमा लज्जित होकर दुर्बल होकर आसमान की ओर सिधारा है ।[2] उन्हें अपनी प्रियतमा के साथ व्यतीत किये दिनों की याद आती हैं । प्रिया तो रति के समान थी और वे उच्छृंखल अनङ्ग थे -

"मेरी बनमाला तोड-तोड़, अपनी माला से जोड़-जोड़ ।
मेरे उर-तट पर सदा छोड़ देती थीं साँसों की तरंग,
तुम रति-सी आई थीं सभीत, मैं' मैं था उच्छृंखल अनङ्ग ।"[3]

इन पंक्तियों में लौकिक शृंगार का चित्रण मिलता है । प्रिया का प्रत्येक शब्द उसे प्रफुल्लित और सुरभित उपवन के समान लगता है और उस उपवन में बहनेवाले साँस रूपी समीर में मादकता है ।[4] उन्हें प्रिया के सामीप्य की उत्कट इच्छा है -

"आओ, हम दोनों समीप बैठें,
देखें आकाश !
वे दोनों तारे देखो -
कितने-कितने हैं पास !!"[5]

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 45.
2. वही - पृ: 48.
3. वही - पृ: 46.
4. वही - पृ: 58.
5. वही - पृ: 61.

कवि प्रिया के समीप बैठकर आसमान की ओर ताकना चाहते हैं जिस प्रकार दोनों नक्षत्र पास पास रहकर टिमटिमाते रहते हैं । विरह की विकलता का चित्रण भी इनमें मिलते हैं । प्रिया के वियोग से उद्भ्रान्त और निर्बल कवि, प्रिया से यह प्रार्थना करते हैं कि -

"मत कहना मेरा जीवन है - निर्जन-सा एकान्त,
यद्यपि रहता हूँ वियोग से मैं अस्थिर उद्भ्रान्त,
जब निर्बल हो ओस-बिन्दु-सा पडा रहूँगा श्रान्त,
एक किरण-सी आ जाना तुम मेरे उर में शान्त,
प्रिये ! रहूँगा फिर भविष्य-जीवन में नहीं अकेला !"[1]

यह मत कहना कि उनका जीवन निर्जन के समान एकान्त है और यही अनुरोध करते हैं कि एक शान्त किरण के समान आ जायें जिससे उन्हें भविष्य में अकेलेपन का अनुभव न हो जायें । वर्माजी के प्रेम गीतों में लौकिक और आध्यात्मिक प्रेम का चित्रण उपलब्ध है ।

प्रकृति गीत

प्रकृति और काव्य का संबन्ध अटूट है । कवियों ने काव्य-रचना की प्रेरणा प्रकृति से ली हैं । गीतों में प्रकृति का चित्रण रहस्यात्मक, दार्शनिक, मानवीकरण, अलंकरण, पृष्ठभूमि परक आदि अनेक रूपों में मिलते हैं । कभी वे दर्शक की भाँति प्रकृति सौन्दर्य का वर्णन करते हैं, कभी कभी प्रकृति में अपनी भावनाओं का प्रतिबिम्ब देखकर भावाभिव्यंजन करते हैं । गीतिकाव्य में उद्दीपन रूप में प्रकृति चित्रण मिलता है । अपने भावों को व्यंजित करने के लिए प्रकृति का सहारा लेते हैं । इसलिए ये प्रकृति गीत तो भाव प्रधान ही होते हैं । गीतिकार प्रकृति के व्यापारों के माध्यम से मानव-जीवन के व्यापार अभिव्यंजित करते हैं । प्रकृति संबन्धी गीत भावात्मक होने के साथ ही

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 63.

विचारात्मक भी होते हैं । इन गीतिकाव्यों की अन्य विशेषता है प्रकृति के सूक्ष्म सौन्दर्य का चित्रण और प्रकृति में अलौकिक सत्ता का आभास पाना ।

प्रकृति परक गीतों में वर्माजी ने प्रकृति को उद्दीपन, रहस्यात्मक, दार्शनिक तथा मानवीकरण रूप में चित्रित किया है । इसके अतिरिक्त भाव प्रक्षेपण की पद्धति भी मिलती है ।

अ. उद्दीपन रूप में

वर्माजी के गीतों में प्रकृति का उद्दीपन रूप में चित्रण हुआ है । पृथ्वी की प्रशान्तता और सन्ध्या की नीरवता उसके हर क्षण को कठोर बना रहा है -

"पृथ्वी प्रशान्त है नव विवाहिता - सी
अविदित चुपचाप ।
संध्या का यह श्याम मौन
मुझको तो है अभिशाप ।।"[1]

संध्या की नीरवता और उस समय धरती में व्याप्त सन्नाटा वियोगी कवि के दुःख को और तीव्र बनाती हैं । कोकिल की कोमल पुकार कवि के मन में सोई हुई स्मृतियों को जगाती है और उस पर कठोर प्रहार भी कर रही है ।[2] संध्या का आगमन और मन्द समीर प्रिया वियुक्त कवि को अधिक सताते हैं और वे इस जगत के प्रान्त में उसको खोजते हैं ।[3] आसमान में चमकने वाले नक्षत्र, जो पास पास रहते हैं कवि की प्रिया के सामीप्य की इच्छा को तीव्र बनाती है ।

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 200.
2. वही - पृ: 210.
3. वही - पृ: 333.

आ. <u>रहस्यात्मक रूप में</u>

"अंजलि" में संकलित "एकान्तगान"[1] शीर्षक गीत प्रकृति के रहस्यात्मक रूप का सुन्दर उदाहरण है । निर्जन वन में बहनेवाले निर्झर को उस आत्मा के रूप में चित्रित किया है जो परमात्मा के साक्षात्कार केलिए सांसारिक कठिनाइयों का सामना करते हुए निरन्तर आगे बढ़ रहा है । लघु पाषाण जो है वह आध्यात्मिक मार्ग में बाधा डालनेवाले सांसारिक आकर्षण है । प्रकृति का असीम सौन्दर्य देखकर कवि के मन में जिज्ञासा का उदय होता है -

"फूलों में किसकी मुस्कान?
बिखर गई है, कलिकाओं में -
भरने को आनन्द महान्?
फूलों में किसकी मुस्कान?"[2]

कवि सोचते हैं कि फूलों में किसकी मुस्कान बिखर गई है और कौन कोकिल के कंठों में मधुमय गान गा रहा है? कवि सारी प्रकृति में किसी अज्ञात या अव्यक्त सत्ता का आभास पाते हैं -

"नभ के दर्पण में अङ्कित है
विमल तुम्हारा ही प्रतिबिम्ब ।
सभी दिशाओं ने पहनी है
आज तुम्हारी ही माला ।।"[3]

अन्त में कवि को यह मालूम हुआ कि सारी प्रकृति में उस दिव्य सौन्दर्य का प्रतिबिंब ही अङ्कित हुआ है ।

---

1. अंजलि - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 9.
2. गजरे तारों वाले - वही - पृ: 53.
3. वही - पृ: 197.

इ. दार्शनिक रूप में

"ओस बिन्दु" गीत में कवि ने प्रातःकालीन प्रकृति में शोभित ओस बिन्दु के रूप सौन्दर्य का चित्रण तरह तरह की कल्पनाओं से किया है और अन्त में उसके माध्यम से ही सांसारिक नश्वरता का चित्रण किया है -

"अवनी-तल के परम मनोहर
ए नव शोभाशाली इन्दु !
नीरव, शून्य भावना वाली
रजनी के आँसू के बिन्दु !
xx xx xx xx
प्रातः की छवि के उफान !
ए, उड़ जाओ सौन्दर्य-निधान !
कुछ क्षण ही जीवित रहना है
इस जग को दे दो यह ज्ञान ।"[1]

उपर्युक्त पंक्तियों में कवि ने ओस-बिन्दु के माध्यम से जीवन की नश्वरता या क्षणिकता का चित्रण किया है । "अंतिम संसार"[2] और "तारों के प्रति"[3] में भी प्रकृति के माध्यम से सांसारिक नश्वरता को अभिव्यक्त किया गया है ।

"चित्ररेखा" की निम्नलिखित पंक्तियों में सुख-दुख मिश्रित जीवन का चित्रण है -

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 19-20.
2. वही - पृ: 11.
3. वही - पृ: 72.

"प्रातः मुख में दौड़ गई
संध्या की काली छाया ।।
जीवन के पहले ही क्षण में
कैसा अन्तिम क्षण है"[1]

जिस प्रकार प्रातः कालीन भंगिमा से युक्त आसमान में ही संध्या की काली छाया छा जाती है उसी प्रकार जीवन के पहले क्षण में ही अन्तिम क्षण भी संभव होता है ।

ई. मानवीकरण रूप में

प्रकृति का मानवीकरण करते समय कवि प्रकृति में चेतनता का आरोप करते हैं और प्राकृतिक व्यापारों में मानवीय चेष्टाओं का आभास पाते हैं । अर्थात् प्रकृति मानव के समान हँसती, दुःख प्रकट करती दिखाई पडती है । मानवीकरण शैली का सबसे सुन्दर उदाहरण है "ये गजरे तारों वाले" शीर्षक गीत ।

"इस सोते संसार बीच,
जग कर सज कर रजनी बाले !
कहाँ बेचने ले जाती हो,
ये गजरे तारों वाले'
xx xx xx xx
यदि प्रभात तक कोई आकर,
तुमसे हाय, न मोल करे ।
तो फूलों पर ओस-रूप में,
बिखरा देना सब गजरे ।।"[2]

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 206.
2. वही - पृ: 8.

उपर्युक्त पंक्तियों में कवि ने रजनी को सुषुप्त संसार के बीच तारों वाले गजरे बेचने जाने वाली बाला के रूप में चित्रित किया है । कवि बाला से यही पूछते हैं कि इस सोते संसार में कौन इसका मोल करेगा । यह भी कहते हैं कि यदि प्रभात तक कोई आकर इसका मोल न करे तो फूलों पर ओस रूप में इन गजरों को बिखरा देना । उसी प्रकार "एकान्त गान" शीर्षक गीत भी प्रकृति के मानवीकरण का उत्तम उदाहरण है ।[1] इस गीत में कवि ने निर्झर को एक प्रेमिका के रूप में चित्रित किया है जो अपने प्रेमी से मिलने केलिए मधुर स्वर में गीत गाती हुई चल रही है ।

उ. भाव प्रक्षेपण की पद्धति

कवि अपने भावों का आरोप प्रकृति पर करते हैं । अपनी वेदना का आरोप कवि ने प्रकृति के उपकरणों पर किया है -

"वन के उर में चुभा हुआ है
यह टेढ़ा पथ-तीर,
तरु-मर्मर से यही वेदना
व्यञ्जित हैं गम्भीर ।
xx xx xx xx xx
झींगुर के स्वर में सुन पडता
निर्बल का अभिशाप ।"[2]

वन के हृदय में पथ रूपी तीर चुभा हुआ है । तरु के मर्मर के रूप में उनकी वेदना गम्भीर रूप में व्यंजित हो रही है ।

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृः 9.
2. वही - पृः 69.

रहस्यवादी-गीत

रहस्यवादी गीतों में उस सर्वशक्ति संपन्न अलौकिक सत्ता के प्रति कवि के आत्मसमर्पण का भाव झलकता है । वे सारे संसार में उस अलौकिक प्रियतम की स्वछवि के दर्शन करते हैं । इन गीतों में दिव्य मिलन और विरह की मार्मिक अभिव्यंजना मिलती है । आत्मा और परमात्मा के विभिन्न रागात्मक संबन्धों का चित्र इन रचनाओं में उपलब्ध है । इसमें आत्मा-परमात्मा की अभिन्नता का चित्रण है । आध्यात्मिक विरह के कारण उत्पन्न कातर उक्तियाँ इन गीतों की विशेषता है । इनमें करुणा की प्रधानता है । कवि इसमें विश्व की नश्वरता का चित्रण भी करते हैं ।

प्रकृति का असीम सौन्दर्य देखकर उसके प्रति जिज्ञासा प्रकट करना "रहस्यवादी गीतों का लक्षण है । जिज्ञासा भावना की अभिव्यक्ति "रूपराशि" और "चित्ररेखा" में स्पष्ट हुई है । कवि की जिज्ञासा भावना इस प्रकार प्रकट हुई है कि प्रातः कालीन प्रकृति में बिखरे पडे ओस बिन्दुओं को देखकर कवि यही पूछते हैं कि यह किसका छविमय विलास है और विहगों के कंठों में कौन मिठास भर रहा है ।[1] उनके गीतों में आध्यात्मिक विरह से उत्पन्न विकलता, पीडा और करुण स्मृतियाँ देख सकती हैं । उसे, वह प्रेम-मिलन एक स्वप्न बन गया है -

"देव ! मैं अब भी हूँ अज्ञात !
एक स्वप्न बन गई
तुम्हारे प्रेम-मिलन की बात"[2]

उन्हें अपने दुःख पर संयम पाना अत्यन्त दुष्कर सा प्रतीत होता है ।[3] वे परमात्मा से प्रियतम बनने का अनुरोध करते हैं । उन्हें यह विरह वेदना अति कठोर अनुभव होते हैं ।

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृः 195.
2. वही - पृः 189.
3. वही - पृः 214.

कवि एक ऐसे कोकिल का स्वर पाना चाहते हैं जो प्रिय-पीड़ा को भी सुखकर बनाकर असीम आसमान में विचरण कर रहे हैं ।[1] उसका मन तो पीड़ा और भय से भरा हुआ है । दुःख की बात यह है कि उन्हें अब भी अपने प्रियतम का परिचय न हो पाया है -

"प्रिय ! देखो मेरे मन में
कितनी पीड़ा ! कितना भय !!
कितने जीवन से करता -
आया प्राणों का सञ्चय ।
पर अभी न हो पाया है
अपने प्रियतम से परिचय ।।"[2]

उनका मन पीड़ा और दुःख से भरा हुआ है । वे अनेक जन्म भी धारण कर चुके हैं लेकिन अब तक प्रियतम से परिचय न हो पाया है । प्राकृतिक व्यापारों को देखकर उनके मन में प्रियतम की याद आती है । नीले आसमान से अचानक तारों को टूटकर गिरते देखकर और मन्द हवा बहते वक्त उन्हें प्रियतम की याद सताती है ।[3] प्रियतम का आगमन न होने के कारण वे उपालम्भ भी देते हैं -

"...पर तुम मेरे पास न आये ।
देखो, यह खिल उठी जुही
यौवन के विकसित अंग छिपाये ।
निराकार प्रेमी समीर,
आया है सौरभ-साज सजाये ।"[4]

----

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 216.
2. वही - पृ: 225.
3. वही - पृ: 287.
4. वही - पृ: 231.

वे प्रियतम से कहते हैं कि यौवन के विकसित अपने अंग छिपाकर यह जुही तो खिल उठी है । उनके प्रेमी समीर तो उसके पास आया है । लेकिन उनका प्रियतम अब तक उनके पास न आए । रात में वातायन के पास चमके खद्योत को देखकर उसे ऐसा लगता है कि वह अपने प्रियतम के आगमन का संकेत दे रहा है ।[1] जब उन्हें परमात्मा का पहचान हुआ तब उन्हें दुःख का समय भी सुख के समान बन गया । आसमान में नक्षत्र इस प्रकार प्रकट हुआ जिस प्रकार प्रिय के विविध रूप अपने मन में सँचरित हुए हो । सघन अँधेरे के समान उनका दुःख, दैन्य और दुरित दूर हुए ।[2] वे विश्वात्मा के साथ ऐक्य स्थापित करना चाहते हैं । उनके नूपुरों का हास बनकर उनके चरणों में लिपटे रहना चाहते हैं और उनके आगमन के पूर्व का लघु संदेश बनना चाहते हैं ।[3] प्रियतम नव-वसंत श्री होतो वे स्वयं वसन्त बनना चाहते हैं और वे सुमन हो तो कवि उस सुमन का सौरभ बनना चाहते हैं । सारे संसार में अलौकिक प्रियतम की रूप छवि के दर्शन करते हैं - शिशु के अस्फुट उच्चारण में कोकिल के मधुर स्वर में । उन्हें परमात्मा की इतनी पहचान हो गई कि चाहे दिन हो या रात हो वे उन्हें अवश्य पहचान लेंगे । इतना ही नहीं उनके पद-रज से भी वे परिचित हैं ।[4] जब परमात्मा से उनका मिलन हुआ तब वे कोकिल से यह अनुरोध करते हैं कि वह जीवन पर्यंत इस मिलन का गीत गाये -

"मैं तुमसे मिल गया प्रिये ।
यह है जीवन का अन्त,
इसी मिलन का गीत कोकिले ।
गा जीवन - पर्यंत ।"[5]

कवि मिलन को जीवन का अन्त मानते हैं ।

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 232.
2. वही - पृ: 228.
3. वही - पृ: 242.
4. वही - पृ: 313.
5. वही - पृ: 70.

दार्शनिक गीत

दार्शनिक गीतिकाव्य में बुद्धितत्व की प्रधानता है । बुद्धितत्व से संबन्धित होने के कारण ऐसे गीतिकाव्य को विचारात्मक कहे जाते हैं । दार्शनिक गीत विचारात्मक होते हैं । इन गीतिकाव्यों में कोरी बौद्धिकता को स्थान नहीं दिया जाता । विचारात्मक गीतिकाव्य में कवि के ऊँचे विचार प्रकट होते हैं । कवि के विचार कोरे तार्किक रूप में प्रकट नहीं होते । अनुभूति के साथ मिलकर भावना का रूप धारण कर लेते हैं । इसलिए इन रचनाओं में बुद्धि और हृदय का सुन्दर समन्वय होता है अर्थात् विचार और भावना का समन्वय होता है । जीवन मीमांसा संबन्धी रचनायें दार्शनिक प्रगीतों के अन्तर्गत आती हैं ।

जीवन-मृत्यु, सुख-दुःख, सांसारिक नश्वरता आदि के संबन्ध में उनकी मान्यतायें दार्शनिक गीत के अन्तर्गत आती हैं । कवि जीवन को पीड़ा, संघर्ष और दुःख का अभिनय और सुख-दुःख की छाया मानते हैं ।[1] वे जीवन को चुम्बन के समान क्षणिक मानते हैं ।[2] उनके अनुसार मृत्यु में ही शान्ति है और जीवन एक करुणामय प्रवास है । वे मृत्यु को जीवित क्षण की हार मानते हैं । पहले मृत्यु में शान्ति और जीवन को करुणामय प्रवास माननेवाले कवि आगे यह अनुभव करते हैं कि मृत्यु क्षण-भंगुर है और जीवन प्रिय और शाश्वत विधान है -

"हाँ, मृत्यु यहाँ क्षण भंगुर है
जीवन है प्रिय शाश्वत विधान"[3]

कवि जीवन को इस प्रकार क्षणिक मानते हैं जैसे दुःख के काले बादल में किसी भी क्षण प्रकट होनेवाला इन्द्र धनुष ।[4] उनकी मान्यता है कि हास्य तो रुदन का परिणाम है, प्रेम में

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 217.
2. वही - पृ: 289.
3. वही - पृ: 324.
4. वही - पृ: 56.

घृणा विश्राम करती है । रोष दया को दूषित करता रहता है और पुण्य में दोष छिपा रहता है ।[1] उनका मत है जीवन रूपी गगन में सुख-शशि घटता रहता है और दुःख रूपी रवि की अमर प्रखरता है ।[2] वे सुख को दुःख की विस्मृति मानते हैं । वर्माजी दुःख को सुख का सहायक मानते हुए बताते हैं कि आँसू मिल जाने से उसके हृदय में स्मृतियों का संगीत गूँज उठा है । वे शरीर को शुष्क-फूल का छवि-जाल मानते हैं ।[3]

शोक गीत

शोक गीत अंग्रेज़ी शब्द "एलिजी" का पर्याय है । एलिजी शब्द की व्युत्पत्ति ग्रीक शब्द "इलीजिया" से हुई है । जिसका अर्थ है दुखद, करुणा या किसी की मृत्यु पर लिखी गई रचना । लेकिन मृत्यु के अतिरिक्त युद्ध और प्रेम प्रसंगों को लेकर भी इसकी रचना होती थी । ग्रीक साहित्य में "एलिजी" विषय की दृष्टि से सीमित नहीं थी । इस प्रकार इसमें विषय की विविधता मिलती हैं । इसका नामकरण छन्द विशेष के आधार पर हुआ है । "यही कारण था कि इसका नामकरण उसके अर्थ को लेकर नहीं हुआ, प्रत्युत छन्द विशेष के कारण उसको इस नाम से अभिहित किया गया । यह छन्द था "एलिजाइक छन्द" (Elegiac Matre) जो षट्पदी (Dectylic Hexametre) और पंचपदी (Dectylic Pentametre) छन्दों मिलाकर बना हुआ है ।"[4] अंग्रेज़ी साहित्य में "एलिजी" लिखी गई जिनमें केवल ऐसे शोक भाव की व्यंजना हुई है जो किसी प्रिय व्यक्ति की मृत्यु के उपरान्त कवि ने स्वयं जीवन में अनुभव किया है । आगे चलकर एलिजी की परिभाषा में परिवर्तन आए - " आधुनिक काल तक आते आते "एलिजी" व्यक्तिगत क्षोभ को व्यक्त करने का ही माध्यम बन गई । आज तो उस केलिए "एलिजाइक छन्द" भी अनिवार्य नहीं ।"[5]

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 81.
2. वही - पृ: 62.
3. वही - पृ: 82.
4. काव्य रूपों के मूल स्रोत और उनका विकास - डॉ. शकुन्तला दुबे - पृ: 337.
5. वही - पृ: 338.

शोक गीत में प्रमुख रूप से इन बातों का चित्रण होता है । पहले प्रिय वियुक्ति से संबन्धित स्थान विशेष की याद, उससे संबन्धित विशेष घटनाओं का और उसके साथ व्यतीत किए सुख स्मृतियों का चित्रण होता है । प्रिय के वियोग से उत्पन्न उसकी शोकाभिव्यक्ति । अन्त में कवि को संसार की नश्वरता का बोध होता है, वह अपने शोक पर विजय प्राप्त करता है और एक दार्शनिक बन जाता है ।

कुछ विद्वान इसे पाश्चात्य साहित्य की देन मानते हैं । भारतीय काव्य क्षेत्र में शोक गीत का अभाव है । इसका कारण हमारे दार्शनिक चिन्तन की विशेषता है । आधुनिक हिन्दी साहित्य में शोक गीतियाँ उपलब्ध होती हैं । "ऊजड ग्राम" तथा "भारत दुर्दशा" में इसकी झाँकी मिलती है । निराला की "सरोज स्मृति" शोक गीत का अच्छा उदाहरण है ।

वर्माजी ने केवल एक ही शोक गीत की रचना की है जो "रूपराशि" में संकलित "शुजा" है । लेकिन कुछ विद्वान इसे शोक गीत के अन्दर मानने को तैयार नहीं है । आगे शोक गीत केलिए आवश्यक लक्षणों के आधार पर इसका विश्लेषण करेंगे । यह गीत शाहजहाँ के पुत्र "शुजा" पर आधारित है । अराकान के राजा से मनोमालिन्य होने के कारण शुजा अराकान के प्रशान्त वन में चला जाता है । कवि उस अराकान से शुजा के बारे में पूछते हैं । पहले वर्माजी ने अराकान के प्रशान्त वन का वर्णन किया है जो शुजा से संबन्धित है -

"ये शिलाखंड - काले कठोर
वर्षा के मेघों - से कुरूप !
दानव से बैठे, खडे या कि
अपनी भीषणता में अनूप !
ये शिला खंड मानों अनेक
पापों के फैले हैं समूह !
या नीरसता ने चिर निवास
के लिये रचा है एक व्यूह !"[1]

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 91.

शुजा अराकान के इस प्रशान्त वन में सदैव केलिए चला गया है । इसमें शुजा से संबन्धित विशेष घटना का चित्रण मिलता है जो उसकी निडरता और साहस का प्रमाण है । एक दिन यमुना के समीप केवल विनोद के लिए दो हाथियों की लडाई हो रही थी । उसी वक्त औरंगज़ेब की ओर एक गज क्रोध करते हुए दौड़ा । तब शुजा ने विद्युत के समान सवेग उस गज के मस्तक पर कराल छोड़ा था । अपनी वीरता और साहस के साथ औरंगज़ेब को बचाया । इस प्रकार इसमें शुजा से संबन्धित विशेष घटना का चित्रण मिलता है [1] जो शोक गीत का लक्षण है । शुजा के वियोग से उत्पन्न शोक का अनुभव करते हुए वे स्वयं इस प्रकार प्रश्न करते हैं कि औरंगज़ेब के साथ युद्ध करके कई बार विजयी हुए शुजा को अब क्यों हार स्वीकार करना पडा '[2] अपने शोक पर विजय प्राप्त करते हुए वह इस प्रकार सोचकर सांत्वना प्राप्त करती है कि शुजा के वैभव का मृदु विलास इस अराकान से अपार था और तेरे सुख का मधुर भार इसके पर्वत से भी महान है । इन उपर्युक्त विशेषताओं के आधार पर "शुजा" को शोक गीत के अन्तर्गत मान लेना सही होगा ।

प्रार्थना गीत

परमात्मा का परिचय प्राप्त करने वाले कवि की तूलिका से प्रार्थनापरक गीतों का सृजन होता है । इन रचनाओं में पवित्र भावनाओं की अभिव्यक्ति है । कवि, हृदय की सच्ची श्रद्धामय भावना को प्रमुख स्थान देते हैं । इसमें किसी प्रकार की कृत्रिमता का स्पर्श नहीं होता । प्रेम और श्रद्धा का समन्वय है । आधुनिक हिन्दी कवियों ने सामूहिक उत्थान की कामना से युक्त रचनायें लिखी हैं । भक्ति भावना से ओतप्रोत इन रचनाओं में परमात्मा से एकाकार होने की कामना है । परमात्मा से बिछुड़े आत्मा के प्रणय निवेदन की प्रार्थना भी इन रचनाओं में देख सकती है । सांसारिक आकर्षणों से नीरस कवि मन वह दिव्य सुख प्राप्त करना चाहता है जिसकी अभिव्यक्ति इन रचनाओं में हुई है ।

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 94.
2. वही - पृ: 99.

स्वयं किये पाप-कर्मों के प्रति कवि के पश्चाताप से भरे रुदन भी इन गीतों में सुन सकते हैं । कुछ ऐसी रचनायें भी आती हैं जिनमें भक्तों का नामोल्लेख करके प्रभु की कृपाकांक्षा व्यक्त करते हैं ।

कवि अपने को प्रिय के किसी सजीले स्वप्न का आकार मानते हैं । सांसारिक नश्वरता देखकर विकल कवि-आत्मा उस परमशक्ति का सहारा चाहते हैं -

"मैं तुम्हारी मौन करुणा का सहारा चाहता हूँ ।
जानता हूँ, इस जगत में
फूल की है आयु कितनी,
और यौवन की उभरती
साँस में है वायु कितनी ।"[1]

परमात्मा से निकट संबन्ध स्थापित करने की इच्छा अनेक गीतों में दृष्टव्य हैं । आध्यात्मिक विरह से उत्पन्न कातर उक्तियाँ उनके गीतों में अभिव्यक्त हुई है ।

सम्बोधन गीत

पाश्चात्य साहित्य के प्रभाव स्वरूप आधुनिक हिन्दी साहित्य में भी सम्बोधन गीतों का सृजन हुआ । कवि किसी वस्तु, भाव या व्यक्ति को संबोधित कर अपने हृदय में उत्पन्न भावों, संवेदनाओं या मनःस्थितियों को व्यक्त करता है । कभी कवि संबोधित वस्तुओं से तादात्म्य स्थापित करके उनके माध्यम से अपने भावों को व्यक्त करता है । इसमें कवि को अपनी आत्माभिव्यक्ति और काल्पनिक वैशिष्ट्य प्रकट करने का अवसर मिलता है अतः इसका आकार बढ़ जाता है । वस्तुओं का संबोधन करने तथा संक्षिप्त विवरण देने के कारण इसमें वर्णनात्मकता होती है । इसकी शैली भव्य, गंभीर एवं ओज गुण युक्त होती है । इसमें किसी विचार अथवा भाव का तार्किक विकास होता है ।

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ० रामकुमार वर्मा - पृ: 291.

इसकी शैली कभी कभी अत्यन्त गूढ़ होने के कारण गीतिकाव्य के अन्य रूपों की अपेक्षा अधिक विचारपूर्ण, आवेगपूर्ण और कल्पनात्मक प्रमाणित होता है । संबोध प्रगीतों के दो भेद हैं - वस्तुनिष्ठ और आत्मनिष्ठ । वस्तुनिष्ठ गीतों में बाह्य जगत की वस्तुओं का संबोधन किया जाता है और आत्मनिष्ठ प्रगीतों में हृदय के अन्तर्गत स्थित भावों, विचारों, कल्पनाओं, आशा, विश्वास, सफलता, निराशा, क्षोभ, चिन्ता आदि को । हिन्दी में द्विवेदीयुग में इस विधा का आरंभ हुआ और छायावाद में इस शैली का चरम विकास हुआ । इनमें कवि के कौतूहल एवं उनकी जिज्ञासा भावना प्रकट होती है । छन्द योजना तथा शिल्प की दृष्टि से छायावादी कवि अधिकांशतः कॉलरिज, वर्ड्सवर्थ, शेली, कीट्स आदि स्वच्छन्दतावादी कवियों से प्रभावित हुए हैं । अन्त्यानुप्रास की योजना के कारण रचना में सुनिश्चित लयाधार विद्यमान है । संगीतात्मक लय के प्रति विशेष आग्रह ने इन्हें छन्दगत अव्यवस्था की ओर जाने से रोका । भावानुकूल छन्दयोजना का पालन इन प्रगीतों में हुआ है ।

"अंजलि", "रूपराशि", "चित्ररेखा" आदि काव्य-संग्रहों में वर्माजी के संबोधन गीत बिखरे पड़े हैं । "अंजलि" में संकलित "ये गजरे तारों वाले" गीत में कवि ने रजनी को तारों वाले गजरे बेचने जाने वाली बालिका के रूप में संबोधित किया है और उससे यह भाव प्रकट किया है कि यदि प्रभात तक कोई आकर इसका मोल न करे तो फूलों पर ओस बिन्दु के रूप में इन गजरों को बिखरा देना -

"यदि प्रभात तक कोई आकर,
तुमसे हाय, न मोल करे ।
तो फूलों पर ओस रूप में,
बिखरा देना सब गजरे ।।"[1]

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृः 8.

प्रातःकालीन प्रकृति में खिले हुए पुष्पों में दीखनेवाले ओस बिन्दुओं को रजनी बाला द्वारा बिखरे गये गजरे के रूप में देखने का प्रयास किया गया है । यह गीत कवि की कल्पना और भावुकता का उत्तम निदर्शन है । "एकान्त गान"[1] निर्झर को संबोधित करके लिखा गया है जिसमें कवि की रहस्य भावना की अभिव्यक्ति है । उसी प्रकार "ओस बिन्दु"[2] में कवि ने दार्शनिक भाव को अभिव्यंजित किया है जिसमें अनेक अप्रस्तुतों और विशेषणों से ओस बिन्दु को उपमित करके उनसे यह अनुरोध किया है कि इस संसार को जीवन की क्षणिकता का परिचय देना । "अन्तिम संसार"[3] में पीले पत्ते को संबोधित करके जीवन की नश्वरता सम्बन्धी दार्शनिकभाव की अभिव्यंजना की है ।

चतुर्दशपदी

अंग्रेज़ी के सोनेट शब्द की व्युत्पत्ति इटली के "सोनेटो" शब्द से हुई है । अंग्रेज़ी के इस सोनेट शब्द को हिन्दी के चतुर्दशपदी कहते हैं । संगीतात्मकता सोनेट का एक गुण है । इसमें कवि चौदह पंक्तियों के अन्तर्गत अपने भावों को प्रकट करते हैं । कवि गीत के आद्यन्त एक ही भाव को भिन्न लय में समेटने हैं और कवि को इस बात पर विशेष ध्यान रखना पडता है कि इसके भावों की शृंखला न टूट जायें । पाठक कवि की एक विचारधारा या एक भावना का अनुभव प्राप्त करता है । कवि अपने कौशल से इन चौदह पंक्तियों को दो भागों में बाँटते हैं । अंग्रेज़ी में सोनेट के तीन भेद है - पैट्रार्कियन §Petrarchian Sonnet§ स्पन्सेरियन §Spencerian sonnet§ शेक्सपियरियन §ShakesperianSonnet§

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ॰ रामकुमार वर्मा - पृ: 9.
2. वही - पृ: 19.
3. छायावाद का काव्य शिल्प - प्रतिमा कृष्णबल - पृ: 55.

आधुनिक काल में आकर चतुर्दशपदी का निर्माण हुआ । छायावादी चतुर्दशपदियों की पंक्तिसंख्या, खण्डविभाजन, अन्वयक्रम, लय-निपात में इन कवियों की निजी मौलिकता विद्यमान हैं । जहाँ उन्होंने अंग्रेज़ी सोनेट के अनुरूप चतुष्पदी त्रिपदी एवं युग्मक आदि में चतुर्दशपदी की रचना की है वहाँ इनका पूर्वापरक्रम परिवर्तित कर दिया है, कुछ प्रयोग तो इनकी मौलिक, विशिष्ट प्रतिभा एवं उर्वर कल्पना की उद्भूति हैं ।"[1]

वर्माजी ने चतुर्दशपदी छन्दों की भी रचना की हैं जिनके कुछ उदाहरण हैं "रूपराशि" में संकलित "यह अभिनव- श्री विकसित हो"[2] और "ओ प्रेयसी रूप तुम्हारा" ।[3] अन्य उदाहरण "चित्ररेखा" में मिलते हैं जैसे "मेरे उपवन के अधरों में", "कलियो यह अवगुण्ठन खोलो" । "समीरण ! धीरे से बह जाओ", निस्पन्द तरी अति मन्द तरी", "गाओ मधु प्रिय गान" ! "आओ मेरे सुन्दर वन में" आदि गीत वर्माजी द्वारा रचित चतुर्दशपदी के अन्तर्गत आते हैं ।

निष्कर्ष

आधुनिक हिन्दी साहित्य में वर्माजी की गीत-रचनाओं का महत्वपूर्ण स्थान है । उनके गीति-काव्य आत्माभिव्यंजना, संगीतात्मकता, अनुभूति का वैशिष्टय भावों के ऐक्य एवं संक्षिप्तता से युक्त हैं । वर्माजी के गीतों में प्रकृति परक, दार्शनिक और रहस्यवादी गीतों की मात्रा अन्य गीतों की अपेक्षा अधिक है ।

---

1. छायावाद का काव्य शिल्प - प्रतिमा कृष्णबल - पृ: 55.
2. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 40.
3. वही - पृ: 48.

अध्याय - पाँच

रामकुमार वर्मा के काव्य का भावपक्ष

कविता में कवि की आत्मानुभूति की अभिव्यक्ति होती है । इसलिए कविता में कवि के अंतरमन का निश्छल प्रकाशन होता है । कवि के भाव जगत के निर्माण में देश-काल, परम्परा, संस्कार तथा कवि की अपनी प्रकृति एवं अभिरुचियों का महत्वपूर्ण स्थान है । उनकी संपूर्ण कृतियों में उनकी भावगत विशेषताएँ पाई जाती हैं । डॉ. वर्माजी की रचनाओं में अभिव्यक्त उनकी भावगत विशेषताएँ हैं - सौन्दर्य चित्रण, नारी भावना, मानवतावाद, दार्शनिक विचारधारा, भारतीय संस्कृति की अभिव्यक्ति, गाँधीवादी विचारधारा, रहस्यवाद और राष्ट्रीय भावना की अभिव्यक्ति । आगे वर्माजी की काव्यरचनाओं में अभिव्यक्त इन विशेषताओं का विश्लेषण किया गया है ।

सौन्दर्य चित्रण

डॉ. रामकुमार वर्मा के साहित्य संबन्धी आलोचनात्मक ग्रन्थों में उनकी सौन्दर्य संबन्धी मान्यताएँ स्पष्ट हुई है । वे काव्य और सौन्दर्य के बीच घनिष्ठ संबन्ध मानते हैं । साधारण मनुष्य से अलग भावलोक में विचरण करनेवाले कवि प्रकृति के समस्त सौन्दर्य को अपनी वाणी में आबद्ध कर देते हैं । वर्माजी सौन्दर्य में आनन्द का प्रादुर्भाव करना ही कविता का चरम आदर्श मानते हैं । उनके ही शब्दों में - "कवि साधारण मनुष्य से भिन्न होता है । वह जानता है कि किस प्रकार वह अपने को प्रकृति की गतिशीलता में लीन कर दे और उसके सहारे वह उसके कोने कोने से परिचित होकर उन तथ्यों को प्रकाशित करे जिनसे जीवन बना हुआ है - जिनसे सौन्दर्य में आनन्द की

सृष्टि हुई है । सौन्दर्य में इस आनन्द का प्रादुर्भाव करना ही कविता का परम आदर्श है ।"[1] वर्माजी के अनुसार कवि का महान् धर्म है प्रकृति में छिपे हुए सौन्दर्य को स्पष्ट कर देना और कवि स्वयं स्रष्टा बन जाता है - "प्रकृति के समस्त रहस्यों को अपनी पदावली में केन्द्रीभूत कर कवि स्वयं स्रष्टा के रूप में हो जाता है । वह संसार को उसके वास्तविक स्वरूप का सन्देश देता है । संसार को आश्चर्य होता है अपने ही उस महान् सौन्दर्य पर जो उसमें इतने काल से छिपा हुआ था । अतः इस छिपे हुए सौन्दर्य को कविता में स्पष्ट कर देना ही कवि का महान् धर्म है ।"[2] वे सौन्दर्य के दो पक्ष मानते हैं एक इन्द्रियजनित और दूसरा आध्यात्मिक । "साहित्य शास्त्र" में उन्होंने इसका विस्तृत विवेचन किया है - "सौन्दर्य के दो पक्ष हैं । एक इन्द्रिय जनित और दूसरा आध्यात्मिक । प्रथम का प्रतिफलन सुख में होता है और दूसरे का आनन्द में । सुख या आनन्द का स्थूल प्रतीक सौन्दर्य है । अतः सौन्दर्य की परिभाषा हम यही कह सकते हैं सौन्दर्य स्थूल से उत्पन्न सूक्ष्म की वह सहज परिस्थिति है, जिसकी प्रगति सुख या आनन्द की ओर है । सुख इन्द्रियों का विषय है और आनन्द अन्तःकरण का । अतः सौन्दर्य इन्द्रियजनित या अन्तः करण जनित रागात्मक मनोवेग के विश्राम में है ।"[3] कविता के मूल में भी यही सौन्दर्य चेतना विद्यमान है । वर्माजी द्वारा दी गई कविता की परिभाषा से यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है - "आत्मा की गूढ़ और छिपी हुई सौन्दर्य राशि का भावना के आलोक से प्रकाशित हो उठना ही "कविता" है । जिस समय आत्मा का व्यापक सौन्दर्य निखर उठता है, उस समय कवि अपने में सीमित रहते हुए भी असीम हो जाता है ।"[4]

---

1. साहित्य चिन्तन - "मेरा दृष्टिकोण" - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृः 161.
2. वही ।
3. साहित्य शास्त्र - रामकुमार वर्मा - पृः 28.
4. आधुनिक कवि-3 - डॉ. रामकुमार वर्मा - "अपने विचार" - पृः 9.

कवि के सौन्दर्य तत्व की अभिव्यक्ति के माध्यम है प्रकृति और नारी । वर्माजी की रचनाओं में प्रकृति सौन्दर्य के दो रूप मिलते हैं । एक स्थान पर वर्माजी ने प्रकृति सौन्दर्य पर नारी सौन्दर्य का आरोप करके सौन्दर्य तत्व की अभिव्यक्ति की है । अन्यत्र नारी सौन्दर्य का वर्णन करते समय नारी को मांसल सौन्दर्य से मुक्त करने के लिए उस पर प्रकृति सौन्दर्य का आरोप किया है । साथ ही नारी सौन्दर्य पर प्रकृति सौन्दर्य का आरोप भी मिलता है । उन्होंने नारी सौन्दर्य वर्णन करते समय नारी के आन्तरिक सौन्दर्य का वर्णन भी किया है ।

प्रकृति छायावादी सौन्दर्य दृष्टि का सहज आलंबन है । छायावादी कवियों ने प्रकृति सौन्दर्य पर नारी के रूप और क्रिया व्यापारों का आरोप किया है । वर्माजी ने अपने महाकाव्य "एकलव्य" में प्रकृति को एक सुन्दरी के रूप में चित्रित किया है जो नीला वस्त्र पहनकर वायु का प्रतोद लेते हुए सृष्टि रथ को आगे बढ़ाकर आ रही है -

"एकलव्य देखता है, प्रकृति किरीटिनी,
पुष्प-छींटवाली कसे हरी पत्र-कंचुकी
नीलाम्बर धार कर वायु का प्रतोद ले,
सृष्टि-रथ आगे बढ़ा, आ रही है सुन्दरी ।"[1]

अन्यत्र वर्माजी ने नक्षत्र की शोभा से चमत्कृत रजनी को एक बाला के रूप में चित्रित किया है जो सज-धज कर तारों वाले गजरे बेचने जा रही है -

"इस सोते संसार बीच
जगकर सजकर रजनी बाले !
कहाँ बेचने ले जाती हो,
ये गजरे तारों वाले ।"[2]

---

1. एकलव्य - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 201.
2. गजरे तारोंवाले - वही - पृ: 8.

दूसरे स्थान पर कल-कल ध्वनि करते हुए बहने वाले निर्झर के सौन्दर्य पर प्रेमिका का रूप भाव आरोपित किया है जो अपने प्रियतम से मिलने के लिए मधुर गान करती हुई आगे बढ़ रही है ।[1]

नारी को मांसल सौन्दर्य की स्थूल जड़ता से मुक्त करने के लिए कवि नारी रूप पर प्रकृति सौन्दर्य का आरोप करते हैं । प्रकृति सौन्दर्य का ऐसा आरोप "उत्तरायण" में रत्ना के सौन्दर्य चित्रण में मिलता है -

"वह लज्जा से कुछ नमित, शुभ्र सुकुमार गात,
मुस्कान मधुर जैसे उगती है किरण प्रात ।
नव यौवन से अभिषिक्त, नवल तन इस प्रकार,
जैसे ज्योतित हो ज्योत्स्ना से जल की फुहार ।"[2]

"ओ अहल्या" में अहल्या के रूप सौन्दर्य के चित्रण में भी इसी प्रवृत्ति लक्षित होती है -

"अनुराधा नक्षत्र राशि-सा था कंचुकी का रूप,
कटि तट में वर्तुल हो सिमटी माघ मास की धूप ।"[3]

"निशीथ" में नारी सौन्दर्य के वर्णन के लिए वर्माजी ने प्रकृति से उपमान लिया है जो कमला के सौन्दर्य को और बढ़ाती है । यहाँ नारी सौन्दर्य पर प्रकृति सौन्दर्य का आरोप है -

----

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 9.
2. उत्तरायण - वही - पृ: 29.
3. ओ अहल्या - वही - पृ: 26.

"उषः समान कपोलों पर लहरे थे दो दस बाल,
ओठों में लाली थी, वैसा
ही था कोमल गात,
आँखों में यौवन का निकला
था छवि-पूर्ण प्रभात"[1]

प्रकृति सौन्दर्य का एक अन्य स्वरूप भी मिलता है जहाँ नारी सौन्दर्य वर्णन के लिए उत्प्रेक्षालंकार का सहारा लिया है। निम्नलिखित पंक्तियों में नायिका के केश सौन्दर्य का चित्रण करने के लिए वर्माजी ने यही प्रवृत्ति अपनायी है -

"केश सजे थे फूलों से, वे थे कितने सुकुमार !
मानों काले बादल में था इन्द्र धनुष का प्यार ।"[2]

प्रकृति पर नारी सौन्दर्य का आरोप करनेवाले कवि ने फिर प्रकृति के माध्यम से अपनी कोमलतम भावनाओं की व्यंजना की है। यह उनके आन्तरिक सौन्दर्य बोध का उदाहरण है। प्रकृति उनकी भावनाओं से अनुरंजित है। संध्याकालीन आसमान की लालिमा उनके मन में उठने वाली कविता से रंगीन बन गई है और चिड़ियों के कंठों में उनकी कविता का स्वर कंपन है।[3]

कवि के मन में उठने वाली आशा-निराशा और जीवन की नश्वरता के बोध का चित्रण प्राकृतिक व्यापारों के माध्यम से हुआ है -

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 122.
2. वही - पृ: 132.
3. वही - पृ: 59.

"क्षण-भर हँसता है बादल,
पाकर पश्चिम का प्यार
फिर स-तम निराशा ही में,
खोता उसका उद्‌गार ।"[1]

नारी सौन्दर्य चित्रण हमेशा कवियों का प्रमुख विषय है । वर्माजी की रचनाओं में नारी सौन्दर्य का चित्रण यत्र तत्र मिलते हैं । "उत्तरायण" और "ओ अहल्या" महाकाव्यों में नारी सौन्दर्य चित्रण उपलब्ध है । नारी के अंग प्रत्यंग का चित्रण वर्माजी की रचनाओं में मिलते हैं । नारी के केश, भालदेश, आँखें, कपोल और अधरों का सौन्दर्य चित्रण किया गया है । वर्माजी ने नूरजहाँ का सौन्दर्य और उसके शरीर की कोमलता का वर्णन किया है -

"कान्तिमयी थी - मानों शशि-किरणों पर तू सोती थी,
राजमहल की सरस सीप में तू जीवित-मोती थी ।"[2]

नारी के आन्तरिक सौन्दर्य वर्णन की योजना भी इनकी रचनाओं में हुई है -

"फूलों के यौवन से सज्जित -
केश-राशि थी खोली -
तन से तो तू युवती थी पर-
मन से कितनी भोली ।"[3]

उपर्युक्त पंक्तियों में कवि ने नूरजहाँ के बाह्य सौन्दर्य चित्रण के साथ उनके आन्तरिक सौन्दर्य-भोलेपन - की ओर इशारा किया है ।

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 60.
2. वही - पृ: 78.
3. वही ।

कवि सतीत्व को नारी हृदय का अमूल्य रत्न मानते हैं । जिस प्रकार स्वच्छ और निर्मल जल के अभाव के कारण नदी शोभा हीन दिखाई देती है उसी प्रकार वह नारी लज्जा-हीना दीखती है जिसमें सतीत्व का अभाव है । यह सतीत्व नारी हृदय का अमूल्य रत्न है । कवि लज्जा को नारी हृदय का आभूषण मानते हैं और उसे मुख्य गुण भी मानते हैं । लज्जा युक्त नारी का रूप वर्माजी के शब्दों में -

"जब लज्जा से हो जाते हैं
अरुण नारी के कलित कपोल,
जब उसके सुस्पर्श-मात्र से
रुक जाता है मधुमय बोल,
जैसे मंद वायु से होता
अरुण कमल का तनिक झुकाव,
वैसे ही यह मधुर रूप मन
में लाता श्रद्धा का भाव ।"[1]

सतीत्व के समान लज्जा जैसे आन्तरिक सौन्दर्य को भी वे नारी के लिए उपयुक्त मानते हैं ।

वर्माजी ने पुरुष सौन्दर्य का भी चित्रण किया है । "एकलव्य" महाकाव्य में आचार्य द्रोण का रूप चित्रण देखिए -

"श्वेत जटा, विस्तृत ललाट, कसी भौंहें हैं
नेत्र हैं विशाल, रक्तवर्ण, उठी नासिका
श्वेत श्मश्रु बीच ओंठ, जैसे शुभ्र अभ्रों की
ओट संध्याकाल-मध्य दुर्ग का कलश है ।"[2]

---

1. कुल ललना - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 65.
2. एकलव्य - वही - पृ: 12.

उपर्युक्त पंक्तियों में आचार्य द्रोण की श्वेत जटा, विस्तृत ललाट, भौंहें, विशाल और लालिमा से युक्त उनकी आँखें नासिका और उनकी ओंठ का चित्रण किया गया है ।

"परिचय" सर्ग में गांगेय भीष्म के शारीरिक सौन्दर्य का चित्रण किया गया है जिसमें उनके आन्तरिक सौन्दर्य का भी सामंजस्य है -

"श्वेत केश राशि है । ललाट दिव्य है, अहा !
जैसे पुण्य-पुंज में प्रशान्त तीर्थ राज है ।
अंकित विशाल है विश्वास वट वृक्ष-सा,
पत्रावलि पीत है । मध्य में थे तीन बिन्दु,
जैसे थे वे सूक्ष्म फल धर्म, अर्थ मोक्ष के
नेत्र हैं विशाल मानो जाह्नवी के मीन दो ।"[1]

इससे भीष्म की धर्म-नीति, उनके ब्रह्मचर्य, मन की विशालता जैसे आन्तरिक सौन्दर्य का भी चित्रण मिलता है ।

"ओ अहल्या" में विवाह के लिए नियुक्त ऋषि गौतम का चित्रण देखिए -

"उत्तरीय था हरित, शेष,
तन का नव वल्कल पीला था,
ब्रह्मचर्य से अति प्रदीप्त तन,
गौरव से गर्वीला था ।।"[2]

उपर्युक्त पंक्तियों में कवि ने ब्रह्मचर्य जैसे आन्तरिक सौन्दर्य की ओर संकेत किया है ।

---

1. एकलव्य - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 29.
2. ओ अहल्या - वही - पृ: 64.

नारी भावना

वर्माजी ने नारी को प्रेयसी के रूप में चित्रित करके अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति की है । कवि प्रेयसी को "सुकुमारी" कहकर यह अनुरोध करता है कि इस प्रशान्त और नीरव रात में वह चुपके से आयें । वे दिन-रात प्रेयसी की प्रतीक्षा में है । प्रशान्त रात भी उसे दिन के समान है क्योंकि वह नीरव रात में जागकर प्रेयसी की प्रतीक्षा करता रहता है । प्रेयसी से यह आशा प्रकट करती है कि एक ज्योति के समान पथ पर गिर जाओ -

"प्रेयसी ! जग है एक -
भटकता शून्य स-तम अज्ञात,
एक ज्योति-सी उठो -
गिरो पथ-पथ पर बन कर प्रात ।"[1]

प्रेयसी के मुख पर पडे घूँघट के कारण वह उसकी छवि का पान नहीं कर सकता । इसलिए वह प्रेयसी से अपने मुख पर पडे घूँघट हटाने का अनुरोध करता है । उसे बीती घटनाओं की याद आता है । उसकी प्रेमिका रति के समान थी और वह स्वयं उच्छृंखल अनंग था । कवि प्रेयसी से यही कहते हैं कि उनका रूप सौन्दर्य ही वसन्त के दर्पण में अंकित हुआ है । उनकी प्रेयसी का सौन्दर्य देखकर चन्द्रमा अपने सौन्दर्य को तुच्छ मानते हैं और वह निर्बल होकर आसमान की ओर सिधारा है -

"तुम्हें देख शशि भस्म लगा -
दुर्बल हो गगन सिधारा !"[2]

उनकी प्रेमिका के सौन्दर्य के आगे चन्द्रमा का सौन्दर्य तुच्छ है । इसलिए वह लज्जित होकर आसमान की ओर सिधारा है ।

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 42.
2. वही - पृ: 48.

वे अपनी प्रेमिका को दयावान मानते हैं, इसीलिए ही वह उनके द्वार पर आई है। कवि उससे पूछते हैं कि अपने अधिवास को तुम अमर संसार बनाओगी'

"तुम तो तरुणा करुणा हो,
आई हो मेरे द्वार ।
क्या अपना अधिवास बनेगा
एक अमर संसार[1]"।

वे मानते हैं कि प्रेयसी ने उन्हें साँसों के बन्धन से बाँध लिया है । प्रेयसी का प्रत्येक शब्द उन्हें सुरभित सुस्मित उपवन के समान लगता है और वह सुरभित साँस समीर में कैसा मतवालापन है । प्रेयसी से मिलन न होने के कारण वे निराश हो जाते हैं । उन्हें अकेलेपन का अनुभव होता है । इसलिए वे प्रेयसी से कहते हैं कि -

"प्रेयसि । तुम चन्द्रकला-सी
आ जाओ मेरे द्वार,
उज्ज्वल अधरों से दे दो,
उज्ज्वल जीवन का सार ।"[2]

वह एक चन्द्रकला के समान उनके द्वार पर आ जायें और अपने उज्ज्वल अधरों से उज्ज्वल जीवन का सार दें । उनके हृदय को माधुर्य से भर दें ।

प्रेयसी के मिलन के लिए इतना विकल हो जाता है कि वह एक शान्त किरण के समान उनके मन में आ जायें जिससे उन्हें बाद में अकेलेपन का अनुभव न हो जायें ।[3]

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 54.
2. वही - पृ: 60.
3. वही - पृ: 63.

"ओ अहल्या" महाकाव्य में कवि के मन में नारी के प्रति जो श्रद्धा और सम्मान का भाव है वह खुलकर प्रकट हुआ है -

"नारी ही है शक्ति और नारी है अनुपम भक्ति,
नारी है तप-रूप और नारी ही है अनुरक्ति ।
नारी का यह रूप प्रकृति की है मोहक मुस्कान,
हुई न उसके भ्रू-भंगों की कभी सही पहिचान ।।"[1]

नारी ही शक्ति है, तप रूप है । नारी का यह रूप प्रकृति की मोहक मुस्कान है और उसके भ्रू भंगों की सही पहचान कभी नहीं हुई है ।

वे सतीत्व को नारी का अमोघ अस्त्र मानते हैं और नारी के सतीत्व के संबन्ध में अपनी धारणा प्रकट करते हैं -

"यह सतीत्व है, इस पर रहता
था हमको सदैव अभिमान ,
यह सतीत्व है, जिसके कारण
भारत का रहता था मान ।
यह सतीत्व है, जिसके कारण
नारी-जाति का था गुण-गान ,
यह सतीत्व है जिस पर होती
थीं सब ललनाएँ बलिदान ।"[2]

सतीत्व के कारण भारत का मान रहता था । इस सतीत्व के कारण ही नारी-जाति का गुण-गान होता रहता है । इसकेलिए सारी ललनाएँ बलिदान करने केलिए तैयार हैं ।

---

1. "ओ अहल्या" - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृः 20.
2. "कुल ललना" - वही - पृः 62.

उनके नारी उद्धार की भावना इस रचना की अन्तिम पंक्तियों में बहुत स्पष्ट है -

"माताएँ विदुषी बन जग में
कर दें नारी-जाति-उद्धार,
महिलाओं के यशोगान से
गुंजित हो सारा संसार ।"[1]

वे नारी को शिक्षित देखना चाहते हैं जिससे नारी जाति का उद्धार हो जायें और महिलाओं के यशोगान से सारा संसार गुंजित हो जायें ।

समाज की विधवा नारियों की ओर भी कवि का ध्यान है । प्रिय के वियोग की आग से उसका हृदय जलती रहती है । "दुखिनी के आँसू का परिचय" शीर्षक कविता में विधवा की करुण कहानी की ओर संकेत है ।[2]

भारत में नारी का जो अपमान हो रहा है उसकी ओर भी कवि ने संकेत किया है । इसमें टूटी कली के माध्यम से नारी के अपमान को चित्रित किया गया है -

"मुझे न खिलने दो उपवन में,
कर डालो सौन्दर्य - विहीन ।
xx xx xx xx
सब दुर्गुण कहना इतना भी कह देना दया निधान ।।
होता है मेरे समान भारत में नारी का अपमान ।।"[3]

---

1. कुल ललना - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 142.
2. आज के लोकप्रिय हिन्दी कवि रामकुमार वर्मा - डॉ. राधेकृष्ण श्रीवास्तव - पृ: 52.
3. वही - पृ: 53.

मानवतावाद

वर्माजी की रचनाओं में मानवतावादी विचारधारा की अभिव्यक्ति हुई है । समाज में प्रचलित वर्णव्यवस्था के प्रति वे अपना आक्रोश प्रकट करते हैं । उनके अनुसार समाज में सभी मानव के समान अधिकार है । हरिजन को जिन्हें हम अपने समाज से अलग हटाते हैं वे उचित नहीं समझते । ये तो हमारे समाज के ही अङ्ग हैं -

"काट कर क्यों रख दिया यह अङ्ग अपना ?
देखो उनके बिना तुम कौन सपना ?
वे तुम्हारे हैं, तुम्हारे ही रहेंगे,
सत्य में वे स्वर मिला कर सच कहेंगे ।"[1]

वर्णव्यवस्था के प्रति वे अपना आक्रोश प्रकट करते हैं । समाज, निम्न वर्ग को घृणा की दृष्टि से देखते हैं । वे पाषाण जैसे उपेक्षित रहते हैं । इस उच्च-नीच भावना के प्रति वे तीव्र विरोध प्रकट करते हैं -

"वे सभी तो हैं हमारे देशवासी,
फिर उन्हीं के प्रति कहो, क्यों है घृणा-सी ?
वे उपेक्षित ही रहें पाषाण जैसे ?
देह में उनके नहीं हैं प्राण जैसे ।"[2]

वर्माजी जाति को नहीं शील को महत्व देते हैं । इसी भावना से प्रेरित होकर वर्माजी ने एकलव्य को महाकाव्य का नायकत्व प्रदान किया है । उनके ये विचार द्रष्टव्य है -

---

1. संत रैदास - प्रस्तावना - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 3.
2. वही - पृ: 2.

"एकलव्य ने जिस आचरण का परिचय दिया है, वह किसी उच्च कुल के व्यक्ति के आचरण के लिए भी आदर्श है । वह "अनार्य" नहीं "आर्य" है, क्योंकि उसमें शील का प्राधान्य है । उसमें महाकाव्य के नायक बनने की क्षमता है, भले ही वह "सुर" अथवा "सद्वंश" में उत्पन्न क्षत्रिय नहीं है ।"[1] आचार्य द्रोण एकलव्य को निम्न जाति के होने के कारण अपनी शिक्षा का पात्र नहीं मानते -

"किन्तु मेरे शिक्षण के वे ही अधिकारी हैं,
जो कि भूमि-पुत्र नहीं, भूमि-पति हैं ।"[2]

इस वर्णव्यवस्था को कवि मानवता के विकास के विपरीत मानते हैं और ऐसी व्यवस्था का पतन अनिवार्य मानते हैं -

"ऐसी राजधानी का विनाश होगा शीघ्र ही,
जो महर्षियों को राजनीति से चलाती है ।
जिसने किया है भेद मानव के पुत्रों में ।
भूमिपति, भूमिपुत्र वर्ग हो गए हैं दो ।"[3]

समाज में प्रचलित वर्णव्यवस्था के प्रति वे कठोर प्रश्न करते हैं कि शूद्र और ब्राह्मणों में यह भेद कैसा है जबकि सब मानवों के अंग समान रहते हैं।[4]
वे मानवीय मूल्य-आत्मबल - को प्रमुख स्थान देते हैं -

"सावधान ! भूमिपति ! हम में भी शक्ति है,
भूमिपुत्र सर्वदा हैं भूमि बल जानते ।
पशुबल-कौशल तो सीमित तुम्हारा है,
आत्मबल की हमारे पास सीमा है नहीं ।"[5]

---

1. एकलव्य - "आमुख" - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 6.
2. वही - पृ: 126.
3. वही - पृ: 177.
4. वही - पृ: 198.
5. वही - पृ: 177.

एकलव्य भूमिपुत्र होना अपना गौरव समझता है और उसे अपना सुयोग मानता है । उनकी राय में भूमिपति तो जीवन की गति का मूल्य नहीं जानते -

"भूमिपुत्र होना, मेरे भाग्य का सुयोग है,
भूमिपति में तो मुक्त मानव विकृत है ।
मूल्य नहीं जानते वे जीवन की गति का,
सुख है निमेष जैसा दुःख लंबी दृष्टि है ।"[1]

मानव में अपार शक्ति का स्रोत छिपा रहता है । उनके अनुसार उस शक्ति की महानता तब होती है जब वे अपनी शक्ति से सभी मानव में समानता की स्थापना की जायें -

"मानव की शक्ति तो महान् तब होती है,
जब वह दानव को मानव बना सके,
और सब मानवों में साम्य की हो स्थापना ।"[2]

वर्माजी ने एकलव्य के माध्यम से गुरु भक्ति, त्याग-साधना जैसे मानवीय मूल्यों की स्थापना की है ।

विधवा, अछूत जो समाज के ही अंग हैं उनके प्रति अपनी सहानुभूति प्रकट की है -

"पल कभी सके न मुझको थाम,
जहाँ हिन्दू समाज का पाप
मुझे भारी करने के हेतु
छिप गया है मुझमें चुपचाप
जल रही है मुझमें शोकाग्नि
हाय आँसू है मेरा नाम ।"[3]

---

1. एकलव्य - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 177.
2. वही - पृ: 198.
3. आज के लोकप्रिय हिन्दी कवि रामकुमार वर्मा - डॉ. राधेकृष्ण श्रीवास्तव - पृ: 52.

उन्होंने "अछूत" शीर्षक एक अलग गीत लिखा है जिसमें उन्होंने उनके प्रति सद्व्यवहार करने का आह्वान दिया है और अछूत को एकलव्य का पूत कहा है -

"भेद भाव सब दूर हटाकर गले लगाओ ।
इन्हें शूद्र मत कहो पास इनको बिठलाओ ।
धरा सजाने के लिए यही स्वर्ग के दूत हैं
भाई हैं अपने सदा, नहीं दरिद्र अछूत हैं ।"[1]

कवि जाति-भेद की भावना को दूर रखने का आह्वान करते हुए कहते हैं कि उन्हें गले लगाओ और अपने पास बिठलाओ । ये अपने भाई हैं, दरिद्र अछूत नहीं हैं ।

दार्शनिक विचार

वर्माजी की रचनाओं में परमतत्व, जीव, जीवन-मृत्यु, सुख-दुःख आदि तत्वों का विवेचन हुआ है ।

वे सारी प्रकृति में उस परमतत्व की शोभा का दर्शन करते हैं । उनके मन में यह शंका उठती है कि वे कैसे अपने नश्वर स्वर से उस अनश्वर तत्व का कीर्तिगान कर सकते हैं । उन्होंने परमात्मा को प्रिय के रूप में चित्रित करके अपनी भावनायें प्रकट की हैं । कई स्थानों पर उन्हें "तुम" संबोधन किया है । वे उस परमतत्व को अज्ञात नहीं मानते । उनका दृढ़ विश्वास है कि चाहे दिवस हो या रात वे उन्हें अवश्य पहचान लेंगे -

"कौन कहता है कि तुम अज्ञात हो ।
मैं तुम्हें पहिचान लूँगा, दिवस हो या रात हो ।"[2]

---

1. आज के लोकप्रिय हिन्दी कवि रामकुमार वर्मा - राधाकृष्ण श्रीवास्तव - पृः 54.
2. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृः 313.

इस प्रकार वे परमतत्व को अज्ञात नहीं मानते । उन्हें सुख की अमर किरण मानते हैं ।

कवि स्वयं को (जीव को) दीपक का (परमात्मा का) किरण कण मानते हैं ।[1] कवि जीव के पुनर्जन्म पर विश्वास रखते हैं । जीव तो (स्वयं कवि) कितने जीवन धारण कर चुके हैं फिर भी प्रियतम से उसका परिचय नहीं हुआ ।[2]

उनका विश्वास है कि जीव परमात्मा की सुन्दर रचना है - "प्रिय ! तुम्हारे किस सजीले स्वप्न का आकार हूँ मैं ।"[3]

कवि सांसारिक जीवन को क्षण भंगुर मानते हैं । जिस वस्तु को उन्होंने प्यार किया था उसका नाश हो चुका है । इस नश्वरता को देखकर वह आश्चर्य चकित हो जाता है -

"देखो, यह मुरझा गया फूल
जिसको कल मैं ने किया प्यार ।"[4]

कवि जीवन को "करुणामय प्रवास" मानते हैं । अन्यत्र उन्होंने जीवन की व्याख्या इस प्रकार की है -

"जीवन है साँसों का छोटे -
छोटे भागों में चिर विलाप"[5]

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 245.
2. वही - पृ: 225.
3. वही - पृ: 316.
4. वही - पृ: 193.
5. वही - पृ: 211.

वे संसार को भीषण मानते हैं क्योंकि यहाँ घृणा, वेदना और भय भरा रहता है । जीवन के बारे में प्रश्न करनेवाले कवि इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि जीवन पीड़ा, संघर्ष और दुःख का अभिनय है और यह जीवन केवल सुख और दुःख की छाया है । आगे कवि जीवन को करुण कथा मानते हैं जिसके शब्दों में सुन्दरता है और अर्थों में व्यथा भरी रहती है । जीवन तो छोटा अभिनय है जिसमें तस्कर के समान साहस के पीछे भय विचलित रहता है । संसार की यह नश्वरता देखकर कवि उस अनश्वर और परम शक्ति का सहारा चाहते हैं । कवि की दृष्टि में जीवन आज और कल का संचय नहीं है । जीवन में मुस्कान और आँसू का चिर संचित अभिनय है । इस क्षणिक जीवन को वृद्धा के सिर के श्याम केश मानते हैं ।

वर्माजी मृत्यु को जीवित क्षण की हार मानते हैं । उनका विश्वास है कि मृत्यु में मनुष्य को शान्ति प्राप्त होती है । मृत्यु ने जीवन को अपनी परिधि में बाँध लिया है । उनके अनुसार मृत्यु क्षण-भंगुर है जीवन प्रिय शाश्वत विधान है ।

जीवन में नित्य सुख-दुःख का नियमित विधान होता है । संसार में सुख की अपेक्षा दुःख की मात्रा अधिक है । मानव जीवन में सदा सुख के निकट दुःख छिपकर निवास करता है -

"हा । यहाँ सदा सुख के समीप
दुख छिपकर करता है निवास ।"[1]

अन्य छायावादी कवियों के समान वर्माजी दुःख को "सुमधुर" मानते हैं । उनके शब्दों में -

"दुःख भी तो कैसा सुमधुर है
मेरा जीवन लघु अंकुर है ।"[2]

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृः 196.
2. वही - पृः 223.

कवि यह सत्य जानना चाहते हैं कि जो इस संसार का शासन करते हैं जिसके ज्ञान से चिर दुःखों की रात भी चाँदनी के समान सुखद प्रतीत हो जायें -

"दो मुझे वह सत्य, जो
संसार का शासन करे ,
चिर दुःखों की रात्रि भी
मुझको बने मधुयामिनी ।"[1]

उस सत्य के पहचान से उसे दुख का समय भी सुख के समान प्रतीत हुआ -

"तुम्हें आज पहिचान गया ।
मेरे दुख का समय आज जब,
सुख के समय समान गया ।"[2]

कवि दुःख में सुख का अनुभव करने लगे ।

कवि का विश्वास है संसार में सुख नहीं है वह केवल दुःख की विस्मृति मात्र है ।[3] कवि को दुःख इतना प्रिय लग रहा है कि वह सुख की नहीं दुःख की रानी बनना चाहता है ।[4] सुख तो केवल भ्रान्तिमात्र है । जिसको जीवन में सुख का विश्वास है, वह सुख से ही छला जाता है -

"सुख का विश्वास जिसे जीवन में होता है,
जान लो कि वह सुख से ही छला जाता है ।"[5]

----

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 240.
2. वही - पृ: 226.
3. वही - पृ: 293.
4. वही - पृ: 14.
5. एकलव्य - वही - पृ: 139.

"एकलव्य" में अन्य स्थान पर वर्माजी ने सुख-दुःख की विवेचना की हैं । उनके अनुसार सुख क्षणिक है और दुःख लंबी दृष्टि है । वे यह मानते हैं कि सृष्टि के विविर में सुख छिपा रहता है उसे खोज लेना है -

"सुख है निमेष-जैसा, दुख लम्बी दृष्टि है ।
×× ×× ××
सुख तो छिपा है यहाँ सृष्टि के विविर में ।
खोजो उसे ।"[1]

इस प्रकार डॉ. वर्माजी ने परमतत्व, जीव, जीवन-मृत्यु और सुख-दुःख के संबन्ध में अपना विचार उनकी काव्य रचनाओं में स्पष्ट किया है ।

बौद्ध दर्शन

वर्माजी की रचनाओं में बौद्ध दर्शन का प्रभाव है । इनकी रचनाओं में बौद्ध दर्शन के क्षणिकवाद, शून्यवाद और दुखवाद की अभिव्यक्ति देख सकते हैं ।

क्षणिकवाद के अनुसार यह जगत् परिवर्तन-शील है और यहाँ की प्रत्येक वस्तु अनित्य है ।

"कैसा वह प्रदेश है, जिसमें
एक उषा, वह भी नश्वर है ।
उज्वल एक तडित है जिसका
जीवन भी केवल क्षण भर है ।।"[2]

---

1. एकलव्य - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 177.
2. गजरे तारों वाले - वही - पृ: 207.

इस दर्शन के अनुसार जीवन क्षणिक है और दुःखमय है । इस तथ्य की अभिव्यक्ति वर्माजी ने "कली की आत्मकथा" के माध्यम से की है ।

"जग में कठोर कष्ट, पीड़ा, पाप छाया है ,
मैं तो दो दिन का अभिसार किये जाती हूँ ।"[1]

ये जीवन की क्षणभंगुरता या नश्वरता पर विश्वास रखते हैं । शून्यवाद के अनुसार सर्व शून्य है और आकाश तत्व की सत्ता सर्वोपरि है । इसी तत्व से प्रभावित होकर वर्माजी आकाश का विस्तार चाहते हैं । "आकाश गंगा" की "मौन-करुणा" गीत में इन दोनों तत्वों की अभिव्यक्ति हुई है -

"मैं तुम्हारी मौन करुणा का सहारा चाहता हूँ ।
जानता हूँ, इस जगत में
फूल की है आयु कितनी,
और यौवन की उभरती
साँस में है वायु कितनी ।

इसलिए आकाश का विस्तार सारा चाहता हूँ ।"[2] दुःखवाद के अनुसार जीवन क्षणिक और दुःखमय है, संसार तो दुःखमय है -

"सुख न है संसार में, वह है दुःखों की एक विस्मृति ।"[3]

उनके अनुसार संसार में सुख नहीं है, सुख जो है वह दुखों की एक विस्मृति मात्र है ।

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 271.
2. वही - पृ: 291.
3. वही - पृ: 293.

वर्माजी के काव्य का सांस्कृतिक पक्ष

भारतीय संस्कृति की विशेषताएँ हैं - करुणा, वीरत्व, श्रद्धा, प्रेम, वर्णाश्रम धर्म आदि की भावना । इन तत्वों की अभिव्यक्ति वर्माजी की रचनाओं में हुई है ।

भारतीय संस्कृति की विशेषता है अपने आश्रय में पडे दीन व्यक्तियों की रक्षा करना । अपने शरणागतों की रक्षा करने केलिए वे अपने प्राण तक न्योछावर करने केलिए तैयार हैं । "वीर हमीर" खण्डकाव्य में भारतीय संस्कृति की यह विशेषता प्रकट हुई है । हमीर शरणागत मंगोल को आश्रयदान देते हैं जिसके कारण उन्हें अलाउद्दीन से युद्ध करना पडा । वे अपने प्राण तक न्योछावर करने केलिए तैयार होते हैं । भारतीय संस्कृति की यह विशेषता हमीर की इन वाणियों में स्पष्ट हुई है -

"सत्य पर बलिदान होना ही हमारा कर्म है ।
दीन-दुखियों को बचाना ही हमारा धर्म है ।।
दुख नहीं - शरणागतों के हेतु यदितन भी कटे ।
है मुझे धिक्कार ! यदि पग तनिक भी पीछे हटे ।।"[1]

अन्य भावना है वीरत्व भावना । भारतीय जनता कायर नहीं है । वे शत्रुपक्ष की ललकार को स्वीकार करते हैं । सैनिकों की संख्या कम होने पर भी अपनी वीरता से वे विजय प्राप्त करते हैं ।

भारतीय जनता स्वाभिमानी है । यह उनकी संस्कृति की ही विशेषता है । पल भर के लिए भी दूसरों के दास बनना नहीं चाहते । इस स्वाभिमानी व्यक्तित्व के कारण आर्य ललनाओं ने जौहर" व्रत का पालन करते हुए आत्मोत्सर्ग किया ।[2]

---

1. वीर हमीर - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 10.
2. वही - पृ: 75.

भारतीय संस्कृति का एक अन्य आदर्श है गुरुजनों के प्रति श्रद्धा भाव रखना । "एकलव्य" महाकाव्य में यही आदर्श प्रकट हुआ है । एकलव्य गुरुभक्ति का प्रतीक है । आचार्य द्रोण के प्रति भक्तिभाव रखनेवाला एकलव्य उस स्थान की धूल अपनी आँखों में लगा लेता है जहाँ आचार्य द्रोण खडे थे -

"देव द्रोणाचार्य के जहाँ पर चरण थे,
धूल उस स्थान की लगाई इन आँखों से ।"[1]

कभी भी दूसरों के मुख से आचार्य की निन्दा सह नहीं पाते । जब अर्जुन यह बताते हैं कि आचार्य द्रोण ने हमें वह ज्ञान-दान नहीं दिया जो एकलव्य के धनुर्वेद कौशल में दीखता है । गुरुभक्ति की अभिव्यक्ति एकलव्य की वाणी में स्पष्ट रूप से व्यंजित हुई है -

"सावधान, आर्य ! गुरुनिन्दा एक क्षण भी,
सुन न सकूँगा आपके वाचाल मुख से ।
गुरु ज्ञान-दान निष्पक्ष करते हैं सदा,
शिष्य है जो प्राप्त करने में असफल है ।"[2]

अपनी प्रणपूर्ति में असफल रहनेवाले आचार्य द्रोण की विवशता देखकर वे स्वयं गुरादक्षिणा के रूप में अपना दक्षिणांगुष्ठ समर्पित कर देते हैं जिससे अर्जुन ही अद्वितीय धनुर्धर बन जायें -

"गुरु का हृदय खंड-खंड हो, असंभव !
दक्षिणांगुष्ठ ही हो खंड-खंड मेरा जो कि
पार्थ को बना दे अद्वितीय धन्वी विश्व में ।
गुरु-प्रण-पूर्ति करे सब काल के लिए,
जय गुरुदेव ! यह रही मेरी दक्षिणा ।"[3]

वे वन खंड की सीमा तक गुरु के साथ चलते हैं ।

---

1. एकलव्य - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 23.
2. वही - पृ: 254.
3. वही - पृ: 296.

भारतीय संस्कृति की अन्य विशेषता है वर्णाश्रम धर्म का पालन । व्यक्ति के शील को महत्व देने वाले वर्माजी ने इस जाति व्यवस्था के विरुद्ध आवाज़ उठाया है । एकलव्य के "आत्मनिवेदन" सर्ग में इस वर्णाश्रम धर्म-व्यवस्था की ओर इशारा है -

"धनुर्वेद ब्राह्मणों को क्षत्रियों को चाहिए ।
ब्राह्मणों की दृष्टि की दिशा में देखते हुए,
क्षत्रियों के लक्ष्य बिन्दु ऐसे मिट जाएँगे
जैसे स्वर-संधि में आदेश पर-रूप हो ।

xx xx xx xx

वैश्य और शूद्र क्या करेंगे धनुर्वेद ले?
वैश्य शब्द - वेधी स्वर से क्या शस्य काटेंगे?
और शूद्र शंख फूँक सेवा में लगेंगे क्या?"[1]

भारतीय संस्कृति का एक अन्य प्रमुख तत्व है मानवता-प्रेम । इस मानव-प्रेम की अभिव्यक्ति महाकाव्य "एकलव्य", खण्डकाव्य" सन्त रैदास" और "अछूत" नामक कविता में प्रकट हुई है ।

पुरुष पत्नी को अपनी अर्द्धांगिनी मानते हैं । ऋषि गौतम की वाणी में

"गौतम बोले - "पत्नी के प्रति
सदा रहूँगा अनुरागी
हम दोनों ही साथ रहेंगे
पाप पुण्य के सहभागी ।"[2]

नारी के प्रति उनके मन में श्रद्धा है । भारतीय संस्कृति की यह विशेषता "ओ अहल्या" महाकाव्य में स्पष्ट हुई है ।

---

1. एकलव्य - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 122.
2. ओ अहल्या - वही - पृ: 68.

गाँधीवादी विचार धारा

वर्माजी की रचनाओं में गाँधीवादी विचार की अभिव्यक्ति हुई है। गाँधीजी शिक्षा के समर्थक थे। उनके अनुसार समाज का हर एक व्यक्ति चाहे लडकी हो या लडका शिक्षित होना चाहिए। वर्माजी ने स्त्री-शिक्षा पर ज़ोर दिया है। उनके अनुसार -

"माताएँ विदुषी बन जग में
कर दें नारी-जाति-उद्धार,
महिलाओं के यशोगान से
गुंजित हो सारा संसार।"[1]

इन पंक्तियों में गाँधीजी की नारी उद्धार की भावना और शिक्षा की आवश्यकता इन दोनों भावनाओं की अभिव्यक्ति हुई है। गाँधीजी नारी को उच्चशिक्षा देने के समर्थक थे जो उपर्युक्त पंक्तियों में स्पष्ट है।

गाँधीजी में नारी के प्रति प्रेम तथा श्रद्धा थी। आधुनिक युग तक नारी को उपेक्षित माना जाता था। वे इसके विरुद्ध समाज में नारी को आदरणीय स्थान देने के समर्थक थे। वर्माजी नारी को आदरणीय मानते हैं। उनके शब्दों में -

"नारी ही है शक्ति और नारी है अनुपम भक्ति,
नारी है तप-रूप और नारी ही है अनुरक्ति।
नारी का यह रूप प्रकृति की है मोहक मुस्कान,
हुई न उसके भ्रू-भंगों की कभी सही पहिचान।।"[2]

---

1. कुल ललना - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 140.
2. ओ अहल्या - वही - पृ: 20.

वर्माजी की रचनाओं में दिखाई पडनेवाली अन्य गाँधीवादी विचारधारा है अछूतोद्धार की भावना। "एकलव्य" महाकाव्य की रचना के पीछे इसी भावना की प्रेरणा है । उन्होंने "एकलव्य" महाकाव्य के "आमुख" में इसकी ओर इशारा की है - "मेरे लिए यह कम संतोष की बात नहीं है कि मेरे शैशव के संस्कारों में अंकुरित और बापू के अछूतोद्धार में पल्लवित यह कथा दस वर्षों की साधना के बाद आज की युगवाणी में प्रस्फुटित हो रही है ।"[1]

गाँधीजी के समान उनके मन में भी अछूतों के प्रति प्रेम और आदर है । वे समाज में अछूतों को अन्य लोगों की भाँति समान रूप से मान्यता देना चाहते हैं । उन्हें गले लगाने का आह्वान देते हैं -

"भेद भाव सब दूर हटाकर गले लगाओ
इन्हें शूद्र मत कहो पास इनको बिठलाओ ।"[2]

"सन्त रैदास" खण्डकाव्य में वर्माजी ने अछूतों को "हरिजन" कहकर अपने विचार प्रकट किए हैं । वे उन्हें अपने शरीर के अंग मानते हैं -

"काट कर क्यों रख दिया यह अङ्ग अपना?
देखते उनको बिना तुम कौन सपना?"[3]

वे जाति व्यवस्था के विरोधी हैं -

"हम हैं अछूत, तो हमारे अंग-स्पर्श से,
आर्यों के सु-अंग क्या कु-अंग बन जावेंगे?
xx xx xx xx
किन्तु शूद्र और ब्राह्मणों में भेद कैसा है?
जबकि संपूर्ण अंग मानवों के सब में?"[4]

---

1. एकलव्य - "आमुख"- डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 6.
2. आज के लोकप्रिय हिन्दी कवि रामकुमार वर्मा - डॉ. राधेकृष्ण श्रीवास्तव - पृ: 5
3. सन्त रैदास - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 3.
4. एकलव्य - वही - पृ: 198.

कवि यही प्रश्न करते हैं कि क्या अछूतों के स्पर्श से आर्यों के सु-अंग क्या कु-अंग बन जायेंगे' इस प्रकार वर्माजी की रचनाओं में गाँधीवादी विचारधारा का प्रभाव स्पष्ट रूप से परिलक्षित हैं ।

<u>रहस्यवाद</u>

छायावादी कवियों की रचनाओं में अभिव्यक्त एक प्रमुख भावगत विशेषता है रहस्यवाद की अभिव्यक्ति । डॉ. वर्माजी की रचनाओं में जिस रहस्यवाद की अभिव्यक्ति हुई है वह छायावाद की विशेष प्रवृत्ति है । उन्होंने छायावाद की परिभाषा रहस्यवाद के अन्तर्गत ही किया है - "छायावाद का अर्थ रहस्यवाद के अन्तर्गत ही समझना चाहिए । परमात्मा की छाया आत्मा में पड़ने लगती है और आत्मा की छाया परमात्मा में । यही छायावाद है ।"[1] इस उद्धरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि उनकी रहस्यवादी भावना छायावादी कवियों की भावगत विशेषता है । डॉ. वर्मा के अनुसार "रहस्यवाद आत्मा में विश्वात्मा की अनुभूति है ।"[2] अर्थात् सारी प्रकृति में परोक्ष सत्ता का आभास पाना । वे सारी प्रकृति में उस परमशक्ति का दर्शन करते हैं । परम सत्ता के प्रति जिज्ञासा की भावना रहस्यवादी काव्य की मूल विशेषता है । इस जिज्ञासा भावना से प्रेरित होकर कवि पूछते हैं फूलों में किसकी मुस्कान बिखर गई है और कौन कोकिल के कंठों मधुमय कलगान गा रहा है'[3] "चित्ररेखा" के जिज्ञासु कवि गा रहे हैं -

"ओसों का हँसता बाल रूप यह किसका है छविमय विलास
विहगों के कंठों में समोद यह कौन भर रहा है मिठास ।"[4]

---

1. अंजलि - "अपने विचार" - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 13-14.
2. आधुनिक कवि-3 - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 12.
3. गजरे तारों वाले - वही - पृ: 53.
4. वही - पृ: 195.

प्रकृति का असीम सौन्दर्य देखकर जिज्ञासा प्रकट करनेवाले कवि अन्त में यह समझते हैं कि सारी प्रकृति उस अव्यक्त और अज्ञात सत्ता के सौन्दर्य से प्रतिबिम्बित है -

"नभ के दर्पण में अङ्कित है
विमल तुम्हारा ही प्रतिबिम्ब ।
सभी दिशाओं ने पहनी है
आज तुम्हारी ही माला ।।"[1]

रहस्यवादी कविताओं में अभिव्यक्त अन्य विशेषता है प्रेम की प्रधानता । "आधुनिककवि-3" में वर्माजी ने रहस्यवाद की चर्चा करते हुए इसकी ओर इशारा किया है - "रहस्यवाद की भावना में प्रेम की प्रधानता है ।"[2] यह आध्यात्मिक प्रेम रहस्यवाद की विशेषता है । रहस्यवादी कवि परोक्ष सत्ता को प्रियतमा की भावना से गृहीत करते हैं। वे तो कभी परमात्मा को प्रियतमा के रूप में स्वीकार करते हैं तो कभी प्रियतम के रूप में । वे कहते हैं "आज न कर पाऊँगा संयम, मैं न बनूँ तो, तू बन प्रियतम ।"[3] उनके अनुसार "इस प्रेम की चरम अभिव्यक्ति दाम्पत्य प्रेम में है । अन्य प्रकार का प्रेम किसी न किसी परिस्थिति में अपूर्ण है, इसकी पूर्णता एकमात्र दाम्पत्य संबन्ध में है ।"[4] वर्माजी ने इस अलौकिक प्रणय भावना को लौकिक धरातल पर अभिव्यक्त किया है । इस प्रणय भावना के अन्तर्गत शृंगार के विविध पक्षों का चित्रण किया है । वे दिन-रात प्रेयसी की प्रतीक्षा करते रहते हैं । रात भी उसे दिन के समान ही लगते हैं । शान्त और नीरव रात में वे प्रेयसी से अपने पास आने का अनुरोध करते हैं । प्रेमिका से अपने मुख पर पडे घूँघट को हटाने की इच्छा प्रकट करते हैं क्योंकि घूँघट के कारण दिव्य सौन्दर्य का पान न कर सकते

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृः 197.
2. आधुनिक कवि-3, डॉ. रामकुमार वर्मा - पृः 14.
3. गजरे तारों वाले - वही - पृः 214.
4. आधुनिक कवि-3, वही - पृः 14.

परमात्मा से वियुक्त आत्मा की कातर उक्तियाँ उनकी रचनाओं में अभिव्यक्त है । वे परमात्मा से यही आशा प्रकट करते हैं कि - "मेरे जीवन में एक बार तुम देखो तो चिन्मय स्वरूप"[1] प्रिय से सामीप्य होने के बदले दूरी ही होती चली जा रही है -

"देव ! मैं अब भी हूँ अज्ञात !
एक स्वप्न बन गई
तुम्हारे प्रेम-मिलन की बात !"[2]

"चित्ररेखा" और "चन्द्रकिरण" में उनकी रहस्यवादी भावना की अभिव्यक्ति सशक्त रूप में अंकित हुई है । वे प्रियतम से उलाहना भी प्रकट करते हैं - "एक बार तुम भूलकर भी न आये ।" उनकी आत्मा परमात्मा से इस प्रकार मिलना चाहता है कि "मैं तुमसे मिल सकूँ यथा उर से सुकुमार दुकूल ।" प्रेम के आधार पर आत्मा और विश्वात्मा में ऐक्य स्थापित करता है । इस प्रकार आध्यात्मिक प्रेम की अभिव्यक्ति लौकिक धरातल पर हुई है ।

कवि इस सोच में है कि वे अपने नश्वर स्वर से उस अनश्वर तत्व का यशोगान कैसे गा सकते हैं - "नश्वर स्वर से कैसे गाउँ आज अनश्वर गीत ।" सांसारिक नश्वरता देखकर कवि के मन में दुःख होता है, पीड़ा होती है । "अशान्त" शीर्षक गीत में उसके मन की अशान्ति ही खुलकर प्रकट हुई है । उनकी रचनाओं में निराशा का जो स्वर है वह आध्यात्मिक क्षेत्र की निराशा का है । "आधुनिक कवि-3" में वर्माजी ने यह स्पष्ट कर लिखा है - "मैं रहस्यवाद की निराशा का पोषक हूँ, भौतिकवाद की निराशा का नहीं ।"[3]

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 276.
2. वही - पृ: 189.
3. आधुनिक कवि-3 - वही - पृ: 20.

माया जीव को सांसारिक आकर्षणों में फँसाता है और आत्मा-परमात्मा के मिलन के बीच बाधा डालती है । इस माया के कारण उन्हें परमात्मा का साक्षात्कार नहीं होता । इसीलिए वे कहते हैं - "हटा दो घूँघट पट इस बार ।" घूँघट का तात्पर्य माया से है । इसलिए माया से उनकी प्रार्थना है -

"दूर ! दूर ! ! - मत भरो कान में,
वह मतवाला राग ,
यही चाहते हो, मैं कर लूँ
इस जग से अनुराग'
गिरते हुए फूल से कर लूँ
क्या अपना श्रृंगार'.[1]

माया के प्रभाव के कारण जीव इस नश्वर सांसारिक आकर्षणों के जाल में फँस जाते हैं । इसलिए वे माया से दूर रहना चाहते हैं ।

वर्माजी के अनुसार रहस्यवाद के लिए विशेष तत्व आवश्यक है । प्रथम है "आत्मा में आध्यात्मिक दृष्टि से अनुभूति की क्षमता हो । अर्थात् आन्तरिक दृष्टि से वह अपने आराध्य को खोजने के लिए सूर्य की किरण की भाँति सर्वत्र गतिशील हो ।"[2] अर्थात् आत्मा परमात्मा के साक्षात्कार के लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहते हैं । इस भाव की अभिव्यक्ति उनकी रचनाओं में द्रष्टव्य है । परमात्मा के दर्शन के लिए बार बार जन्म लेते रहते हैं । लेकिन उसे अभी तक उनका दर्शन नहीं मिला -

"मेरे देखोगे अभिनय'
प्रिय । देखो मेरे मन में
कितनी पीड़ा ! कितना भय !!

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 83.
2. आधुनिक कवि-3 - वही - पृ: 18.

कितने जीवन से करता -
आया प्राणों का सञ्चय ।
पर अभी न हो पाया है
अपने प्रियतम से परिचय ।"[1]

वे परमात्मा के दर्शन के लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहते हैं । परमात्मा को अज्ञात नहीं मानते । उन्हें उनके पदरज की, उनके स्वर की पहिचान है । इसलिए वे दिन हो या रात हो उन्हें जरूर पहिचान लेंगे -

"कौन कहता है कि तुम अज्ञात हो ।
मैं तुम्हें पहिचान लूँगा, दिवस हो या रात हो ।।"[2]

प्रिय की पहचान होने पर उन्हें दुख का समय भी सुख के समान प्रतीत होने लगा -

"मैं तुम्हें पहिचान गया ।
मेरे दुख का समय आज जब
सुख के समय समान गया ।"[3]

दूसरा तत्व है "आत्मा और आराध्य में ऐक्य हो, एकीकरण नहीं ।"[4] वर्माजी की मान्यता यह है कि अद्वैतवाद में एकीकरण की भावना है और रहस्यवाद में ऐक्य की । अद्वैतवाद के अनुसार मिलन के पश्चात् आत्मा और परमात्मा का एकीकरण हो जाता है । इसमें आत्मा का अलग अस्तित्व नहीं है । लेकिन रहस्यवाद में आत्मा और परमात्मा का अलग अलग अस्तित्व होता है । इसमें आत्मा के अस्तित्व का विनाश नहीं होता । कवि परमात्मा के नूपुरों का हास बनकर उनके चरणों में लिपटा रहना चाहते हैं । वे प्रिय को नव-वसंत श्री मानते हैं और अपने को वसन्त । उसी प्रकार उनके प्रिय सुमन हो तो वे उस सुमन का सौरभ है । "किरण-कण" में उनकी इस भावना की अभिव्यक्ति स्पष्ट हुई है -

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 225.
2. वही - पृ: 313.
3. वही - पृ: 226.
4. आधुनिक कवि-3 - वही - पृ: 18.

"एक दीपक - किरण - कण हूँ ।
धूम्र जिसके क्रोड में है, उस मिलन का हाथ हूँ मैं ,
नव-प्रभा लेकर चला हूँ, पर जलन के साथ हूँ मैं ।
सिद्धि पाकर भी तपस्या-साधना का ज्वलित क्षण हूँ ।"[1]

वे अपने को दीपक की किरण कण मानते हैं । जिस प्रकार दीपक और उसके जलन का पृथक पृथक अस्तित्व है उसी प्रकार है परमात्मा और आत्मा का । वे अपने को तपस्या साधना का ज्वलित क्षण मानते हैं ।

तीसरा तत्व है - "आत्मा और आराध्य में प्रेम निश्छल रूप से प्रगतिशील रहे । इस प्रेम में आत्मसमर्पण की भावना है । दाम्पत्य प्रेम के अनुरूप ही इसमें संपूर्ण व्यक्तित्व अनुराग से ओतप्रोत हो उठे ।"[2] उनमें परमात्मा के साथ निकट संबन्ध स्थापित करने की इच्छा है ।

अन्त में कवि को अपने प्रियतम के आगमन का संकेत मिलता है -

"उसी समय खद्योत एक
आता वातायन द्वारा
मैं क्या समझूँ, मुझे मिला
उज्ज्वल संकेत तुम्हारा ।"[3]

वे प्रियतम के आगमन की प्रतीक्षा करते रहते हैं, वायु रुक गयी, संध्या सिमट गई, अंधकार छाने लगा और वे शांत होकर उनकी प्रतीक्षा करते रहे । कवि प्रियतमा के स्वरित साँस की मृदु पुकार सुनी । आश्चर्य की बात है कि सरस सुरभि भी उसी प्रकार उसकी अनुकृति दे न सकी । हर क्षण उसे भार प्रतीत होने लगा -

----

1. गजरे तारों वाले - डॉ॰ रामकुमार वर्मा - पृ: 245.
2. आधुनिक कवि-3 - वही - पृ: 18.
3. गजरे तारों वाले - वही - पृ: 232.

"वह स्मृति प्रतिक्षण पर बैठी है
बढ़ा रही है समय - भार ,
देवि ! वायु रूक गई, घिरा तम,
तुम तो आ जाओ उदार !"[1]

प्रमुख छायावादी कवयित्री महादेवी वर्मा भी अंधकारमय वातावरण प्रिय के आगमन के लिए उपयुक्त मानती है । वर्माजी भी अंधकारपूर्ण वातावरण में ही प्रिया के आगमन की प्रतीक्षा करते हैं । अन्त में प्रियतमा से उसका मिलन हुआ । कवि इस मिलन को जीवन का अन्त मानते हैं -

"मैं तुमसे मिल गया प्रिये !
यह है जीवन का अन्त,
इसी मिलन का गीत कोकिले !
गा जीवन - पर्यन्त ।"[2]

कवि कोकिल से यह आशा प्रकट करते हैं कि वह इस मिलन का गीत जीवन पर्यंत गायें । सुमन मधुप को अपने पास लेकर इसका संवाद दें और कलियाँ इसी मिलन की याद लेकर जागें ।

राष्ट्रीय भावना

डॉ. वर्मा की रचनाओं में राष्ट्रीय भावना की अभिव्यक्ति प्रचुर मात्रा में हुई है । हम देख चुके हैं कि वर्माजी की काव्ययात्रा प्रभातफेरी के लिए आवश्यक गीतों की रचना से प्रारंभ हुई है । स्वयं वर्माजी ने डॉ. चन्द्रिका प्रसाद शर्मा के साथ हुई बात-चीत में यह स्पष्ट किया है कि उनके काव्य का अंकुर राष्ट्रीयता की धरती में प्रस्फुटित हुआ है ।[3] कवियों ने राष्ट्रीय भावना की अभिव्यक्ति भारत वन्दना तथा प्रशस्ति,

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 254.
2. वही - पृ: 70.
3. आजकल - नवम्बर 1990 - पृ: 5.

अतीत का गौरव गान, वर्तमान काल की दुर्दशा एवं उद्‌बोधन आदि रूपों में की है । अपने देश की वन्दना करते हुए वर्माजी ने यह भाव प्रकट किया है कि वे अपनी कविता द्वारा ग्राम देवता की आरती उतार लेंगे ।[1] "देश-सेवा" नामक कविता में भारत के प्रति उनका प्रेम और कर्तव्य भावना का अभिव्यंजन हुआ है । इस कविता का आशय यह है कि जिस भारत देश की धूल उनके शरीर में लगी है उस भारत देश को वे कैसे भूल सकते हैं' इस देश की सेवा करना ही उनका लक्ष्य है । देश की रक्षा के लिए मरने को भी वे तैयार हैं । कवि ने अपनी ओजस्विनी वाणी द्वारा देश के नवयुवकों को शत्रु के विरुद्ध शस्त्र उठा लेने का आह्वान किया है ।

वर्माजी ने "वीर हमीर" और "चितौड़ की चिता" खण्डकाव्यों के माध्यम से देश के उन महान् नेताओं की ओर संकेत किया है जिन्होंने अपने देश की रक्षा केलिए प्राणोत्सर्ग किया है । इन रचनाओं के माध्यम से नवयुवकों में देशप्रेम को जागरित करने का प्रयास किया गया है । देश के महान् नेता जवाहरलाल नेहरू का प्रणाम किया है और एक स्थान पर उनके प्रति श्रद्धांजलि भी अर्पित की है । सन् 1964 ई. में रचित "हिमालय से" शीर्षक कविता में वर्माजी ने शान्ति-दूत भारत को युद्ध व्रत में लीन भारत के रूप में चित्रित किया है । हिम-शृंगों से अधिक बल सेनाओं में पाया है । जो हिमालय विषयक परम्परागत धारणाओं से भिन्न है । "आकाश गंगा" में संकलित "14 अगस्त 1947 की रात्रि में ..."[2] शीर्षक रचना में उन्होंने शिवाजी और महारानी लक्ष्मी बाई जैसे महान् देश प्रेमियों की ओर इशारा किया है जिन्होंने देशरक्षा केलिए प्राणोत्सर्ग किया है । इसमें कवि ने हिम शृंग से यह अनुरोध किया है कि रानी से यह कहना कि जिस देश की पवित्र बलि-वेदी पर उसने रक्त का अर्घ्य दिया है उस रक्त से सींच-सींच कर हमने स्वतन्त्रता के बीज में छिपे हुए अंकुर को उगा लिए हैं । वे अपने देश को बापू की पवित्र साधना का पुण्य क्षेत्र मानते हैं और इस देश की पवित्र धूल को अपने शीश फूल मानते हैं ।

---

1. आज के लोकप्रिय हिन्दी कवि रामकुमार वर्मा - डॉ. राधेकृष्ण श्रीवास्तव - पृ: 101
2. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 356.

राष्ट्रीय भावना की अभिव्यक्ति का अन्य माध्यम है वर्तमान दुर्दशा का वर्णन । नारी दशा और अस्पृश्यता के संबन्ध में वर्माजी ने अपनी काव्य रचनाओं में वर्णन किया है । "टूटी कली"[1] के माध्यम से कवि ने नारी की दीनस्थिति का चित्रण किया है । गाँधीजी द्वारा चलाये गये अछूतोद्धार आन्दोलन से प्रभावित होकर वर्माजी ने "एकलव्य" की रचना की । एकलव्य के "आमुख" में वर्माजी ने लिखा है - "मेरे लिए यह कम संतोष की बात नहीं है कि मेरे शैशव के संस्कारों में अंकुरित और बापू के अछूतोद्धार में पल्लवित यह कथा दस वर्षों की साधना के बाद आज की युगवाणी में प्रस्फुटित हो रही है ।"[2] "अछूत" नामक एक अन्य कविता लिखी है जिसमें वर्माजी ने भेद-भाव हटाकर उन्हें गले लगाने का आह्वान किया है । "संत रैदास" नामक उनके खण्डकाव्य में भी यही भाव व्यक्त हुआ है ।[3] इस प्रकार वर्माजी की रचनाओं में राष्ट्रीयता के विभिन्न रूप देख सकते हैं । स्वयं वर्माजी के शब्दों में - "मैं ने अपने काव्य में राष्ट्रीय चेतना और राष्ट्रीय अस्मिता के स्वरों को गुंजायमान करने का प्रयास किया है ।"[4]

निष्कर्ष

वर्माजी के भावजगत् के विभिन्न पक्षोंपर किये गये अध्ययन से हम कुछ महत्वपूर्ण निष्कर्षों पर पहुँच सकते हैं । इनके सौन्दर्य चित्रण में प्रकृति और नारी सौन्दर्य का वर्णन मिलता है । नारी सौन्दर्य चित्रण अत्यन्त परिपक्व है । इसमें नारी के मांसल सौन्दर्य का चित्रण नहीं के बराबर है । वर्माजी की प्रेयसी भावना का रूप संयमित है ।

---

1. आज के लोक प्रिय हिन्दी कवि रामकुमार वर्मा - डॉ. राधेकृष्ण श्रीवास्तव - पृ: 5
2. एकलव्य - "आमुख" - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 3.
3. संत रैदास - "प्रस्तावना" - वही - पृ: 3.
4. आजकल - नवम्बर 1990 - पृ: 6.

उनकी मानवतावादी विचारधारा की अभिव्यक्ति प्रमुख रूप से जातिव्यवस्था के प्रति अपने आक्रोश के रूप में हुई है । परमतत्व, जीव, जीवन-मृत्यु, सुख-दुःख जैसे तत्वों के संबन्ध में उन्होंने अपने दार्शनिक विचार प्रकट किए हैं । उनकी कुछ रचनाओं में बौद्धदर्शन का प्रभाव देख सकते हैं । भारतीय संस्कृति की विशेषताएँ उनके प्रबंधकाव्यों में उपलब्ध है । गाँधीवादी विचारधारा का प्रभाव भी इनकी रचनाओं में दृष्टिगोचर होता है । वर्माजी की कविताओं में जिस रहस्यवादी विचारधारा की अभिव्यक्ति हुई है वह छायावाद की एक भावगत विशेषता है । वर्माजी ने रहस्यवाद में प्रेम को महत्वपूर्ण स्थान दिया है ।

अध्याय - छः

रामकुमार वर्मा के काव्य का कलापक्ष

प्रस्तुत अध्याय में रामकुमार वर्माजी के काव्य के कलापक्ष या शिल्प विधान पर विचार किया गया है । रचना विधान को शिल्प विधान कहा जाता है । काव्य सौन्दर्य की वृद्धि करने में शिल्प का स्थान कम महत्वपूर्ण नहीं है । शिल्प के माध्यम से रचनाकार की अमूर्त अनुभूति मूर्तता प्राप्त करती है । इस अध्याय में डॉ. वर्मा के काव्यकृतियों की भाषा शैली, रूप विधान, अलंकार योजना, बिंब और प्रतीक विधान पर विचार किया गया है ।

भाषा शैली

भाषा सरल एवं सशक्त माध्यम है जिसके द्वारा कवि अपने विचारों तथा भावों का अभिव्यंजन करते हैं । डॉ. वर्मा की काव्यरचनाओं में कोमलता, मसृणता, लयात्मकता, शुद्धता, चित्रात्मकता आदि भाषा की विशेषताएँ पायी जाती हैं । वर्माजी ने मुख्य रूप से खड़ीबोली को ही अपनी काव्य भाषा बनाई । लेकिन उनकी प्रारंभिक रचनाओं में व्रजभाषा की छाप है । "अँखियान में"[1] जो समस्यापूर्ति केलिए लिखी गई है उसमें व्रजभाषा की छाप है । "संत-रैदास" खण्डकाव्य में कुछ व्रजभाषा शब्दों का प्रयोग किया गया है । उदाहरण के लिए "चौबारे", "चिकारा", "पै" आदि जिसका अर्थ है क्रमशः खुली बैठक, एक बाजा और पर । "वीर हमीर", "कुल ललना" जैसी प्रारंभिक रचनाओं में भाषा के लालित्य या सौकुमार्य की कमी है -

---

1. आज के लोकप्रिय हिन्दी कवि रामकुमार वर्मा - सं. राधेकृष्ण श्रीवास्तव - पृ: 49.

"चन्द्रिका यदि चन्द्रमा को छोड़ दे तो छोड़ दे ।
मीन जल से नेह-नाता तोड़ दे तो तोड़ दे ।।
पर वचन मंगोल को जो है दिया मैं ने अभी ।
झूठ हो सकता नहीं वह वचन के बल से कभी ।।"[1]

उपर्युक्त पंक्तियों में एक प्रकार की नीरसता ही अनुभूत होती है । ये पंक्तियाँ पाठक के मन को भाव विभोर करने में असफल है । बाद की रचनाओं में परिष्कृत, प्रांजल और कोमलकान्त पदावलियों का प्रयोग हुआ है -

"अवनी-तल के परम मनोहर
ए नव शोभाशाली इन्दु !
नीरव, शून्य भावनावाली
रजनी के आँसू के बिन्दु !"[2]

छायावादी काव्य भाषा को बंगला भाषा ने प्रभावित किया है । बंगला भाषा का प्रभाव वर्माजी की भाषा शैली पर देख सकते हैं । इस पर आगे विश्लेषण करेंगे । "रूपराशि" की अनेक कविताओं में वर्माजी ने नारी को "प्रेयसी" संबोधित किया है जिस पर रवीन्द्र नाथ का प्रभाव है ।[3] "रवीन्द्रनाथ में नारी के प्रति अद्वितीय अनुराग था । उन्होंने उसको अनेक रूपों में देखा था एवं विभिन्न संबोधनों से पुकारा था . रवीन्द्रनाथ के इन्हीं संबोधनों से प्रभावित हो हिन्दी के कवियों ने नारी को प्रेयसी, रूपसी, माँ, सहचरी देवी, कल्याणी आदि संबोधनों से सम्बोधित किया है ।"[4] 'अंजलि' में संकलित कुछ गीतों के शीर्षक भी रवीन्द्र के अनुकरण पर किये गए हैं जैसे परिचय, अनन्तस्मृति, संगीत, सुनहले स्वप्न ।

---

1. वीर हमीर - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 22.
2.. गजरे तारों वाले - अंजलि - वही - पृ: 19.
3. वही - रूपराशि - वही - पृ: 48, 52, 59, 60, 61, 63, 66.
4. आधुनिक हिन्दी कविता और रवीन्द्र - डॉ. रामेश्वर दयाल मिश्र - पृ: 190-91.

वर्माजी ने महाकाव्यों में संवाद शैली को अपनाया है जिससे काव्य सौन्दर्य में वृद्धि हुई है । इस शैली को अपनाने के कारण नाटकीयता का समावेश हुआ है । "एकलव्य" महाकाव्य का प्रारंभ ही एकलव्य और नागदन्त के संवाद से शुरू हुआ है । "एकलव्य" के "आत्मनिवेदन" सर्ग में संवाद शैली की योजना हुई है -

"कौन ?"
"गुरुदेव ! जय ! एकलव्य शिष्य हूँ ।"
"एकलव्य, ऐसा नहीं नाम किसी शिष्य का ।"
"वर्ण हैं अलग, किन्तु जब मिल जाते हैं,
सधि में धवल और एक रूप पाते हैं ।"
"एकलव्य शिष्य मेरा ? "[1]

प्रस्तुत महाकाव्य में एकाध स्थान पर इस शैली को अपनाया है ।[2] उनके अन्य महाकाव्य "उत्तरायण" और ओ अहल्या" में भी यह प्रवृत्ति लक्षित होती है ।

उनकी काव्य-भाषा की विशेषता है उसकी कोमलता, मसृणता लयात्मकता, लाक्षणिकता, चित्रात्मकता आदि । उनकी प्रायः सारी रचनायें भाषा की इन विशेषताओं से युक्त है । उदाहरण के लिए "अंजलि" की निम्नलिखित पंक्तियों में भाषा की कोमलता, मसृणता और चित्रात्मकता का दर्शन कर सकते हैं -

"प्रकृति देवी के ललित लाड़ले !
चन्द्रदेव के सुत भावुक ।
अथवा उषा देवी-दर्शन को
अवनी के लोचन उत्सुक

। ससि के

---

1. एकलव्य - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृः 118.
2. वही - पृः 131, 226, 227.

रवि किरणों में उड़ने वाले
ए छोटे से विशद विमान ।"[1]

"चन्द्रकिरण" में संकलित "एक प्रश्न" कविता में ऐसे परुष शब्दों का प्रयोग किया है जो वर्षा की भीषणता को व्यंजित करने में समर्थ है -

"घटा घुमड़ कर आई ।
घोर घनी घहरी घिर कर भी
पूरी बरस न पाई ।"[2]

इन पंक्तियों से वर्षा की तीक्ष्णता का चित्र स्पष्ट हुआ है । वर्माजी ने भाव की तीक्ष्णता को प्रकट करते वक्त ऐसे कठोर शब्दों का प्रयोग किया है । इसके उदाहरण उनकी रचनाओं में ढूँढ़ा जा सकता है । "उत्तरायण" में रत्ना का व्यंग्य तुलसी के हृदय में काँटे के समान चुभ जाते हैं । उनका मन चंचल हो जाता है -

"झन् झन् झंझा झकझोर उठा, झँप गये नेत्र
भू - कम्प वेग से नष्ट-भ्रष्ट था प्रणय क्षेत्र ।
घनघोर घटाओं से घहराया अशनि-पात,
बलि यज्ञ हेतु घुस आये हो आकुलि-किलात ।"[3]

दृढ़ता, अखण्डता जैसे भावों की अभिव्यक्ति केलिए उन्होंने परुष शब्दों को ही ढूँढ लिया है । "आकाश गंगा" की 'चट्टान' शीर्षक गीत में भाषा की कोमलता और मसृणता का अभाव है ।

---

1. गजरे तारों वाले - अंजलि - डॉ॰ रामकुमार वर्मा - पृ: 19.
पृ॰ 265.
3. उत्तरायण - वही - पृ: 31.

उनके प्रबंध काव्य "उत्तरायण", "ओ अहल्या" और "सन्त रैदास" की निजी विशेषताएँ हैं । उन्होंने जिस पात्र को अपनी रचना में नायकत्व प्रदान किया है स्वयं उस पात्र के कथन को अपनी रचनाओं में लिया गया है । उदाहरण केलिए "उत्तरायण" में "तुलसीदास" जो इसका नायक है स्वयं उनके कथन को उद्धृत किया है -

"संसार अपार के पार को
सुगम रूप नौका लयौ,
कलि कुटिल जीव निस्तार हित,
वाल्मीकि तुलसी भयौ ।"[1]

उसी प्रकार "ओ अहल्या" महाकाव्य में गौतम द्वारा इन्द्र को शाप देने का जो प्रसंग है वहाँ वर्माजी ने मूल रामायण के उद्धरण को लेकर उस प्रसंग को कुछ अधिक भावोत्पादक बना दिया है -

"मम रूपं समास्थाय कृतवानसि दुर्मते ।
अकर्तव्यमिदं तस्मात् विफलस्त्वं भविष्यसि ।"[2]

वर्माजी ने "संत रैदास" खण्डकाव्य में रैदास के भक्त और कवि व्यक्तित्व को उभारने केलिए स्वयं रैदास द्वारा लिखी गई पंक्तियाँ जोड दी है -

"अब कैसे छूटे राम, नाम रटलगी ।
प्रभु जी, तुम चन्दन हम पानी,
जाकी अँग अँग बास समानी ।"[3]

---

1. उत्तरायण - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 112.
2. श्रीमद् वाल्मीकी रामायण - बालकाण्डे - पृ: 87.
3. संत रैदास - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 30.

उनकी एक अन्य विशेषता है अपनी रचनाओं की नामावली प्रस्तुत करना । "एकलव्य" महाकाव्य के "धारणा सर्ग" में इस प्रवृत्ति की योजना हुई है ।[1]

संस्कृत का गंभीर ज्ञान रखने वाले वर्माजी की रचनाओं में तत्सम शब्दों का प्रयोग प्रचुर मात्रा में देख सकते हैं । उदाहरण के लिए अर्घ्य, रजित, आरती, अंगार, नाराच, प्रस्तर, रजत, नियति, घन, तड़ित आदि । वर्माजी ने "एकलव्य" महाकाव्य में पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग किया है । प्रस्तुत महाकाव्य के "साधना" सर्ग में ऐसे शब्दों के उदाहरण मिल सकते हैं । जैसे - आकर्षण, विकर्षण, पर्याकर्षण, अनुकर्षण, मंडलीकरण पूरण, स्थारण, आसन्नपात, दूरपात, पृष्ठपात । इसके अतिरिक्त अन्य उदाहरण भी इस महाकाव्य में ढूँढ़ा जा सकता है । अप्रचलित संस्कृत तत्सम शब्दों का प्रयोग भी वर्माजी ने किया है जैसे अश्रोत्रिय, श्रोत्रिय, प्रांशु, धासार आदि । उनके महाकाव्य "एकलव्य" और "उत्तरायण" में लोकोक्ति और मुहावरों का प्रयोग यत्रतत्र मिल सकते हैं ।

रूप विधान

वर्माजी की रचनाओं में सांस्कृतिक, भावात्मक और प्राकृतिक तीनों प्रकार के रूप विधान की योजना हुई है । सांस्कृतिक रूप विधान के उदाहरण "एकलव्य", "ओ अहल्या" और "संत रैदास" में मिल सकते हैं । भारत की प्राचीन संस्कृति तथा आचार विचार पर आधारित रूप विधानों को सांस्कृतिक रूप विधान के अन्तर्गत लिया जाता है । निम्नलिखित पंक्तियों में आचार्य द्रोण द्वारा छोड़े गये बाणों का चित्र उपस्थित किया है -

"दुंदुभि से घोष किया, वीर द्रोणाचार्य ने
धनुष उठा के युग लक्ष्य युगबाणों से
वेध दिए साथ ही, वे बाण ऐसे थे चले,
मानो दो चरण थे वे मंगलाचरण के ।"[2]

---

1. एकलव्य - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 137-138.
2. वही - पृ: 102.

भारतीय संस्कृति के अनुसार कवि अपने काव्य ग्रंथ के प्रारंभ में इष्ट देव या देवी की वन्दना करते हैं जो मंगलाचरण के नाम से विख्यात है। द्रोण द्वारा छोड़े गये बाण ऐसा लगता है मानो वे मंगलाचरण के दो चरण थे। उत्प्रेक्षालंकार के माध्यम से भारतीय संस्कृति की ओर इशारा किया है।

प्रातकाल में लाल किरणों से युक्त सूरज का चित्रण करने के लिए "आरती" जैसा सांस्कृतिक उपकरण लिया गया है -

"रवि कोर उठी प्राची में जैसे ॐ रूप,
किरणें फैलीं जैसे कि आरती गयी घूम।"[1]

इधर प्राकृतिक धरातल पर सांस्कृतिक उपादान प्रस्तुत किया है। यहाँ सूरज की लालिमा की तुलना आरती के रंग साम्य पर किया है। आरती उतारना भारतीय संस्कृति की विशेषता है।

अन्यत्र प्रजापति के स्वागत करने के लिए निकले अहल्या का चित्रण करते समय आनन्द के कारण उनकी आँखों में भरे आँसू को अर्घ्य का पानी कहकर सांस्कृतिक चित्र उपस्थित किया है।[2] रैदास और लोना के स्वागत करने के लिए उपस्थित बालाओं का चित्र सांस्कृतिक रूप विधान के अन्तर्गत आता है।[3]

भावात्मक रूप चित्रण के अन्तर्गत आशा-निराशा सुख-दुःख, वेदना, नश्वरता आदि भावों का चित्रण होता है। कवि के निराशात्म मन में क्षण भर के लिए आशा का उदय होता है। इस भाव का चित्र वे प्रकृति के सहारे खींचते हैं। जिस प्रकार बादल में क्षण भर के लिए बिजली चमकती है उसी प्रकार कवि के निराशा जीवन में पल भर के लिए आशा का संचार होता है -

------

1. ओ अहल्या - डा. रामकुमार वर्मा - पृ: 73.
2. वही - पृ: 52.
3. सन्त रैदास - वही - पृ: 89.

"क्षण भर हँसता है बादल,
पाकर पश्चिम का प्यार
फिर सतम निराशा ही में
खोता उसका उद्गार ।"[1]

अन्यत्र असहाय दुःखी व्यक्ति की दैन्यता का चित्र उपलब्ध होता है । कवि का दुःख देखकर प्रकृति भी संवेदना नहीं प्रकट करती -

"मेरे दुःख में प्रकृति न देती
क्षण भर मेरा साथ ,
उठा शून्य में रह जाता है,
मेरा भिक्षुक-हाथ ,"[2]

अंतिम पंक्तियों से दुःख की पराकाष्ठा और असहायता का चित्र स्पष्ट हुआ है । जीवन की क्षण भंगुरता का भाव व्यंजित करने केलिए वृद्धा के सिर के दो चार श्याम केश को उपमान के रूप में लिया गया है ।

"जीवन के दिन क्या हैं अनेक'
वृद्धा के सिर के श्याम केश ।"[3]

जिस प्रकार वृद्धा के सिर में बहुत कम श्याम केश मिलते हैं उसी प्रकार जीवन में बहुत कम दिन ही बाकी है । "चित्ररेखा" में संकलित एक गीत में भी भावात्मक रूप विधान की योजना हुई है जिसमें जीवन की क्षणिकता का भाव ही व्यंजित हुआ है । इसके अतिरिक्त अन्य कई उदाहरण वर्माजी की रचनाओं में उपलब्ध हैं ।

[illegible] - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 60.

2. वही - पृ: 81.

3. वही - पृ: 92.

प्रकृति-रूप विधान करते समय प्रकृति का मानवीकृत रूप ही अंकित हुआ है। इसमें मानवीय कार्य व्यापार से युक्त प्रकृति का चित्र उपस्थित हुआ है। उदाहरण केलिए "एकलव्य" की निम्नलिखित पंक्तियाँ ली जा सकती हैं -

"एकलव्य देखता है, प्रकृति किरीटिनी,
पुष्प छींट वाली कसे हरी पत्र-कंचुकी
नीलाम्बर धार कर वायु का प्रतोद ले,
सृष्टि रथ आगे बढ़ा, आ रही है सुन्दरी ।"[1]

इन पंक्तियों में प्रकृति को सुन्दरी नारी के रूप में चित्रित किया है जो पुष्पों से खचित हरे रंग की पत्र रूपी कंचुकी कसकर नीला वस्त्र पहनकर वायु का प्रतोद लेते हुए सृष्टि रथ को आगे बढ़ाकर आ रही है। इसमें रूपक अलंकार की योजना द्वारा प्रकृति का नारी रूप अंकित किया है। जो रूप साम्य पर आधारित है। अन्यत्र कवि अन्धकार पूर्ण पूर्व दिशा देखकर यह कल्पना करता है कि पूर्व दिशा रूपी प्रकाश की माता अपने मृत शिशु पर मस्तक झुकाकर रहती है और अपने घन-केशान्धकार को बिखराती दुःखित रहती है।[2] कवि ने जुही को एक प्रेयसी के रूप में चित्रित किया है जो लता कुंज के द्वार में अपने प्रियतम समीर को झांक रही है। "अंजलि" में संकलित "गजरे तारों वाले" गीत में रजनी को बाला के रूप में चित्रित किया है जो सुषुप्त संसार के बीच तारों वाले गजरे बेचने जा रही है।

इसके अतिरिक्त सौन्दर्य चित्रण और अन्य प्रसंगों का वर्णन भी चित्रात्मक बन गया है। इस प्रकार का उदाहरण उनकी रचनाओं में अनेक हैं। "उत्तरायण" में रत्ना का सौन्दर्य चित्रण करते समय उनकी अभिव्यंजना शैली इतनी सुन्दर बन गयी है कि रत्ना का चित्र ही पाठक के सम्मुख उभर आया है -

----

1. एकलव्य - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 201.
2. गजरे तारों वाले - वही - पृ: 211.

"वह लज्जा से कुछ नमित, शुभ्र सुकुमार गात,
मुस्कान मधुर जैसे उगती है किरण प्रात ।"
"नव यौवन से अभिषिक्त, नवल तन इस प्रकार,
जैसे ज्योतित हो ज्योत्सना से जल की फुहार ।।"[1]

"ओ अहल्या" में गौतम और अहल्या के तप का वर्णन है । इस प्रसंग को वर्माजी ने शब्दों के माध्यम से चित्रात्मक बना दिया है ।[2] एकलव्य के परिचय सर्ग में हस्तिनापुर की राज सभा का जो वर्णन है वह पाठक के मन में राजसभा का चित्र खींचने में सफल हुआ है ।[3] उसी प्रकार द्रुपद द्वारा अपमानित द्रोण और पत्नी की दशा भी पाठक के मन में चित्र सा उभर आता है ।[4]

अलंकार योजना

वर्माजी की रचनाओं में शब्दालंकार और अर्थालंकार दोनों का प्रयोग समुचित रूप में हुआ है । आगे उनकी रचनाओं में प्रयुक्त अलंकारों का विश्लेषण करेंगे ।

अनुप्रास

अनुप्रास अलंकार की योजना से काव्य में नादात्मकता की वृद्धि होती है । वर्माजी द्वारा प्रयुक्त अनुप्रास अलंकारों के कुछ उदाहरण निम्न लिखित हैं -

"झन्-झन् झंझा झकझोर उठा, झँप गये नेत्र"[5]
"अविचल चल, जल का छल छल"[6]
"वासना-विष से भरा मारा विषम नाराच"[7]

---

1. उत्तरायण - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 29.
2. ओ अहल्या - वही - पृ: 74.
3. एकलव्य - वही - पृ: 28.
4. वही - पृ: 50.
5. उत्तरायण - वही - पृ: 31.
6. गजरे तारों वाले - वही - पृ: 9.
7. बालिवध - वही - पृ: 27.

इन पंक्तियों में "झ" "ल" "व" आदि वर्णों की आवृत्ति द्वारा अनुप्रास अलंकार की योजना हुई है । इनकी रचनाओं में अनुप्रास अलंकार की योजना प्रचुर मात्रा में हुई है । विशेषकर अन्त्यानुप्रास की योजना इनकी रचनाओं में देख सकते हैं ।

उपमा

"ओ अहल्या" के "तप" सर्ग में उपमा अलंकार की योजना हुई है -

"किरणें फैली जैसे कि आरती गयी घूम ।"[1]

लाल रंग से युक्त सूरज की किरणों की तुलना आरती से की है । यहाँ उपमा अलंकार की योजना रंग साम्य के आधार पर हुई है । उपमा अलंकार की योजना उनकी रचनाओं में अनेक स्थानों पर उपलब्ध हैं । कुछ और उदाहरण देखिए - "एकलव्य" महाकाव्य में श्वेत श्मश्रु के बीच दिखाई पडनेवाले द्रोण की ओंठ की तुलना संध्याकाल में शुभ्र अभ्रों की ओट में दिखाई पडनेवाले दुर्ग के कलश से करके वर्माजी ने उपमा अलंकार की योजना की है ।[2] अन्यत्र "उत्तरायण" महाकाव्य में रत्ना की मुसकान का चित्रण जहाँ वर्माजी ने किया है वहाँ भी उपमा अलंकार की योजना हुई है -

"मुस्कान मधुर जैसे उगती है किरण प्रात"[3]

यहाँ रत्ना की मधुर मुस्कान की उपमा प्रात:कालीन किरण से की है ।

उत्प्रेक्षा

उपमा अलंकार के समान उनकी रचनाओं में अधिक दीख पडने वाले अन्य अलंकार है उत्प्रेक्षा । वर्माजी द्वारा प्रयुक्त उत्प्रेक्षा अलंकार का एक उदाहरण देखिए -

---

1. ओ अहल्या - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 73.
2. एकलव्य - वही - पृ: 12.
3. उत्तरायण - वही - पृ: 29.

"चारों ओर लता-पुष्पों के
कितने मण्डप छाये थे ।
मानो स्वर्गपुरी के भूषित
भवन भूमि पर आये थे ।"[1]

यहाँ लता-पुष्पों से अलंकृत मण्डप देखकर यह शंका होती है कि मानो स्वर्गपुरी के अलंकृत भवन भूमि पर आये हो । उत्प्रेक्षा अलंकार के अन्य उदाहरण "एकलव्य"[2] और "वीर हमीर"[3] में मिलते हैं ।

रूपक

वर्माजी द्वारा प्रयुक्त रूपक अलंकार की योजना "ओ अहल्या" में द्रष्टव्य है

"कमल - कोष की कसी कंचुकी
काम-कला की कविता थी ।
और किंकणी सोनजुही,
कलिकाओं से संवलिता थी ।।"[4]

उपर्युक्त पंक्तियों में परिणय के वक्त सुसज्जित अहल्या का चित्रण है जिसमें कवि ने रूपक अलंकार द्वारा उसका सौन्दर्य चित्रण किया है । "एकलव्य" महाकाव्य के "साधना" सर्ग में रूपक अलंकार की योजना है जहाँ प्रकृति का मानवीकरण किया है ।[5] तद्रूप रूपक की योजना भी "ओ अहल्या" में उपलब्ध है जहाँ पूर्वदिशा से आनेवाले प्रजापति का चित्रण है । प्रजापति को पूर्व दिशा में उदित दूसरे सूरज से तुलना की है ।[6]

---

1. ओ अहल्या - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 60.
2. एकलव्य - वही - पृ: 33, 47.
3. वीर हमीर - वही - पृ: 40.
4. ओ अहल्या - वही - पृ: 63.
5. एकलव्य - वही - पृ: 201.
6. ओ अहल्या - वही - पृ: 51.

मालोपमा

"एकलव्य" के दर्शन सर्ग में इसका उदाहरण मिलता है । आचार्य द्रोण द्वारा वीटिका निकालने की घटना का वर्णन है । सींकों पर दिव्य मंत्र फूँकने की उपमा कई उपमानों से की हैं -

"फिर नासिकाग्र पर दृष्टि स्थिर करके
सींकों पर अग्नि-गर्भित दिव्य मंत्र फूंका
जैसे सिन्धु-शीश पर झंझा की झकोर हो
जैसे बादलों के शीश दामिनी की द्युति हो
जैसे वीर-शीश पर पारावत-पंख हो
जैसे व्योम-भाल पर सूर्य का मुकुट हो ।"[1]

इसी महाकाव्य के प्रदर्शन सर्ग में अर्जुन के शस्त्र प्रदर्शन का चित्रण करते समय भौम अस्त्र हाथ में लिये भूमि में प्रविष्ट अर्जुन की तुलना भूमि के गर्भ में गिरे प्रपात से और भूमि में विलीन इन्द्र-वज्र से करके मालोपमा की योजना की हैं । इनकी रचनाओं में मालोपमा के अन्य उदाहरण भी मिलते हैं ।[2]

संदेह अलंकार

वर्माजी की रचनाओं में संदेह अलंकार के उदाहरण उपलब्ध है । "एकलव्य" महाकाव्य के प्रदर्शन सर्ग से उद्धृत निम्न लिखित पंक्तियों में संदेह अलंकार की योजना हुई है -

"जन-रव नेत्र में समाया बन कौतुक,
अर्जुन पर दृष्टि हुई केन्द्रित सब की ।

---

1. एकलव्य - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 14.
2. गजरे तारों वाले - वही - पृ: 312, 354.

जैसे स्वाति-बिन्दु पर चातकों की दृष्टि हो,
या कि एक राग में स्वरों का सरगम हो ।"[1]

अर्जुन पर केन्द्रित सबकी दृष्टि देखकर यह सन्देह हो जाता है कि स्वाति बिन्दु पर चातकों की दृष्टि समा गई हो या एक ही राग में स्वरों का सरगम विलीन हो गया हो । "एकलव्य"[2] और "उत्तरायण"[3] महाकाव्य में संदेह अलंकार के अन्य अनेक उदाहरण मिलते हैं ।

<u>विरोधाभास</u>

इनकी रचनाओं में प्रयुक्त अन्य अलंकार है विरोधाभास । निम्नलिखित पंक्तियाँ इसका उदाहरण है -

"नश्वरता भू पर भिक्षुक है,
पर नभ में वह रानी है ।"[4]

यहाँ नश्वरता को भिक्षुक और रानी भी कहा गया है । इसमें एक ही हो सकता है दोनों नहीं । कवि दुःख को सुमधर कहा है । साधारण रूप से दुख को कड़वीला मानता है मधुर नहीं ।[5] गीत में एक स्थान पर कवि ने यह प्रयोग किया है कि आकाश तक झुक गया है । पृथ्वी तक झुक जाता है, आकाश तक झुक नहीं जाता ।[6]

---

1. एकलव्य - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 109.
2. वही - पृ: 110, 248.
3. उत्तरायण - वही - पृ: 86.
4. गजरे तारों वाले - वही - पृ: 222.
5. वही - पृ: 223.
6. वही - पृ: 320.

पुनरुक्ति

कवि भावों को अधिक प्रभावशाली बनाने केलिए पुनरुक्ति अलंकार की योजना करते हैं । "यह है असत्य" इन शब्दों की तिहरी आवृत्ति द्वारा वर्माजी ने यह भाव व्यक्त किया है कि सीता के सतीत्व पर राम का सन्देह असत्य है -

"यह है असत्य ! यह है असत्य !
यह है असत्य ! हे सौम्य संत ।"[1]

"वीर हमीर" खण्डकाव्य में भी एक स्थान पर इस अलंकार की योजना हुई है जहाँ कवि ने वीर हमीर के प्रति अपनी श्रद्धा प्रकट की है ।[2]

मानवीकरण

मानवीकरण अलंकार की योजना वर्माजी की रचनाओं में प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं । "एकलव्य" महाकाव्य में निद्रा को एक माता के रूप में चित्रित किया है जो संसार रूपी शिशु को अपने स्वप्न सजे अंक में सुलाकर शान्त और मौन भाव से अपने नेत्र रूपी तारकों की दृष्टि से निहारती है -

"आधी रात बीती । निद्रा जैसे एक माता है,
जग-शिशु को सुलाए स्वप्न-सजे अंक में ।
उसको निहारती है, शान्त मौन भाव से,
अपने सहस्र नेत्र-तारकों की दृष्टि से ।"[3]

---

1. उत्तरायण - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 113.
2. वीर हमीर - वही - पृ: 80.
3. एकलव्य - वही - पृ: 173.

यहाँ निद्रा को एक माता के रूप में मानवीकृत करने में कवि सफल हुए हैं । "अंजलि" में संकलित ये गजरे तारों वाले "गीत में रजनी का मानवीकरण किया है । उपर्युक्त उदाहरण के अतिरिक्त अन्य अनेक स्थानों पर मानवीकरण अलंकार उपलब्ध हैं ।

विशेषण विपर्यय

मानवीकरण अलंकार के समान वर्माजी की रचनाओं में उपलब्ध अन्य पाश्चात्य अलंकार है विशेषण विपर्यय । "आकाश गंगा" में संकलित "स्वर-लिपि" शीर्षक गीत में विशेषण विपर्यय की योजना हुई है -

"राग प्रतिध्वनि में लुटा
अवशेष बस केवल व्यथा है ,
एक मूर्छित मूर्छना में
जाग उठी प्रिय की कथा है"[1]

यहाँ कवि ने वियोगिनी की व्यथा को प्रस्तुत किया है । वियोगिनी ही वस्तुतः मूर्छित होती है । उसके अगाध दुःख की मूर्छना को मूर्छित कहकर, व्यथा का मानवीकरण किया गया है । एक अन्य उदाहरण देखिए -

"इस मधुर संगीत में स्वर-लिपि विरह के गान की है ।
एक अनजानी कहानी रसमयी पहिचान की है ।।"[2]

इस मधुर संगीत में विरह के गान की स्वर लिपि है तथा एक अनजानी कहानी की रसमयी पहिचान है । स्वर-लिपि को अनजानी कहानी की रसमयी पहिचान के रूप में चित्रित किया गया है । अनजानी कहानी में स्वरलिपि रसमयी होती है । कहानी की रसमयता को पहिचान के विशेषण के रूप में विपर्यय कर दिया गया है ।

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 329.
2. वही ।

बिंब विधान

वर्माजी की रचनाओं में बिंब की सम्यक योजना हुई है। पहले उनकी रचनाओं में प्रयुक्त प्राकृतिक बिंबों का विवेचन करेंगे। इसके अन्तर्गत मानवीय कार्य-व्यापार से युक्त प्रकृति का बिंब अंकित होता है -

"उषा तोड़ तारों के फूल,
खेल रही है बादल में।"[1]

इसमें "उषा" एक बालिका के रूप में बिंबित हुई है, नक्षत्रों के फूल तोड़कर बादल में खेल रही है। एक अन्य कविता में "घटा" एक व्यथित व्यक्ति के रूप में बिंबित हुई है जो रोते हुए अपनी करुण कथा बताती है -

"आज घटा ने रो रोकर यह
दारुण कथा सुनाई।"[2]

पूर्व दिशा में छाये हुए काले बादल देखकर कवि कल्पना करता है कि एक माता अपने मृतशिशु पर माथा झुकाकर रहती है और उसके काले केश बिखरे हुए हैं। इसमें काले बादलों से आच्छन्न पूर्वदिशा एक व्यथित माता के रूप में बिंबित हुई है।[3] "एकलव्य" के साधना सर्ग में कवि ने प्रकृति का जो मानवीकरण किया है वह नीला वस्त्र पहनकर सृष्टि-रथ को आगे बढ़ाने वाली सुन्दरी का रूप बिंबित करने में सफल हुआ है।[4] इस प्रकार मानवीय कार्य व्यापार से युक्त प्राकृतिक बिंब उनकी रचनाओं में अन्यत्र उपलब्ध हैं।

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 47.
2. वही - पृ: 265.
3. वही - पृ: 211.
4. एकलव्य - वही - पृ: 201.

वर्माजी ने जिन स्थानों पर रूप विधान केलिए भारतीय सांस्कृतिक उपकरणों का सहारा लिया है वहाँ सांस्कृतिक बिंबों की अवतारणा हुई है । उन्होंने "ओ अहल्या" महाकाव्य में अहल्या का रूप चित्रण करने के लिए सांस्कृतिक बिंबों की योजना की है -

"उसने नील कमल में जैसे प्राण-प्रदीप जलाया,
चन्दन चर्चित उसे आरती जैसा रूप बनाया ।
ऋषि गौतम आश्रम से निकले करने को अगवानी
साथ अहल्या थी नेत्रों में भरे अर्घ्य का पानी ।"[1]

उपर्युक्त पंक्तियों में आँसू भरे अहल्या की आँखों की तुलना अर्घ्य केलिए आवश्यक पानी से की है । यहाँ आरती और अर्घ्य जैसा शब्द भारतीय सांस्कृतिक शब्द हैं ।

अन्यत्र प्रातःकाल में उदित सूरज का रूप चित्रण के समय भी सांस्कृतिक उपकरणों की योजना की है जो उपमा अलंकार से रूप साम्य पर आधारित होने के कारण बहुत सुन्दर बन गया है । लाल रंग से युक्त सूरज की किरणों की तुलना "आरती" से की गई है ।[2] वर्माजी ने अन्यत्र भी सांस्कृतिक बिंबों की योजना की हैं ।[3] "एकलव्य" महाकाव्य में अलंकारात्मक बिंब के उदाहरण उपलब्ध है ।[4]

काव्य बिंब के माध्यम से कवि अमूर्त भावों या विचारों को मूर्तता प्रदान करते हैं । निम्नलिखित पंक्तियों में अमूर्त वेदना को मूर्त बनाया है -

"एक वेदना विद्युत-सी
खिंच-खिंच कर चुभ जाती है ।"[5]

----

1. ओ अहल्या - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 52.
2. वही - पृ: 73.
3. एकलव्य और आधुनिक कवि-3 - क्रमशः - पृ: 102 और 13.
4. एकलव्य - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 201.
5. गजरे तारों वाले - वही - पृ: 192.

उपर्युक्त पंक्तियों में अमूर्त वेदना को विद्युत जो मूर्त है, उससे तुलना करके मूर्तिकरण किया है । जिस प्रकार काले बादल में विद्युत की रेखा खिंच जाती है उसी प्रकार कवि के दुःखी मन में वेदना चुभ जाती है । अमूर्त वेदना को मूर्त बिजली से समानता करके अमूर्त भाव वेदना का बिंब पाठक के मन में प्रस्तुत करने में कवि सफल हुआ है । इस प्रकार के उदाहरण उनकी रचनाओं में अन्यत्र भी उपलब्ध हैं ।[1]

प्रतीक विधान

डॉ. वर्मा की रचनाओं में रहस्यात्मक और प्राकृतिक क्षेत्र से गृहीत प्रतीकों का विधान देख सकते हैं । पहले वर्माजी द्वारा प्रयुक्त रहस्यात्मक प्रतीकों पर विचार करेंगे । वर्माजी ने दीपक को परमात्मा के प्रतीक रूप में गृहीत किया है । "चन्द्रकिरण"[2] नामक गीति संग्रह में संकलित गीत है "किरण-कण" । इसमें कवि ने उपयुक्त प्रतीकों का प्रयोग किया है । "एक दीपक-किरण-कण हूँ" में दीपक परमात्मा के प्रतीक रूप में और "किरण-कण" आत्मा के प्रतीक रूप में व्यंजित हुआ है । अन्यत्र घूँघट पट" को माया के प्रतीक रूप में स्वीकार किया है । घूँघट पट के कारण वे उस दिव्य सौन्दर्य का पान न कर सकते हैं अर्थात् परमात्मा का साक्षात्कार न कर सकता -

"दिव्य जीवन है छवि का पान, यही आत्मा की तृषित पुकार
एक इस पार, एक उस पार हटा दो घूँघट-पट इस बार ।"[3]

उपर्युक्त पंक्तियों में "घूँघट पट" माया का प्रतीक है । अन्य गीत में उन्होंने "भ्रमर" को आत्मा के प्रतीक रूप में ग्रहण किया है -

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 81, 208.
2. वही - पृ: 245.
3. वही - पृ: 45.

"भ्रमर ! तुम्हारा यह अभिसार
व्यंजित करता है पृथ्वी की
नश्वरता से शाश्वत प्यार ।"[1]

उपर्युक्त पंक्तियों में भ्रमर को सांसारिक आकर्षणों में भटकने वाले आत्मा के प्रतीक रूप में चित्रित किया है । "एकान्त गान" शीर्षक गीत में वर्माजी ने "पाषाण" को आध्यात्मिक मार्ग में बाधा डालनेवाले विघ्न बाधाओं के रूप में चित्रित किया है -

"लघु पाषाण के टुकड़े भी
तुमको देते हैं ठोकर ।"[2]

"पाषाण" आध्यात्मिक मार्ग में बाधा डालनेवाले सांसारिक आकर्षणों का प्रतीक है ।

<u>प्रकृति संबन्धी प्रतीक योजना</u>

वर्माजी की रचनाओं में प्रकृति क्षेत्र से गृहीत प्रतीक है । कवि ने "मधुमास" को आनन्द के प्रतीक रूप में ग्रहण किया है -

"यह तुम्हारा हास आया
इन फटे से बादलों में
कौन-सा मधुमास आया !"[3]

"फटे से बादल" कवि के दुःखी जीवन का प्रतीक है और "मधुमास" आनन्द का प्रतीक है । कवि के निराश जीवन में आनन्द का उदय हुआ है इसी भाव की अभिव्यक्ति उपर्युक्त पंक्तियों में हुई है । कवियों ने "विद्युत" को पीड़ा, वेदना एवं अशान्ति के रूप में चित्रित किया है -

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 267.
2. वही - पृ: 9.
3. वही - पृ: 191.

"मेरे वियोग के नभ में,
कितना दुःख का कालापन ।
क्या विह्वल विद्युत ही में
होंगे प्रियतम के दर्शन"[1]

उपर्युक्त पंक्तियों में विद्युत कवि की पीड़ा, वेदना एवं अशान्ति के रूप में चित्रित हुआ है । वर्माजी ने "सागर" को हृदय के प्रतीक रूप में ग्रहण किया है । उनका हृदय व्यथा से पूर्ण है । केवल दो बूँदों में सागर की थाह पहचान लेना असंभव है । उसी प्रकार केवल दो बूँदों से उनके मन की व्यथा समझ लेना मुश्किल है ।

"दो बूँदों में ही जहाँ समझ
पड़ती सागर की अगम थाह"[2]

"दो बूँद" अश्रुओं का प्रतीक है "सागर" हृदय का या मन का । "अंधकार के श्याम प्रहर" को जीवन के दुःख के प्रतीक रूप में स्वीकार किया है ।[3] "अशान्त" शीर्षक गीत में काँच के टुकडे" नक्षत्रों के प्रतीक रूप में चित्रित हुआ है -

"और काँच के टुकड़े बिखरा -
कर क्यों पथ के बीच,
भूले हुए पथिक-शशि को दुःख-
देता है नभ नीच'."[4]

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 230.
2. वही - पृ: 194.
3. वही - पृ: 49.
4. वही - पृ: 80.

यह प्रतीक अत्यन्त सुन्दर बन गया है । इसमें आसमान को नीच कहा है जो काँच के टुकडे बिखराकर पथिक शशि को दुख देता है । "पीले पत्ते" नश्वरता के प्रतीक रूप में चित्रित हुआ है । अन्य गीत में कवि ने आँसू के प्रतीक रूप में "आँखों के मोती का पानी" को स्वीकार किया है -

"उसमें होगा मेरी आँखों
के मोती का पानी ।"[1]

"आँखों के मोती" आँसू का प्रतीक है । "तरी" को जीवन के प्रतीक रूप में स्वीकार किया गया है ।[2]

निष्कर्ष

वर्माजी की प्रारंभिक रचनाओं में भाषा के सौकुमार्य की जो अपेक्षाकृत कमी है वह उनकी परवर्ती रचनाओं में नहीं है । "अंजली" से लेकर बाद की सभी रचनाएँ भाषा के सौकुमार्य से पूर्ण है । उनकी रचनाओं में रवीन्द्र शैली का प्रभाव उपलब्ध है । सांस्कृतिक, भावात्मक और प्राकृतिक तीनों प्रकार के रूप विधान की योजना की गई है । अलंकार योजना के अन्दर अर्थालंकार और शब्दालंकार के प्रायः सभी भेद उपलब्ध हैं । मानवीकरण और विशेषण विपर्यय जैसे पाश्चात्य अलंकार की योजना भी हुई है । बिंब विधान के अन्दर सांस्कृतिक, प्राकृतिक और भावात्मक बिंब के उदाहरण हैं । रहस्यात्मक और प्रकृति क्षेत्र से गृहीत प्रतीकों का प्रयोग उन्होंने किया है ।

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृः 14.
2. वही - पृः 220.

अध्याय - सात

रामकुमार वर्मा और प्रतिनिधि छायावादी कवि - तुलनात्मक विश्लेषण

किसी भी कवि की रचनाओं का मूल्यांकन करते समय उनके पूर्ववर्ती और समकालीन कवियों के साथ उनकी रचनाओं का तुलनात्मक अध्ययन करना समीचीन होगा। इसलिए प्रस्तुत अध्याय के अन्तर्गत डॉ. वर्मा के पूर्ववर्ती प्रतिनिधि कवियों के रूप में जयशंकर प्रसाद §सन् 1889 ई.§ सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला §सन् 1896 ई.§, सुमित्रा नन्दन पन्त §सन् 1900 ई.§ और महादेवी वर्मा §सन् 1907 ई.§ जैसे छायावादी चतुष्टय को लिया गया है। रामकुमार वर्माजी के समकालीन कवियों के रूप में भगवती-चरण वर्मा §सन् 1903 ई.§ और नरेन्द्र शर्मा §सन् 1913 ई.§ जैसे उत्तर छायावादी युग के प्रतिनिधि कवियों को स्वीकार किया है। हरिवंशराय बच्चन §सन् 1907 ई.§ जो डॉ. वर्मा के समकालीन कवि के रूप में ही आते हैं, लेकिन वे एक अलग वाद - हाला वाद-से सम्बद्ध होकर काव्यक्षेत्र में आगे बढ़ चुके हैं। इसलिए हमने यहाँ उनको अपने अध्ययन का विषय नहीं बनाया है। हम यह देख सकते हैं कि डॉ. रामकुमार वर्मा आद्यन्त छायावादी प्रवृत्ति से प्रभावित रहे। लेकिन उत्तरवर्ती छायावादी कवि भगवतीचरण वर्मा और नरेन्द्र शर्मा में प्रगतिशील विचारधारा का प्रभाव है। इन दोनों श्रेणियों के कवियों के बीच डॉ. वर्मा का स्थान निर्धारित करना ही इस अध्ययन का उद्देश्य है। भावगत विशेषताओं का विश्लेषण करने के लिए सौन्दर्य भावना, नारी भावना, मानवतावाद, राष्ट्रीय भावना, रहस्यवाद, दार्शनिक विचार आदि तत्वों को स्वीकार किया है जो डॉ. वर्मा और पूर्व छायावादी कवियों में समान रूप से अभिव्यक्त हुआ है। इन कवियों के साथ डॉ. वर्मा की भावगत विशेषताओं की तुलना की गई है। शिल्पगत विशेषताओं के संबन्ध में भी इसमें विचार किया है जिसमें भाषा, चित्रविधान, प्रतीक विधान, बिंब-विधान आदि तत्व आते हैं। उत्तर छायावादी कवियों की भावगत विशेषताओं के रूप में

सौन्दर्य भावना, नारी भावना, मानवतावाद,दार्शनिक विचारधारा और प्रगतिशील विचारधारा को लिया गया है और शिल्पगत विशेषताओं के अन्दर भाषा, चित्रविधान, प्रतीक विधान और बिंब विधान आते हैं ।

रामकुमार वर्मा और प्रतिनिधि छायावादी कवि - भावगत और शिल्पगत साम्य-वैषम्य

सौन्दर्य की ओर छायावादी कवियों का विशेष आकर्षण रहा है । उनकी सौन्दर्य चेतना के मुख्य आधार हैं प्रकृति और नारी । इन कवियों ने प्रकृति सौन्दर्य का चित्रण करते समय प्रकृति पर नारी के क्रिया व्यापारों का आरोप करके उनका मानवीकरण किया है । निराला के "परिमल" काव्यसंग्रह में संकलित एक गीत द्रष्टव्य है -

"किस अनन्त का नीला अंचल हिला-हिलाकर
आती हो तुम सजी मण्डलाकार'
एक रागिनी में अपना स्वर मिला-मिलाकर
गाती हो ये कैसे गीत उदार'
सोह रहा है हरा क्षीण कटि में, अम्बर शैवाल,
गाती आप, आप देती सुकुमार करों से ताल ।"[1]

उपर्युक्त पंक्तियों में कवि ने लहराती हुई नदी का मानवीकरण किया है जो अपना नीला वस्त्र हिला हिलाकर मधुर स्वर में गीत गाती हुई अपने करों से ताल देती हुई चल रही है । उसी प्रकार महादेवी वर्मा ने भी चाँदनी रात को एक वासक सज्जा नायिका के रूप में चित्रित किया है । यह प्रवृत्ति पन्तजी की रचनाओं में प्रचुरता से हुई है जिन्हें प्रकृति सौन्दर्य में नारी का रूप-लावण्य ही दिखाई पड़ते हैं । प्रकृति-सौन्दर्य चित्रण की यह

---

1. परिमल - सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला - पृ: 72.

प्रणाली रामकुमार वर्माजी की रचनाओं में हुई है । "गजरे तारों वाले" और "एकान्त गान" जैसे गीत इसका उत्तम निदर्शन है । एक में रजनी को एक बाला के रूप में और दूसरे में प्रेमिका के रूप में चित्रित किया है -

"इस सोते संसार बीच,
जग कर सज कर रजनी बाले !
कहाँ बेचने ले जाती हो,
ये गजरे तारों वाले?"[1]

उपर्युक्त पंक्तियों में रजनी को एक बाला के रूप में चित्रित किया है जो सुषुप्त संसार के बीच तारों वाले गजरे बेचने जा रही है । इन्होंने नारी को मांसल सौन्दर्य की स्थूल जड़ता से मुक्त करने केलिए नारी सौन्दर्य पर प्रकृति सौन्दर्य का आरोप करने की प्रणाली भी अपनायी है । प्रसाद ने "कामायनी" में श्रद्धा के सौन्दर्य का जो चित्रण किया है वह स्वयं प्रकृति चित्र ही बन गया है -

"नव इन्द्रनील लघु श्रृंग फोड़ कर धधक रही हो कांत-
एक लघु ज्वालामुखी अचेत माधवी रजनी में अश्रांत"[2]

इन पंक्तियों में प्रसाद ने श्रद्धा के मुख सौन्दर्य का चित्रण किया है जो स्वयं प्रकृति सौन्दर्य का चित्र ही प्रस्तुत करता है । निराला की "यामिनी जागी" शीर्षक कविता में नारी के शारीरिक सौन्दर्य पर प्रकृति सौन्दर्य का ऐसा आरोप किया है कि नारी को उसके स्थूल सौन्दर्य चित्रण से मुक्ति मिली है । नारी सौन्दर्य पर प्रकृति सौन्दर्य का आरोप "उत्तरायण" महाकाव्य में रत्ना के सौन्दर्य चित्रण और "ओ अहल्या" में अहल्या के रूप चित्रण के स्थान पर उपलब्ध है । जब छायावादी कविताओं में वेश्या सौन्दर्य के दैहिक संस्कारों[3] का चित्रण मिलता है तब इस प्रकार का चित्रण वर्माजी की रचनाओं में नहीं के बराबर है ।

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 8.
2. प्रसाद ग्रंथावली भाग-1 - - पृ: 289.
3. वही - पृ: 209.

छायावादी कविता में इस प्रकार नारी के संयमित और कामलोल देह छवि का चित्रण प्रचुर मात्रा में हुआ है । नारी सौन्दर्य चित्रण की ओर उनका ध्यान विशेष रूप से आकृष्ट हुआ है । रामकुमार वर्माजी की रचनाओं में नारी सौन्दर्य चित्रण की व्यापकता नहीं है । प्रसाद ने तो अपने महाकाव्य "कामायनी" में केवल श्रद्धा के सौन्दर्य का चित्रण बहुलता से किया है । वर्माजी के महाकाव्य "उत्तरायण" और "ओ अहल्या" में नारी सौन्दर्य का जो चित्रण मिलता है वह केवल प्रसंगाधिष्ठित है । केवल नारी सौन्दर्य चित्रण ही उनका लक्ष्य नहीं है । अहल्या के सौन्दर्य का जो चित्रण है वह अत्यन्त संयमित और परिमार्जित है । नारी के प्रति अत्यन्त स्वस्थ दृष्टिकोण के कारण उनकी रचनाओं में पन्त और प्रसाद जैसे कवियों में प्राप्त दैहिक सौन्दर्य का अभाव है । छायावादी कवियों ने नारी के आदर्श रूप अथवा शील का चित्रण भी किया है जैसा कि "कामायनी" में है । प्रसाद ने श्रद्धा को नारी के त्यागपूर्ण आत्मसमर्पण के प्रतीक बनाकर नारी के आन्तरिक सौन्दर्य का चित्रण किया है । वर्माजी का ध्यान नूरजहाँ के भोलेपन की ओर लग गया है । इन कवियों ने पुरुष सौन्दर्य का भी चित्रण किया है । वर्माजी के दोनों महाकाव्यों - "एकलव्य", और "ओ अहल्या" - में यह प्रवृत्ति लक्षित होती है ।

छायावादी कवियों ने सौन्दर्य का प्रतीक नारी के अंग प्रत्यंग का चित्रण किया है । प्रसादजी ने "कामायनी" महाकाव्य में श्रद्धा का सौन्दर्य चित्रण करते समय उनके मुख के चारों ओर घिरे बाल को नीले रंग के छोटे बादल से तुलना की है । उन्हें अन्यत्र ऐसा लगा कि नायिका ने अपनी अलकों में मलयानिल को बन्द किया है । इस प्रकार केश सौन्दर्य का चित्रण अन्यत्र भी मिल सकते हैं । इसी प्रवृत्ति पन्त और निरालाजी की रचनाओं में अभिव्यक्त हुई है । वर्माजी को अपनी नायिका के काले बालों के बीच प्रकट माँग ऐसा लगता है जैसे पाप के समूह में पुण्य का प्रवेश हो गया है -

"माँग सँवारी हास्य-प्रभा से सुलझा काले केश,
जैसे पाप-पुंज में कर ले सीधे पुण्य प्रवेश ।"[1]

---

1. ओ अहल्या - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 25.

पाप के समूह से कवि का तात्पर्य है उनके घने काले केश । रामकुमार वर्माजी ने नायिका अहल्या की काली और लंबी केश राशि जो कटि प्रदेश को चूम रही है, इसकी तुलना वेद की सघन संहिता से की है जो अर्थ सहित घूम रही है -

"उनकी लहराती केश-राशि है कटि प्रदेश को रही चूम,
जैसे कि वेद की सघन संहिता अर्थ सहित है रही घूम ।"[1]

उपर्युक्त पंक्तियों में अहल्या की लहराती लंबी केश राशि का वर्णन है । कवियों ने नायिका के भाल देश का सौन्दर्य वर्णन किया है । प्रसाद को नायिका का भाल "शशिखण्ड" सदृश लगता है । वर्माजी को अहल्या का भालदेश शुभ्र द्वितीया का चान्द जैसा और चन्द्रपटल के समान अनुभव होता है । छायावादी रचनाओं में आँखों के सौन्दर्य चित्रण की मात्रा अन्य अंगों की अपेक्षा अधिक है । प्रसादजी को आँखें नीलम की प्याला जैसे लगते हैं । पन्त नायिका की आँखों में प्रेम का आकार पाते हैं । वर्माजी के अनुसार नायिका की आँखों में अनुष्टुप छन्द मौन होकर बस गए हैं और उन्होंने आँखों में मौन मुखरता का दर्शन किया है । नयनों में लिपटा अंजन राहु की रेखा के समान है और आँखें श्वेत कमल जैसा है । नायिका के कपोल का सौन्दर्य चित्रण भी इन कवियों ने किया है । निराला के समान इनमें भी कपोल का सौन्दर्य चित्रण कम ही है । एक स्थान पर उन्होंने कपोल की तुलना प्रभात से की है । प्रसादजी को नायिका का मधुर मुस्कान ऐसा लगता है जैसे लाल रंग के किसलयों पर सूरज की अम्लान किरण अलसाई होकर पड़ी रही हो -

"और उस मुख पर वह मुस्कान,
रक्त किसलय पर ले विश्राम ।
अरूण की एक किरण अम्लान
अधिक अलसाई हो अभिराम ।"[2]

---

1. ओ अहल्या - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 74.
2. प्रसाद ग्रंथावली भाग-1 पृ: 289.

"रक्त किसलय" से श्रद्धा की ओंठ की अरुणिमा व्यंजित होती है । पंत और निराला ने भी अधर और मुस्कान का चित्रण किया है । वर्माजी ने अधरों की पतली रेखा की समानता प्रातः कालीन सूरज की प्रथम किरण से की है[1] और मुस्कान की तुलना प्रातःकाल में उगनेवाली किरण से की है ।[2]

प्रमुख छायावादी कवियों से वर्माजी की सौन्दर्य भावना की तुलना करने पर हम यह समझ सकते हैं कि उनकी सौन्दर्य भावना में भी उन कवियों के समान मधुरता है, सरसता है । लेकिन इसका अन्तर केवल इतना है कि इनमें उनकी अपेक्षा सौन्दर्य चित्रण की व्यापकता की कमी है । उनके समान नारी के अंग प्रत्यंग का चित्रण नाममात्र है । इनकी सौन्दर्य भावना अत्यन्त स्वस्थ एवं संयमित है ।

प्रसाद, पन्त, निराला और महादेवी की रचनाओं में प्रेयसी भावना की अभिव्यक्ति हुई है । प्रथम तीन कवियों ने प्रेयसी के प्रति अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति की है । लेकिन महादेवीजी ने अपने को प्रेयसी मानकर प्रियतम से अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति की है । इन कवियों ने प्रेमिका के विरह से उत्पन्न पीड़ा की अभिव्यक्ति की है । प्रसाद यह मधुर पीड़ा पाकर मस्त रहते हैं । उन्हें, यह वेदना मधुर लगता है । "कानन कुसुम" की "हृदय वेदना" में कवि ने इसी भाव की अभिव्यक्ति की है -

"मैं तो रहता मस्त रात दिन पाकर यही मधुर पीड़ा
वह होकर स्वच्छन्द तुम्हारे साथ किया करती क्रीड़ा ।"[3]

कवि इस मधुर पीड़ा को पाकर दिन-रात मस्त रहते हैं और प्रिया के साथ क्रीड़ा करती रहती है । कवि पन्त की विरह जन्य पीड़ा "आँसू" के रूप में फूट पड़ी है । प्रेमिका के विरह से वे दुःखी हैं । उनके हृदय में प्रेमिका की स्मृति मणियों के समान बिखर गई है ।

----

1. ओ अहल्या - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृः 74.
2. उत्तरायण - वही - पृः 29.
3. प्रसाद ग्रंथावली भाग-1 - पृः 114.

वे इस सोच में हैं कि मैं इस दुःख को किसके हृदय में उतार दूँ।[1] निराला ने "परिमल" में संकलित "प्रिया के प्रति" में प्रिया के विरह से पीड़ित मन की मार्मिक व्यथा की अभिव्यक्ति की है -

"मैं न कभी कुछ कहता,
बस, तुम्हें देखता रहता ।
चकित, थकी, चितवन मेरी रह जाती
दग्ध हृदय के अगणित व्याकुल भाव
मौन दृष्टि की ही भाषा कह जाती ।
xx xx xx
क्या तुम व्याकुल होतीं ?
मेरे दुःख पर रोतीं ?"[2]

वे प्रिया से कुछ कहना नहीं चाहते । केवल मौन भाव से देखते ही रहना चाहता है । वे अपनी चकित और थकी चितवन से अपने दग्ध हृदय के अगणित व्याकुल भाव को मौन दृष्टि की भाषा में कहना चाहते हैं । वियोग की ज्वाला से उनका हृदय उज्ज्वल हुआ और प्रणय पावन बन गया । प्रेयसी से यह पूछते हैं कि क्या तुम मेरी व्यथा देखकर व्याकुल होती हो और मेरे दुःख देखकर रोती हो ? महादेवी तो प्रिय के विरह से दुःखी होकर आँसू बहाकर रहती है । आँसू बहाकर उनकी आँखें रिक्त हो गए हैं -

"आँखों के कोष हुए हैं
मोती बरसाकर रीते ।"[3]

महादेवीजी की रचनाओं में आध्यात्मिक विरह भावना की अभिव्यक्ति ही खुलकर प्रकट हुई है । इनमें लौकिक शृंगार और प्रणय भावना की अभिव्यक्ति नहीं है । इनसे इन छायावादी कवियों की लौकिक प्रणय भावना और विरह जन्य पीड़ा की अभिव्यक्ति हम

---

1. पल्लव - सुमित्रानंदन पन्त - पृः 65.
2. परिमल - सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला - पृः 60-61.
3. नीहार - महादेवी वर्मा - पृः 29.

देख सकते हैं । इनके समान ही डॉ. रामकुमार वर्माजी की रचनाओं में लौकिक शृंगार की - विरह, मिलन - अभिव्यक्ति हुई है । कवि दिन-रात प्रेयसी की प्रतीक्षा करते रहते हैं । प्रेमिका से उनकी मुलाकात नहीं हुई । इसलिए वे निराश हो जाते हैं और उसे अकेलेपन का अनुभव होता है । वे प्रेयसी से एक किरण के समान उनके हृदय में शान्त होकर आ जाने का अनुरोध करते हैं जिससे उन्हें भविष्य-जीवन में अकेलेपन का अनुभव न हो जायें -

"एक किरण-सी आ जाना तुम मेरे उर में शान्त,
प्रिये ! रहूँगा फिर भविष्य-जीवन में नहीं अकेला ।"[1]

रामकुमार वर्माजी की रचनाओं में इस प्रकार छायावादी कवियों के समान विरह जन्य पीड़ा की अभिव्यक्ति हुई है ।

कवि प्रसाद प्रफुल्लित कानन में प्रियतमा के सौन्दर्य का दर्शन करते हैं । प्रकृति उनकी प्रियतमा का ही प्रतिबिंब है ।[2] पन्त तो प्रकृति की हर सुन्दर वस्तु में अपनी प्रेयसी की छाया का दर्शन करते हैं । कवि प्रेयसी के अद्वितीय अनुपम सौन्दर्य देखकर उसे "रूप-तारा" कहते हैं । कवि निराला की प्रेयसी मनोमोहिनी है, मनोरमा है -

"पुष्प है उसका अनुपम रूप,
कान्ति सुषमा है,
मनोमोहिनी है वह मनोरमा है,
जलती अन्धकारमय जीवन की वह एक शमा है ।"[3]

उनकी प्रेयसी उनके अंधकारमय जीवन की जलतीशमा है । डॉ. वर्मा के अनुसार उनकी प्रेयसी का सारा सौन्दर्य ही वसन्त के दर्पण में अंकित हुआ है । वर्माजी की भावना के अनुसार उनकी प्रेमिका का सौन्दर्य देखकर चन्द्रमा लज्जित होकर आसमान की ओर सिधारा है -

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 63.
2. प्रसाद ग्रंथावली - पृ: 138.
3. परिमल - सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला - पृ: 137.

"तुम्हें देख शशि भस्म लगा -
दुर्बल हो गगन सिधारा ।"[1]

प्रेमिका के सौन्दर्य के सामने शशि अपने सौन्दर्य को तुच्छ अनुभव करके दूर की ओर चला गया । कवि पन्त की प्रेयसी तो सरलता और भोलेपन का साकार रूप है ।[2] रामकुमार वर्माजी अपनी नायिका को दयालु समझते हैं । वह उनके द्वार पर आई है ।[3]

प्रसाद और पंत के मिलन चित्रण में शृंगार की ऐन्द्रियता का चित्रण है । प्रसाद के "आँसू" के मिलन चित्रण में यह भाव दर्शित होता है । कवि प्रेमिका का आलिंगन कर लेते हैं -

"परिरंभ कुंभ की मदिरा
निश्वास मलय के झोंके
मुख चन्द्र चाँदनी जल से
मैं उठता था मुँह धोके ।"[4]

उसी प्रकार पन्तजी के "युगान्त" में भी संयोग शृंगार का चित्रण मिलता है । उसने प्रेमिका का चुंबन किया, आलिंगन किया और आत्मसमर्पण तक किया -

"तुमने अधरों पर धरे अधर,
मैं ने कोमल वपु भरा गोद,
था आत्मसमर्पण सरल, मधुर,
मिल गए सहज मस्ताकाश ।"[5]

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 48.
2. पल्लव - सुमित्रानंदन पन्त - पृ: 56.
3. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 54.
4. प्रसाद ग्रंथावली भाग -1 - पृ: 209.
5. युगांत - सुमित्रानंदन पन्त - पृ: 44.

इस प्रकार प्रसाद और पन्त में प्रेम के दैहिक संस्कारों का चित्रण है । लेकिन डॉ. वर्मा की रचनाओं में प्रेम की ऐन्द्रियता का चित्रण नहीं है । वे तो प्रेमिका से अपने वक्ष स्थल में माला बनकर सो जाने का अनुरोध करते हैं -

"उषा तोड़ तारों के फूल,
खेल रही है बादल में,
तू भी बन माला की रेख
सो मेरे वक्ष स्थल में ।"[1]

उपर्युक्त पंक्तियों में शृंगार की ऐन्द्रियता का चित्रण नहीं होता । लेकिन एक स्थान पर उन्होंने प्रेमिका के साथ हुई बीती घटनाओं का जो चित्रण किया है वहाँ प्रेम की ऐन्द्रियता का कुछ आभास होता है लेकिन वहाँ कवि ने अत्यन्त संयम से इसका चित्र खींचा है -

"मेरी बनमाला से तोड़-तोड़, अपनी माला से जोड़ जोड़ ।
मेरे उर तट पर सदा छोड़ देती थीं साँसों की तरंग ।"[2]

लेकिन इन पंक्तियों को उपुर्यक्त पंक्तियों की कोटि में बाँधना कहाँ तक उचित है?

प्रमुख छायावादी कवियों की प्रेयसी भावना के साथ डॉ. वर्माजी की प्रेयसी भावना का विश्लेषण करने पर हम यह देख सकते हैं कि उनकी यही भावना अत्यन्त परिपक्व है । इनमें प्रेम की ऐन्द्रियता का चित्रण नहीं के बराबर है ।

छायावादी कवियों ने नारी के अन्य रूपों - कन्या, पत्नी, विधवा, पतिता, देश प्रेमिका, समाज सेविका, मज़दूरिन का चित्रण भी किया है । लेकिन वर्माजी की रचनाओं में नारी के इन सारे रूपों का चित्रण नहीं है । उन्होंने केवल "विधवा" के संबन्ध में ही अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति की है । निरालाजी ने "विधवा" नाम पर एक अलग कविता ही लिखी है जिसमें समाज में नारी की दैन्य दशा का चित्रण है । वर्माजी के "दुःखिनी के आँसू का परिचय" में विधवा नारी का चित्र है -

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 47.
2. वही - पृ: 46.

"किस तरह दूँ अपना परिचय'
वहाँ से मैं आया हूँ भाग
जहाँ प्रिय के वियोग की धधक धधक कर
जलती रहती आग
आँच से सूखा है अनुराग
प्रलय बन गया हृदय का प्रणय ।।"[1]

उपर्युक्त पंक्तियों में विधवा नारी की मानसिक दशा का चित्रण है । एक अन्य कविता "टूटी कली" में कवि ने समाज में नारी की करुण स्थिति का चित्रण टूटी कली के माध्यम से खींचा है ।

प्रसाद, पंत, निराला, महादेवी वर्मा आदि छायावादी कवियों की रचनाओं में मानवता का कल्याण करने की बलवती अभिलाषा अभिव्यक्त हुई है । इन कवियों ने अपनी रचनाओं में समाज के पीड़ित और शोषित वर्ग के प्रति अपनी तीव्र संवेदना प्रकट की है । आगे इन छायावादी चतुष्टय और डॉ. वर्मा की रचनाओं में अभिव्यक्त मानवतावाद का विश्लेषण करेंगे ।

"कामायनी" में प्रसादजी की मानवतावादी विचारधारा की अभिव्यक्ति खुलकर प्रकट हुई है । प्रसादजी केवल अपने ही सुख में सीमित रहना अच्छा नहीं मानते । वे समष्टि कल्याण चाहते हैं । दूसरों के सुख को देखकर स्वयं खुशी का अनुभव करना चाहिए । इस प्रकार अपने सुख को विस्तृत बनाना है । कवि के इस भाव की अभिव्यक्ति "कामायनी" में श्रद्धा के मुख से स्पष्ट हुई है -

"औरों को हँसते देखो मनु, हँसो और सुख पाओ,
अपने सुख को विस्तृत कर लो जग को सुखी बनाओ ।"[2]

---

1. आज के लोकप्रिय हिन्दी कवि रामकुमार वर्मा - सं. राधेकृष्ण श्रीवास्तव - पृः
2. प्रसाद ग्रंथावली - भाग-1 - पृः 314.

प्रसादजी के अनुसार जातिव्यवस्था और वर्णव्यवस्था मानवता के विकास के विरोधक तत्व हैं । ये शासक और शासित, शोषक और शोषित, अधिकारी और अधिकृत आदि भावना अच्छे नहीं समझते । पंतजी की रचना में मानवतावादी विचारधारा की बहुलता है । कवि को यह देखकर आश्चर्य होता है कि जब सारी प्रकृति प्रफुल्लित रहती है तब एक मात्र मानव दुःखी होकर जीवित होते हुए भी मृत सा जीवन व्यतीत करता रहता है । कवि अंधकारमय जीवन में भटकनेवाले मानव को जाग्रत बनने का आह्वान देते हैं । अपने स्वप्नों को सत्य बनाकर नवमानवता का चयन करो जिससे नवयुग का प्रभात उदित हो जायें ।[1] पंत भी यही मानते हैं किसमाज में जातिभेद और वर्णभेद के कारण मानवता का ह्रास हो रहा है । इसलिए कवि देश और राष्ट्र के इन विविध भेदों का हरण करना चाहते हैं । उनका आह्वान है -

"आज मनुज को खोज निकालो ।
जाति वर्ण संस्कृति समाज से
मूल व्यक्ति को फिर से चालो ।"[2]

जाति-वर्ण-संस्कृति, भाषा आदि सारे भेद भावों से ऊपर उठकर मानव की खोज करना है और उनको अपनाना है । मानवता के प्रति इतना इच्छुक होनेवाला कवि यही आशा करते हैं कि मानवता के युग प्रभात में मानव-जीवन की धारा मुक्त और अबाध होकर अनर्गल बहती रहे जिससे सारा मानव-संसार सुख और स्वर्णिम हो जाए ।[3]

निरालाजी की जिन कविताओं में समाज के पीड़ित, शोषित और उपेक्षित वर्ग के प्रति सहानुभूति प्रकट हुई है उन कविताओं में उनकी मानवतावादी विचार-धारा की अभिव्यक्ति हुई है । "भिक्षुक" और "तोड़ती पत्थर" शीर्षक कविताओं में कवि ने समाज के पीड़ित, दुःखित, असहाय व्यक्तियों के प्रति अपनी सहानुभूति प्रकट की है ।

---

1. युगवाणी - सुमित्रानंदन पन्त - पृः22.
2. वही - पृः 107.
3. वही - पृः 40.

"अनामिका" में संकलित "प्रकाश" गीत में कवि दुःखी और असहाय व्यक्तियों को गले लगाना चाहते हैं । दुःखी व्यक्तियों को देखकर उसका हृदय पिघल उठता है और कवि उसे गले लगाते हैं ।[1] इस प्रकार निरालाजी की मानवतावादी विचारधारा की अभि-व्यक्ति उनके प्रति सहानुभूति और करुणा का रूप लेकर हुई है ।

महादेवी की रचनाओं में भी उनकी मानवतावादी विचारधारा की अभिव्यक्ति हुई है । समाज के पीड़ित - दुःखित व्यक्तियों के प्रति उनके मन में करुणा है, सहानुभूति है । "रश्मि" में संकलित "कह दे माँ क्या अब देखूँ" गीत में कवयित्री ने यह भाव प्रकट किया है कि क्या मैं खिलती कलियों को देखूँ या प्यासे सूखे अधरों को देखूँ । नीले कमलों पर हँसनेवाले ओस बिन्दुओं की ओर देखूँ या दुःखी व्यक्ति के आँसू-कण देखूँ ।[2] उनकी मानवतावादी विचारधारा में आत्मसमर्पण की भावना है । दूसरों की भलाई के लिए अपने को न्योछावर करना है । शलभ ने तो दीपक की ज्वाला से मिलकर अपने जीवन को उज्वल बना दिया है -

"शलभ अन्य की ज्वाला से मिल,
झुलस कहाँ हो पाया उज्वल !
कब कर पाया वह लघु तन से
नव आलोक-प्रसार !
ओ पागल संसार !"[3]

समाज की सेवा के लिए अपने जीवन को समर्पित करने का भाव उनके गीतों में निहित है । जिस प्रकार एक फूल अपनी खुशबू से संसार को सुगन्धयुक्त कर झर जाता है और छोटे दीपक अंधकार में जलकर सारे वातावरण को प्रकाशित करके बुझ जाते हैं उसी प्रकार हमें भी अपने जीवन को सार्थक बना देना है ।[4]

---

1. परिमल - सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला - पृः 109.
2. रश्मि - महादेवी वर्मा - पृः 49.
3. यामा - वही - पृः 141.
4. नीरजा - वही - पृः 39.

इन छायावादी चतुष्टय की मानवतावादी विचारधारा के विश्लेषण से हम इस निष्कर्ष पर पहुँच सकते हैं कि उनकी मानवतावादी विचारधारा में समष्टिकल्याण, पीड़ितों और दुःखियों के प्रति सहानुभूति, सारे समाज में समानता की स्थापना और समाज की भलाई के लिए अपने जीवन को समर्पित करने की इच्छा निहित है ।

डॉ. वर्माजी का महाकाव्य "एकलव्य" और खण्डकाव्य "संत रैदास" में उनकी मानवतावादी विचारधारा की सशक्त अभिव्यक्ति हुई है । उनकी मानवतावादी विचारधारा उन स्थानों पर खूब उभर आयी है जहाँ उन्होंने जाति-पाँति के संबन्ध में अपना दृष्टिकोण स्पष्ट किया है । एकलव्य केवल निम्न जाति के होने के कारण राजगुरु आचार्य द्रोण का शिक्षा पात्र नहीं बन सका । कवि वर्णव्यवस्था को मानवता के विकास के विरोधी तत्व मानते हैं । वे ऐसी राजधानी का विनाश अनिवार्य समझते हैं जो अपनी राजनीति से महर्षियों को चलाती है । वे मानव की शक्ति को तब महान मानते हैं जब मानव अपनी शक्ति से सभी मानवों में साम्य की स्थापना की जाये -

"मानव की शक्ति तो महान् तब होती है,
जब वह दानव को मानव बना सके,
और सब मानवों में साम्य की हो स्थापना ।"[1]

वे समाज में मानव की समानता पर ज़ोर देते हैं । "संत रैदास" की "प्रस्तावना" में उनका जो विचार फूट पड़ा है वह इस भावना का उज्वल उदाहरण है । जातिगत भेद-भाव के प्रति उनका रोष इसमें झलकता है । वे समाज में सब मानव को समान मानते थे । प्रेमानन्द के मुँह से उन्होंने अपनी विचारधारा की अभिव्यक्ति की है -

"चर्मकार तुम भले रहो,
पर जाति पाँति की मुझे न भीति,
सब समान हैं, सब मेरे हैं
सबसे रहती मेरी प्रीति ।"[2]

---

1. एकलव्य - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 198.
2. संत रैदास - वही - पृ: 38.

पूर्व छायावादी कवियों के समान उनकी रचना में भी अछूत और दुःखी व्यक्तियों के प्रति करुणा-सहानुभूति की भावना स्पष्ट हुई है । निराला के समान वे समाज के निम्नवर्ग को गले लगाने का आह्वान देते थे । आगे हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि वर्माजी की मानवतावादी विचारधारा पूर्व छायावादी कवियों से तनिक भी भिन्न नहीं है । उनकी विचारधारा से वर्माजी की विचारधारा की समानता है । वर्माजी की विशेषता यह है कि इनकी विचारधारा का सशक्त रूप जातिभेद के प्रति अपनी अतृप्ति के रूप में प्रकट हुई है ।

छायावादी कवियों की रचना में उत्कट राष्ट्रीय भावना अभिव्यक्त हुई है । कवियों की राष्ट्रीय भावना का प्रस्फुटन भारत वन्दना तथा प्रशस्ति, अतीत का गौरव गान, वर्तमान काल की दुर्दशा आदि रूपों में हुआ है ।

प्रसादजी ने "चन्द्रगुप्त" नाटक में अरुण यह मधुमय देश हमारा" गीत में भारत की महिमा का वर्णन किया है । पन्तजी ने "स्वर्ण धूलि" में संकलित "जन्मभूमि" शीर्षक कविता में अपनी जन्म भूमि को स्वर्ग से भी अधिक श्रेष्ठ मानकर अपने देश का कीर्तिगान किया है । उनके अनुसार भारत जो है जिसका गौरव भाल हिमाचल है, जिसकी धरती श्यामल है, जिसमें गंगा और यमुना जैसी नदियाँ बहती है ऐसा भारत देश जन जन के हृदय में बस गई है ।[1] निराला द्वारा रचित गीत है "भारती जय विजय करे" जिसमें कवि ने यह भाव प्रकट किया है कि सिंधु गंगा जैसी नदियाँ उनके चरण युगल को धोनेवाली हैं । सारी प्रकृति उसका वसन है । गंगा का जलकण गले का हार है -

"तरु-तृण-बन-लता वसन,
अञ्चल में खचित सुमन,
गड्.गा ज्योतिर्जल-कण
धवल धार हार गले ।"[2]

इसमें प्राकृतिक सौन्दर्य से संपन्न भारत भूमि की वन्दना की गई है ।

---

1. स्वर्णधूलि - सुमित्रानंदन पन्त - पृ: 92.
2. गीतिका - सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला - पृ: 73.

रामकुमार वर्माजी ने "ग्राम देवता" नामक गीत में देश के प्रति अपनी भक्ति प्रकट की है । वे अपनी कविता से ग्राम देवता की आरती उतारना चाहते हैं -

"अपनी कविता से आज तुम्हारी
विमल आरती लूँ उतार !
हे ग्राम देवता ! नमस्कार !"[1]

कवि कहते हैं कि जिस भारत की धूल उसके शरीर में लगी है उस देश को वे कैसे भूल सकते हैं । वे सदा अपने देश की सुखद मूर्ति का ध्यान करना चाहते हैं और उनका कीर्तिगान करना चाहते हैं । उनके देश भक्तिपरक गीत में यह भाव प्रकट हुआ है कि वे अपने देश की रक्षा के लिए मर मिटने को भी तैयार है ।

कवियों ने अतीत का गौरवगान करते हुए जनता को भारत के उन महान नेताओं के जीवन से परिचित किया है जिन्होंने अपने देश की रक्षा के लिए आत्मोत्सर्ग किया है । प्रसाद जी का "महाराणा का महत्व" इसका स्पष्ट उदाहरण है । देश की स्वतंत्रता के लिए उन्होंने अनेक संकटों का सामना किया । कवि यह प्रश्न कर बैठते हैं कि

"जन्म भूमि केलिए, प्रजा-सुख-के लिए
इतना आत्मोत्सर्ग भला किसने किया ?"[2]

कवियों ने पूर्वजों के नैतिक आदर्श, बल-विक्रम, त्याग, बलिदान, आत्मसमर्पण, जौहर आदि का मुक्तकंठ से गान किया है ।

रामकुमार वर्माजी ने नेहरूजी का शतशत प्रणाम किया है और उनके प्रति श्रद्धांजलि भी अर्पित की है । "आकाश गंगा" में संकलित एक गीत में उन्होंने भारत के उन महान् देशप्रेमियों की ओर संकेत किया है जिन्होंने अपने देश की पवित्र बलिवेदी पर अपने रक्त को बहा दिया है ।[3] वर्तमान दुर्दशाओं की ओर भी इन कवियों ने दृष्टि उठायी है

---

1. आज के लोकप्रिय हिन्दी कवि रामकुमार वर्मा - सं. राधेकृष्ण श्रीवास्तव - पृ: 108
2. प्रसाद ग्रंथावली - भाग-1 - पृ: 99.
3. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 356.

निरालाजी ने "भिक्षुक" और "तोड़ती पत्थर के माध्यम से आर्थिक विषमता का चित्र खींचा है । समाज में विधवा नारियों की दुर्दशा का चित्रण कवि ने "विधवा" के माध्यम से प्रस्तुत किया है । रामकुमार वर्माजी ने "टूटी कली" के माध्यम से भारतीय नारी की दीनता का चित्रण किया है । विधवा की पीड़ा की ओर भी उन्होंने संकेत किया है । छुआछूत का संकेत भी छायावादी रचनाओं में मिलता है । वर्माजी ने "अछूत" शीर्षक एक अलग गीत ही लिखा है । समाज तो अछूत को दूर रहना चाहते हैं । वर्माजी ने अछूत को "एकलव्य का पूत"[1] कहकर यह बताया है कि ये धरती सजाने के लिए आये हुए स्वर्ग के दूत हैं ।

छायावादी काव्य की अनुभूतिगत एक विशेषता है रहस्यवादी भावना । इस रहस्यवादी भावना की अभिव्यक्ति छायावादी चतुष्टय की रचनाओं में अभिव्यक्त हुई है । आगे इन छायावादी कवियों का रहस्यवाद और वर्माजी के रहस्यवाद का विश्लेषण करेंगे । रहस्यवादी काव्य की विशेषता है सारी प्रकृति में परोक्ष सत्ता का आभास देखना और उसके प्रति जिज्ञासा प्रकट करना । इसी भाव से प्रेरित होकर प्रसादजी किरण से पूछते हैं कि "किरण ! तुम क्यों बिखरी हो आज, रंगी हो तुम किसके अनुराग । महादेवी के काव्य में रहस्य के प्रति जिज्ञासा एवं कुतूहल भावना प्रकट हुई है -

"ढलकते आँसू सा सुकुमार
बिखरते सपनों से अज्ञात,
चुरा कर अरुणा का सिन्दूर
मुस्कुराया जब मेरा प्रात,
छिपाकर लाली में चुपचाप
सुनहला प्याला लाया कौन ?"[3]

----

1. आज के लोकप्रिय हिन्दी कवि रामकुमार वर्मा - सं. राधेकृष्ण श्रीवास्तव - पृः 53.
2. प्रसाद ग्रंथावली भाग-1 - पृः 168.
3. यामा - महादेवी वर्मा - पृः 8.

अर्थात् कवयित्री के जीवन में जब प्रातःकाल का उदय हुआ तब उषा की लालिमा को सुनहले प्याले में छिपाकर कौन लाया है? प्रकृति की सौम्यता और उसका सौन्दर्य देखकर निरालाजी के मन में यह प्रश्न उठता है कि इसके अन्तर्गत कौन सी शक्ति विद्यमान है -

"कौन तुम शुभ्र किरण-वसना?
सीखा केवल हँसना-केवल हँसना -
शुभ्र किरण-वसना ।"[1]

इसी जिज्ञासा भावना की अभिव्यक्ति वर्माजी की रचनाओं में स्पष्ट हुई है । प्रकृति के असीम सौन्दर्य को देखकर कवि आश्चर्य चकित हो जाते हैं और उनके मन में यह प्रश्न उठते हैं कि प्रकृति को इतना सौन्दर्य किसने प्रदान किया है? -

"फूलों में किसकी मुस्कान?
बिखर गई है कलिकाओं में
भरने को आनन्द महान्?
फूलों में किसकी मुस्कान?"[2]

जिज्ञासा भावना की अभिव्यक्ति "चित्ररेखा" में भी प्रकट हुई है कि प्रातःकालीन प्रकृति में अपनी शोभा से विराजमान छोटे छोटे ओस बिन्दुओं में किसका छविमय विलास है और विहगों के कंठों में कौन माधुर्य भर रहा है ।[3]

इन कवियों के रहस्यवाद की अन्य विशेषता है उस अलौकिक परमात्मा के प्रति प्रेम संबन्ध स्थापित करना और उसे प्रियतम के रूप में स्वीकार कर प्रणय भावना की अभिव्यक्ति करना । प्रसादजी के "आँसू" में परमात्मा के प्रति यह प्रणय भावना की अभिव्यक्ति देख सकते हैं । कवि ने परमात्मा को प्रियतमा के रूप में अपनाया है -

----

1. गीतिका - सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला - पृ: 34.
2. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 53.
3. वही - पृ: 195.

"शशि मुख पर घूँघट ड़ाले
अंचल में दीप छिपाये
जीवन की गोधूली में
कौतूहल से तुम आये ।"[1]

निरालाजी अपने अलौकिक प्रियतम की प्रतीक्षा करते करते तड़पते रहते हैं और उसके मिलन के लिए उत्सुक रहते हैं -

"प्राण-धन को स्मरण करते
नयन झरते-नयन झरते ।"[2]

पन्तजी में इस प्रेम की अभिव्यक्ति स्पष्ट हुई है । अंग अंग में उनका हृदय उछलता रहता है, हर रोम में प्रणय सिसकता रहता है और प्रियतम में तन्मय हो जाने के लिए उनका हृदय क्रन्दन गायन करता रहता है । महादेवी के मन में प्रियतम के मिलन की भावना उत्कट होने लगी और उनका प्रणय व्यापार तीव्र होने लगा -

"उजियारी अवगुंठन में
विधु ने रजनी को देखा
तब से मैं ढूँढ रही हूँ
उनके चरणों की रेखा ।"[3]

चन्द्रमा ने जब अपनी उजियारी अवगुंठन में प्रियतमा रजनी को देखा तब से कवयित्री प्रियतम के चरणों की रेखा ढूँढ रही है । इन छायावादी कवियों ने अलौकिक और आध्यात्मिक प्रेम को लौकिक जीवन के प्रणय व्यापार के माध्यम से अभिव्यक्त किया है इनके इन प्रणयचित्रों में विरह-मिलन के तरह तरह के चित्र अंकित हुए हैं । इस लौकिक धरा के आधार पर प्रियतमा के प्रति आध्यात्मिक प्रेम की अभिव्यक्ति वर्माजी की रचनाओं में

---

1. प्रसाद ग्रंथावली - भाग-1 - पृ: 206.
2. अपरा - सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला - पृ: 72.
3. नीहार - महादेवी वर्मा - पृ: 59.

खुलकर प्रकट हुई है । उनके मन में प्रियतमा के मिलन की उत्कट इच्छा पैदा होती है और उससे अपने पास आने का अनुरोध करते हैं । वे दिन रात उसकी प्रतीक्षा करते रहते हैं । उनके मन में प्रियतमा के साथ घटित सुखद घटनाओं की याद हैं । अपने पास न आने के कारण उलाहना भी प्रकट करते हैं । इस प्रकार प्रेम के सभी पक्षों को लौकिक धरातल पर स्पष्ट करके उस परमात्मा के प्रति अपना प्रेम भाव स्पष्ट करने में कवि सफल हुए हैं । इन कवियों के रहस्यवाद की अन्य विशेषता है आत्मसमर्पण की भावना । प्रसाद की इसी भावना की अभिव्यक्ति "प्रेमपथिक" में स्पष्ट हुई है -

"आत्म समर्पण करो उसी विश्वात्मा को पुलकित होकर
प्रकृति मिला दो विश्व प्रेम में विश्व स्वयं ही ईश्वर है ।"[1]

कवि पन्तजी माँ के पाद-पद्मों में अपने जीवन को पूर्ण रूपेण समर्पित करते हैं । आत्मा और परमात्मा के तादात्म्य हो जाने पर निराला को समस्त संसार में प्रिय ही दिखाई पड़ता है । अन्त में परमात्मा से उनका मिलन होता है । प्रसादजी का प्रियतमा से मिलन "जीवन की गोधूली में हुआ । निरालाजी ने आत्मा-परमात्मा के मिलन का चित्रण जुही की कली के माध्यम से अर्थात् प्रकृति के माध्यम से चित्रित किया । अपने प्रियतम का मिलन प्राप्त कर वर्माजी कोकिल से उस मिलन का गीत जीवन पर्यंत गाने की इच्छा प्रकट करते हैं ।

पूर्व छायावादी कवियों में समान रूप से अभिव्यक्त भावगत विशेषता है दार्शनिक विचारधारा । परमतत्व, आत्मा, प्रकृति, प्रलय और सुख-दुःख के संबन्ध में छायावादी चतुष्टय ने गंभीरता से विचार किया है । छायावादी कवियों ने परमतत्व को अनन्त रमणीय, सर्व व्यापक एवं सर्वशक्तिमान माना है । इसी भाव से प्रेरित होकर प्रसाद "कामायनी" में उस अनन्त रमणीय के संबन्ध में कुछ कहने में अपने को असमर्थ मानते हैं । डॉ. वर्मा ने सारी प्रकृति में उस परमतत्व का आभास पाया है और वे उन्हें अज्ञात नहीं मानते । छायावादी कवियों ने जीवात्मा को परमतत्व का अंश माना है । उनके अनुसार परमात्मा और जीवात्मा के बीच अंशी-अंश का संबन्ध है । पन्तजी ने यह भाव स्पष्ट किया है कि -

---

1. प्रसाद ग्रंथावली - भाग-1 - पृ: 70.

"मनुज निश्चय ईश्वर का अंश"[1]

उसी प्रकार डॉ. वर्मा ने जीव को परमात्मा का अंश माना है। जीव को दीपक के किरण-कण के रूप में चित्रित किया गया है। परमतत्व और जीवात्मा के संबन्ध में पूर्व छायावादी कवियों ने जितनी गंभीरता से विचार किया उतना गांभीर्य वर्माजी की रचनाओं में अप्राप्त है।

समस्त छायावादी कवियों ने प्रकृति में उस अनन्त शक्ति की छवि का दर्शन किया। प्रसाद ने "कानन कुसुम"[2] में प्रकृति को अनन्त शक्ति की सहचरी के रूप में चित्रित किया है। इन कवियों ने दार्शनिक भाव की अभिव्यक्ति के लिए प्रकृति का सहारा लिया है। प्रकृति पर नारी चेतना का आरोप इनकी रचनाओं में उपलब्ध है। प्रकृति में परम शक्ति का दर्शन करने की प्रवृत्ति वर्माजी की रचनाओं में भी उपलब्ध है। वर्माजी ने दार्शनिक और रहस्यात्मक भाव की अभिव्यक्ति के लिए प्रकृति को माध्यम बनाया है। प्रकृति में नारी चेतना के आरोप के उदाहरण उनकी रचनाओं में कम नहीं है

छायावादी कवियों ने प्रलय के संबन्ध में भी अपना विचार प्रकट किया है प्रलय के संबन्ध में प्रसादजी का विचार "कामायनी" में उपलब्ध है। निराला और महादे ने प्रलय को मृत्यु के अर्थ में लेकर उनका विवेचन किया है। वर्माजी ने मृत्यु को स्वतन्त्र रूप में मानकर उस पर विचार किया है। मृत्यु को जीवित क्षण की हार माननेवाले कवि ने यह विचार प्रकट किया है कि मनुष्य को मृत्यु में शान्ति प्राप्त होती है।

सुख-दुःख के संबन्ध में इन कवियों ने विस्तार से विवेचन किया है। पन्तजी सुख-दुःख दोनों की अनिवार्यता स्वीकार करते हैं। महादेवी सुख-दुःख दोनों को परस्पर संबद्ध एवं अन्योन्याश्रित मानती हैं। वर्माजी यह अनुभव करते हैं कि संसार में सुख की अपेक्षा दुःख की मात्रा अधिक है और कवि दुःख को सुमधुर मानते हैं।

---

1. प्रसाद ग्रंथावली - भाग-1 - पृ: 109.

इसके अतिरिक्त ये हर छायावादी कवि विशेष दर्शन से भी प्रभावित हैं । प्रसादजी शैवदर्शन से प्रभावित है । 'कामायनी' में शैवदर्शन का प्रभाव है । पन्तजी अरविन्द दर्शन से प्रभावित है । उसी प्रकार महादेवी की रचनाओं में बौद्ध दर्शन का प्रभाव हम देख सकते हैं । डॉ. वर्माजी की रचनाओं - "चित्ररेखा", "चन्द्र किरण", "आकाशगंगा" - में यत्रतत्र बौद्ध दर्शन के क्षणिकतावाद और शून्यवाद का उदाहरण उपलब्ध है ।

छायावादी काव्य भाषा को बंगला भाषा ने बहुत प्रभावित किया है । प्रसाद, पंत, निराला की भाषा शैली पर बंगला भाषा का विशेष प्रभाव पडा है । निराला की "जुही की कली" में बंगला पदावली की छाप देख सकती है ।

रामकुमार वर्माजी ने अपने कुछ गीतों का शीर्षक रवीन्द्र शैली से प्रभावित होकर रखा है । उनकी काव्य शैली पर रवीन्द्र की संवाद शैली का प्रभाव भी है । उनके महाकाव्य "एकलव्य" में इस शैली के अनेक उदाहरण मिल सकते हैं । उनकी काव्यशैली में व्रज भाषा का प्रभाव भी है । प्रसाद ने "चित्राधार" की रचना तो व्रज भाषा में की है । वर्माजी ने "अँखियान में" जो समस्यापूर्ति के लिए लिखी गई है वह व्रज भाषा में ही थी । "संत रैदास" खण्डकाव्य में वर्माजी ने व्रज भाषा के शब्दों का प्रयोग किया है । छायावादी कवियों को काव्य भाषा में संस्कृत के तत्सम शब्दों की प्रचुरता है । जैसे महादेवीजी की "नीरजा" की निम्नलिखित पंक्तियाँ देखिए -

"चौंकी निद्रित
रजनी अलसित
श्यामल पुलकित कम्पित कर में
दमक उठे विद्युत के कंकण ।"[1]

वर्माजी की रचनाओं में भी संस्कृत के तत्सम शब्दों के उदाहरण मिल सकते हैं -

---

1. नीरजा - महादेवी वर्मा - पृ: 83.

"उषा-सम रंजित रुचिर-प्रसून
शरद-बादल-सी कलियाँ श्वेत,
व्योम से पल्लव कोमल श्याम,
सभी हारों में है समवेत ।"[1]

प्रसाद, पंत और निराला ने प्राचीन सांस्कृतिक शब्दों का प्रयोग किया है । प्राचीन सांस्कृतिक शब्दों को वर्माजी ने भी अपनाया जिनके उदाहरण "एकलव्य" महाकाव्य में अधिक मात्रा में मिल सकते हैं । पंत ने संस्कृत के पूरे पूरे वाक्यों का भी प्रयोग किया है । संस्कृत के पूरे वाक्यों का प्रयोग "एकलव्य" में भी यत्रतत्र द्रष्टव्य है । इन कवियों ने ऐसे शब्दों का प्रयोग किया है जिससे नाद सौन्दर्य की सृष्टि हो जाय । उदाहरण के लिए निराला की निम्नलिखित पंक्तियों में ध्वन्यात्मक नाद - चमत्कार है -

"कण-कण कर, कंकण प्रिय,
किण-किण रव किंकिणी
रणन-रणन-नूपुर, उर लाज,
लौट रंकिणी"[2]

ऐसी ही पंक्तियाँ वर्माजी के "एकान्तगान" शीर्षक गीत में उपलब्ध है जिससे कल कल ध्वनि करते हुए बहनेवाली निर्झर की व्यंजना होती है -

"अविचल चल, जल का छल छल,
गिरि पर गिर गिर कर कल कल स्वर ।"[3]

चित्रविधान शैली इन कवियों की भाषा की विशेषता है । प्रमुख रूप से उनके चित्रांकन में सांस्कृतिक, मानवीकरण, और भावात्मक रूप मिलते हैं । प्रसाद, पन्त, निराला और महादेवी की रचनाओं में सांस्कृतिक रूप विधान के अनेक उदाहरण दृष्टिगोचर होते हैं । "लहर" के निम्नलिखित पंक्तियों में प्रसाद ने सांस्कृतिक रूपविधान प्रस्तुत किया है । रूपक की योजना द्वारा ब्रह्मवेला में पनघट पर एकत्रित नारियों का चित्र प्रस्तुत किया है जो अपने कलश द्वारा कुएँ से पानी खींचती है -

---

1. गजरे तारो वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 89.
2. गीतिका - सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला - पृ: 8.
3. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 9.

"बीती विभावरी जाग री !
अम्बर पनघट में डुबो रही -
तारा घट उषा नागरी ।"[1]

पंतजी ने "गुंजन"[2] में भारतीय संस्कृति का प्रतीक दुल्हिन का चित्रांकन किया है । "परिमल"[3] में निराला ने बहु का और महादेवीजी ने "यामा"[4] में पतिव्रता नायिका का रूपांकन किया है जो भारतीय संस्कृति के सर्वथा अनुकूल है । रामकुमार वर्माजी ने प्रातःकाल में अपने लाल रंग के किरणों को विकीर्ण करते हुए उदित होनेवाले सूरज का चित्रांकन करते समय सांस्कृतिक रूपविधान की योजना की है । आरती उतारना भारतीय संस्कृति का अंग है । लाल रंग से युक्त सूरज की तुलना आरती से की है -

"रवि कोर उठी प्राची में जैसे ॐ रूप,
किरणें फैली जैसे कि आरती गयी घूम ।"[5]

भारतीय संस्कृति के प्रतीक अन्य रूप विधान का अंकन उनके महाकाव्य "एकलव्य" और "ओ अहल्या" में उपलब्ध हैं ।

चित्रांकन का अन्य विधान है मानवीकरण। इसमें प्रमुख रूप से कवियों ने प्रकृति का नारीकरण ही अधिक किया है । निम्नलिखित पंक्तियों में पंतजी ने संध्या का मानवीकरण किया है -

"कहो, तुम रूपसि कौन?
व्योम से उतर रही चुपचाप
छिपी निज छाया छबि में आप,

---

1. प्रसाद ग्रंथावली - भाग-1 - पृः 236.
2. गुंजन - सुमित्रानंदन पंत - पृः 88-89.
3. परिमल - सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला - पृः 136.
4. यामा - महादेवी वर्मा - पृः 74.
5. ओ अहल्या - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृः 73.

सुनहला फैला केश-कलाप
मधुर, मंथर, मृदु, मौन !"[1]

निराला ने "परिमल" में संध्या सुन्दरी का चित्रांकन किया है ।[2] उसी प्रकार महादेवीजी ने "यामा" में संकलित "धीरे धीरे उतर क्षितिज" गीत में रजनी का नारीकरण प्रस्तुत किया है । वर्माजी ने भी नारी का रूपांकन किया है । एक स्थान पर प्रकृति को सृष्टिरथ को आगे बढ़ाकर आनेवाली सुन्दरी के रूप में, मेघावृत पूर्वदिशा को दुःखिनी माता के रूप में और रजनी को बाला के रूप में अंकित किया है ।

भावात्मक चित्र के अंतर्गत इन कवियों ने सौन्दर्य, वेदना, लज्जा, मुस्कान, आँसू आदि का अंकन किया है । पंतजी द्वारा अंकित लज्जा का रूप चित्र देखिए -

"लाज की मादक-सुरा-सी लालिमा
फैल गालों में, नवीन गुलाब-से,
छलकती थी बाढ़-सी सौन्दर्य की
अधखुले सस्मित-गढ़ों से, सीप-से ।"[3]

"आँसू" में प्रसादजी ने प्राकृतिक उपकरणों के माध्यम से वेदना का चित्रण किया है -

"बुलबुले सिन्धु के फूटे नक्षत्र मालिका टूटी
नभ मुक्ता कुन्तला धरणी दिखलाई देती लूटी ।"[4]

रामकुमार वर्माजी ने भी आशा, दुःख, निराशा और नश्वरता का चित्रांकन किया है । निम्नलिखित पंक्तियों में भावात्मक चित्र उपस्थित किया है -

---

1. युगपथ - सुमित्रानंदन पन्त - पृः 52.
2. परिमल - सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला - पृः 116.
3. ग्रंथि - सुमित्रा नंदन पन्त - पृः 100.
4. प्रसाद ग्रंथावली भाग-1 - पृः 202.

"मेरे दुःख में प्रकृति न देती
क्षण भर मेरा साथ,
उठा शून्य में रह जाता है,
मेरा भिक्षुक हाथ, "[1]

इसमें कवि के दुःख की पराकाष्ठा का अंकन है। कवि का दुःख देखकर प्रकृति क्षण भर भी उनका साथ नहीं देती है। अंतिम पंक्तियों से बेसहारा कवि का चित्र मूर्त बन गया है।

छायावादी कवियों की काव्यशैली की अन्य विशेषता है प्रतीक योजना। कविता में सूक्ष्म सौन्दर्य या उसकी अनुभूति को व्यक्त करने के लिए कवियों ने प्रतीकों का सहारा लिया है। इन कवियों की रचनाओं में प्रकृति क्षेत्र से गृहीत प्रतीकों की प्रचुरता है। प्रसादजी की "आँसू" से उद्धृत निम्नलिखित पंक्तियाँ प्रतीक योजना का सुन्दर उदाहरण है जिसमें कवि ने अशान्त और दुःखित मन की अभिव्यक्ति प्रकृति के प्रतीकों के सहारे अभिव्यक्त किया है -

"झंझा झकोर गर्जन था
बिजली थी, नीरद माला,
पाकर इस शून्य हृदय को
सबने आ डेरा डाला।"[2]

उपर्युक्त पंक्तियों में कवि ने तीव्र भावों के उमड़न के प्रतीक रूप में "झंझा" और पीड़ा के प्रतीक रूप में "बिजली" को गृहीत किया है। अधिकांश कवियों ने हृदय के प्रतीक रूप में "सागर" को लिया है। "वीणा" या "विपञ्ची" को भी हृदय के प्रतीक रूप में लिया गया है -

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 81.
2. प्रसाद ग्रंथावली - भाग-1 - पृ: 204.

"स्थित हूँ, प्रत्याशा में मैं तो प्राणधन !
शिथिल विपञ्ची मिली विरह संगीत से ।"[1]

"प्याली" को भी हृदय के प्रतीक रूप में अपनाया है । इन कवियों के अन्य प्रमुख प्रतीक है "पतझड़" जो जीवन की नीरवता और शुष्कता का प्रतीक है -

"पतझड़ था झाड़ खड़े थे,
सूखी-सी फुलवारी में,
किसलय नव कुसुम बिछाकर
आए तुम इस क्यारी में ।"[2]

"मधुकाल" को इन कवियों ने आनन्द, सुख और वैभव के प्रतीक रूप में गृहीत किया है -

"हो गया था पतझड़, मधुकाल
पत्र तो आते हाय, नवल !
झड़ गये स्नेह वृन्त के फूल,
लगा यह कैसा असमय फूल !!"[3]

कवि के जीवन में निराशा और दुःख का अन्त हो गया और उसको जीवन में सुख और आनन्द का अनुभव होने लगा । महादेवी के समान रामकुमार वर्माजी ने भी आँसू के प्रतीक रूप में "मोती" को अपनाया है -

"आँखों के कोष हुए हैं
मोती बरसाकर रीते ।"[4]

इसका तात्पर्य है कि आँसू बहाकर उनकी आँखें रिक्त हो गयी है । डॉ. वर्माजी ने आँसू के प्रतीक रूप में "मोती" को अपनाया है -

---

1. प्रसाद ग्रंथावली भाग-1 - पृ: 181.
2. वही - पृ: 206.
3. पल्लव - सुमित्रानंदन पन्त - पृ: 62.
4. यामा - महादेवी वर्मा - पृ: 10.

"उसमें होगा मेरी आँखों
के मोती का पानी ।"[1]

उपर्युक्त पंक्तियों में डॉ. वर्मा ने आँसू के प्रतीक रूप में आँखों की मोती को गृहीत किया है

रामकुमार वर्माजी ने "मधुमास" को आनन्द और सुख के प्रतीक रूप में ग्रहण किया है । कवि के दुःखी जीवन में प्रियतम के आगमन से आनन्द का अनुभव हुआ -

"यह तुम्हारा हास आया ।
इन फटे से बादलों में
कौन-सा मधुमास आया ?"[2]

"मधुमास" जीवन के आनन्द का प्रतीक है । वर्माजी ने "तरी" को जीवन के प्रतीक रूप में स्वीकार किया है । सांसारिक सागर में बहनेवाली नाव है मानवजीवन ।

"निस्पन्द तरी, अतिमन्द तरी ।
चल अविचल जल कल-कल पर
गुञ्जित कर गति की लघु लहरी ।
निस्पन्द तरी अति मन्द तरी ।"[3]

उन्होंने परमात्मा के प्रतीक रूप में दीपक को स्वीकार किया । वर्माजी ने एक नये प्रतीक को अपनाया है । उन्होंने नक्षत्र के प्रतीक रूप में काँच के टुकड़े का प्रयोग किया है -

"और काँच के टुकड़े बिखरा -
कर क्यों पथ के बीच,
भूले हुए पथिक-शशि को दुःख-
देता है नभ नीच ?"[4]

---

1. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 14.
2. वही - पृ: 191.
3. वही - पृ: 220.
4. वही - पृ: 80.

आसमान में बिखरे नक्षत्र के प्रतीक रूप में "काँच के टुकड़े" का प्रयोग किया है । यह प्रतीक वर्माजी की मौलिक उद्भावना है ।

छायावादी कवियों के अभिव्यंजना पक्ष की अन्य विशेषता है बिम्ब योजना । उनके बिंब विधान को दो रूपों में बाँटा जा सकता है - स्थूल संवेदनात्मक बिंब और सूक्ष्म संवेदनात्मक बिंब । स्थूल संवेदनात्मक बिंब के अन्तर्गत चाक्षुष बिंब, श्रावणिक बिंब, स्पर्श संबन्धी बिंब, घ्राण विषयी बिंब और मिश्रित बिंब आते हैं । छायावादी कवियों ने चाक्षुष बिंब का प्रयोग प्रचुर मात्रा में किया है । प्रसादजी ने "कामायनी" में श्रद्धा के शोणिम अधरों पर खेलनेवाली मधुर मुस्कान के प्रभाव-संवेदन को स्पष्ट करने केलिए संश्लिष्ट बिंब की योजना की है -

"और उस मुख पर वह मुसक्यान ।
रक्त किसलय पर ले विश्राम,
अरुण की एक किरण अम्लान
अधिक अलसाई हो अभिराम ।"[1]

"रक्त किसलय" से श्रद्धा के अधरों की लालिमा, "अरुण की अम्लान किरण" से मुस्कान की उज्वलता और "अलसाई हो" इससे अधरों पर ठहरनेवाली मुस्कान का एक स्पष्ट बिंब पाठक के मन में उभर आता है । जुगुनू एवं नक्षत्रों से प्रकाशित रात को मूर्तिमान करने के लिए महादेवी वर्माजी ने "नीरजा" में संश्लिष्ट बिंब की योजना की है और पंतजी ने "नौका विहार" शीर्षक कविता में संश्लिष्ट बिंब का सुन्दर संयोजन किया है ।

श्रावणिक बिंब शब्दों के नाद सौन्दर्य पर निर्भर है । प्रसाद और महादेवी की रचनाओं में पंत और निराला की अपेक्षा श्रावणिक बिंब की योजना विरल है । निराला की निम्नलिखित पंक्तियों में प्रयुक्त "थर-थर-थर" "झर-झर-झर" शब्द योजना अपने नाद सौन्दर्य से वर्ण्य विषय का बिंब उपस्थित करने में सफल हुआ है -

---

1. प्रसाद ग्रंथावली - भाग-1 - पृ: 289.

"द्रुम समीर-कम्पित थर-थर-थर
झरती धाराएँ झर-झर-झर
जगती के प्राणों में स्मर-शर
बेंध गये कसके !"[1]

उपर्युक्त शब्द हवा में हिलनेवाले पत्तों तथा झरती धाराओं का बिंब उपस्थित करने में सक्षम है ।

स्पर्श संबन्धी विषय के प्रभाव को मूर्तिमन्त करने के लिए स्पर्श संबन्धी बिंब उपस्थित कर देते हैं । छायावादी कवि स्पर्श संबन्धी बिंब उपस्थित करने में पटु है । उदाहरण के लिए पंतजी द्वारा रचित "नौका विहार" में गंगा के तरंगों पर पड़ी चाँदनी के कोमल स्पर्श का बिंब द्रष्टव्य है -

"साड़ी की सिकुड़न सी जिस पर
शशि की रेशमी विभा से भर ।"[2]

इन पंक्तियों में प्रयुक्त "शशि की रेशमी विभा" से गंगा की लहरों पर पड़े चाँदनी के कोमल और मृदुल स्पर्श का बिंब उपस्थित होता है ।

वस्तुतः वर्माजी की काव्य कृतियों में प्रसाद, निराला एवं महादेवी के समान सूक्ष्म संवेदनात्मक, समर्थ एवं संश्लिष्ट बिंबों का विधान प्रायः उपलब्ध नहीं होता । उदाहरणार्थ रामकुमार वर्मा की निम्न काव्य पंक्तियों में जिस बिंब का विधान हुआ है वह सूक्ष्म संवेदना जगाने में उतना समर्थ नहीं है -

"प्राची में रंगों का ऋतुराज !
स्वप्न-सदृश नभ की पलकों में,
झूला खिलकर आज !
प्राची में रंगों का ऋतुराज !"[3]

---

1. अपरा - सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला - पृ: 74.
2. गुंजन - सुमित्रानन्दन पन्त - पृ: 101.
3. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 51.

वर्माजी ने भारतीय सांस्कृतिक उपकरणों का सहारा लेकर प्राकृतिक बिंबों की योजना भी की है । आँसू भरे अहल्या की आँखों की तुलना अर्घ्य के लिए आवश्यक पानी से की है ।[1] उसी प्रकार इसी महाकाव्य में प्रातः काल में उदित सूरज का बिंब अंकित करने के लिए भी सांस्कृतिक बिंब की योजना की है ।[2] उनकी रचनाओं में अलंकारात्मक बिंबों के उदाहरण भी मिल सकते हैं । साधारणतया कवि काव्य बिंब के माध्यम से अमूर्त भाव या विचार को मूर्तता प्रदान करते हैं । ऐसे अमूर्त भावों को मूर्त बनाने में कवि सफल हुए हैं । कवि ने वेदना, आशा जैसे भावों को मूर्तता प्रदान की है । शब्द बिंब की योजना भी इनमें मिलते हैं । जहाँ कवि ने वर्षा का चित्रण किया है वहाँ उन्होंने "छम" शब्द को अर्थ से अतिभाराक्रान्त करके वर्षा की तीव्रता को व्यंजित किया है ।

रामकुमार वर्मा और प्रतिनिधि उत्तरछायावादी कवि - अनुभूति और अभिव्यक्ति पक्ष - साम्य - वैषम्य

पूर्व छायावादी कवियों के समान उत्तर छायावादी कवियों {भगवतीचरण वर्मा, नरेन्द्र शर्मा} में भी सौन्दर्य चित्रण उपलब्ध है । नारी सौन्दर्य का चित्रण इनकी रचनाओं में जिस प्रकार अभिव्यक्त हुआ है और डॉ. वर्मा तथा इन उत्तर छायावादी कवियों की सौन्दर्य भावना का एक तुलनात्मक अध्ययन आगे प्रस्तुत करेंगे ।

"प्रेम संगीत" में भगवतीचरण वर्मा की सौन्दर्य भावना की अभिव्यक्ति हुई है । इसमें कवि ने रूप और यौवन युक्त नायिका का सौन्दर्य चित्रण प्रस्तुत किया है -

"तुम मृगनयनी, तुम पिक बयनी
तुम छवि की परिणीता-सी
अपनी बेसुध मादकता में
भूली-सी भयभीता-सी ,"[3]

---

1. ओ अहल्या - डॉ॰ रामकुमार वर्मा - पृ: 52.
2. वही - पृ: 73.
3. विस्मृति के फूल - भगवतीचरण वर्मा - पृ: 117.

इसमें लज्जायुक्त नायिका की अरुण कपोलों का भी वर्णन है । साधारण रूप में कविजन अपनी नायिका के सौन्दर्य में प्रकृति के सौन्दर्य और गुण का आभास पाता है और प्रकृति की हर सुन्दर वस्तु से उसकी उपमा की जाती है । लेकिन भगवतीचरण वर्माजी की सौन्दर्य भावना की विशेषता है कि उसकी नायिका ने आसमान को अपनी लालिमा प्रदान की/ कलरव को अपना राग दिया, मलयानिल को अपना सौरभ प्रदान किया -

"अम्बर की लाली को उस दिन
तुमने ही था अनुराग दिया ,
तुमने उषा को अपनी छवि,
कलरव को अपना राग दिया ,
अपना प्रकाश रवि-किरणों को,
अपना सौरभ मलयानिल को,
पुलकित शतदल को तुमने ही
प्रिय, अपना मधुर पराग दिया ।"[1]

"मानव" में कवि ने नवबाला के शारीरिक सौन्दर्य वर्णन के साथ उसके आन्तरिक सौन्दर्य-भोलेपन तथा प्रेम - का भी सामंजस्य किया है -

"कवि लिखने बैठा-नवबाला
जिसकी आँखों में भोलेपन,
जिसके उभरे वक्षस्थल में
अज्ञात प्रेम का नव-स्पन्दन ।"[2]

नायिका के भाव सौन्दर्य का वर्णन "प्रेम संगीत" में भी अभिव्यक्त हुआ है जिसमें लज्जा और यौवन युक्त नायिका का सौन्दर्य चित्रण हुआ है -

---

1. विस्मृति के फूल - भगवतीचरण वर्मा - पृ: 8.
2. वही - पृ: 18.

"अरूण कपोलों पर लज्जा की
भीती-सी मुस्कान लिए ,
सुरभित श्वासों में यौवन के
अलसाए से गान लिए ।"[1]

इस प्रकार भगवतीचरण वर्मा की कविता में सौन्दर्य के दोनों पक्षों - शारीरिक और आन्तरिक - का चित्रण हुआ है ।

नरेन्द्र शर्मा की रचनाओं में नारी सौन्दर्य चित्रण देख सकते हैं । कवि ने "प्रवासी के गीत" में आँखों की तुलना मीन से की है -

"नयन-मीन ये क्या पल पर भी
अश्रु - नीर बिन जी न सकेंगे ?"[2]

सौन्दर्य और शील की प्रतिमूर्ति नारी के चरणों में कवि अपने को आत्मसमर्पण करके सुख का अनुभव करते हैं । उन्होंने "प्रवासी के गीत" में यह स्वीकार किया है कि अपने गीतों के लिए वह प्रिया के नयनों के प्रति आभारी है -

"मैं आज दे रहा हूँ वाणी, जिन भावों को लिख गीत मधुर,
है उनके हित ही चिर कृतज्ञ, उन नयनों के प्रति मेरा उर ।"[3]

कवि आँखों के सौन्दर्य में आसमान की विशालता और सिन्धु की गहराई का दर्शन करते हैं। एक स्थान पर कवि को आँखों में चाँदनी के समान शुभ्र हास का अनुभव होता है । "पलाशवन" में कवि ने नारी सौन्दर्य का चित्रण किया है । नायिका का सौन्दर्य सोने के रंग से उजली और सरसों के फूलों से हल्की है। नायिका चन्द्रमा की प्रतनु किरण के समान है और ओस बूँद के समान निर्मल और पवित्र है -

---

1. विस्मृति के फूल - भगवतीचरण वर्मा - पृ: 118.
2. प्रवासी के गीत - नरेन्द्रशर्मा - पृ: 20.
3. वही - पृ: 35.

"तुम सोने के रंग से उजली, सरसों के फूलों से हल्की,
तुम प्रतनु-किरण चन्दा की ज्यों, निर्मलज्यों बूँद तुहिन जल की ।
मेरे सूने जीवन नभ की तुम विरल चाँदनी रत्न कनी
उर सीपी के मोती । तुम से मोती में मुक्ताभा झलकी ।"[1]

कवि के नीरस जीवन-नभ की विरल चाँदनी है और वह उनके हृदय रूपी सीपी की मोती है

उत्तर छायावादी कवियों की सौन्दर्य भावना के संबन्ध में विचार करें तो यह स्पष्ट हो जाता है कि इन कवियों में पूर्व छायावादी कवियों के समान सौन्दर्य भावना की व्यापकता कम है । इन कवियों ने भी नारी सौन्दर्य का चित्रण किया है । पूर्व छायावादी कवियों में नारी के अंग प्रत्यंग का चित्रण नाममात्र के लिए है । इस दृष्टि से विचार करें तो यह स्पष्ट हो जाता है कि भगवतीचरण वर्मा और नरेन्द्र शर्मा के सौन्दर्य चित्रण के साथ डॉ. वर्मा के सौन्दर्य चित्रण में समानता है । इन तीनों कवियों ने नारी सौन्दर्य चित्रण बहुत कम ही किया है । शायद यह उत्तर छायावादी कवियों में दर्शित भावगत विशेषता होगी । जिस प्रकार डॉ. वर्मा की रचनाओं में आन्तरिक सौन्दर्य के उदाहरण उपलब्ध हैं उसी प्रकार आन्तरिक सौन्दर्य का चित्रण भगवतीचरण वर्मा की रचना में दृष्टिगत होता है । नूरजहाँ के आन्तरिक सौन्दर्य भोलेपन का चित्रण "रूपराशि" में संकलित "नूरजहाँ"[2] शीर्षक कविता में और "एकलव्य"[3] महाकाव्य में भीष्म की धर्म-नीति, ब्रह्मचर्य, मन की विशालता जैसे आन्तरिक भाव सौन्दर्य का चित्रण उपलब्ध है ।

भगवतीचरण वर्मा की रचनाओं में प्रेयसी भावना की अभिव्यक्ति हुई है । "प्रेम संगीत" में उनकी प्रेयसी भावना की स्पष्ट झलक दर्शित होती है । उनकी प्रेयसी "मृगनयनी" और "पिकबयनी" है । वह अंधकार में विद्युत की रेखा के समान है और

---

1. पलाशवन - नरेन्द्र शर्मा - पृ: 4.
2. गजरे तारों वाले - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 78.
3. एकलव्य - वही - पृ: 29-30.

असफलता के पट पर अंकित आशा की लेखा के समान है । कवि के अनुसार संयोग तो क्षणिक है । इसलिए वे नायिका से पल भर साथ साथ बह लेने का अनुरोध करते हैं । उसे एकाकीपन बहुत दुःसह लग रहा है । इसलिए वे पल भर के लिए भी उसका मिलन चाहते हैं -

"पर दुःसह है, अति दुःसह है -
एकाकीपन का भार प्रिये !
पल-भर हम-तुम मिल हँस-खेलें,
आओ कुछ ले लें औ दे लें !"[1]

कवि प्रेमिका से यही आग्रह प्रकट करते हैं कि "फिर धीरे से इतना कह दो, तुम मेरी ही दीवानी हो !"[2] वे प्रेमिका को अपने जीवन की रानी मानते हैं । प्रेयसी के मिलन और संयोग के लिए उनके मन में उत्कट इच्छा है । प्रिया से यही अनुरोध करता है कि वह अपने प्यासे अधरों से प्यासे अधरों का मोल कर लें -

"कर लो निज प्यासे अधरों से
प्यासे अधरों का मोल प्रिये ।"[3]

वह प्रेमिका से इस प्रकार मिलना चाहता है जैसे दोनों मिलकर एक हो जायें -

"आज नयनों में भरा उत्साह हैं,
आज उर में एक पुलकित चाह हैं,
आज श्वासों में उमड़कर बह रहा
प्रेम का स्वच्छन्द मुक्त प्रवाह है,
डूब जायें देवि, हम-तुम एक हो ।
आज मनसिज का प्रथम अभिषेक हो ।"[4]

---

1. विस्मृति के फूल - भगवतीचरण वर्मा - पृः 123.
2. वही - पृः 127.
3. वही - पृः 133.
4. वही - पृः 139.

मादक संयोग शृंगार के चित्र प्रस्तुत करने में कवि कोई संकोच नहीं करते । "यह तन्मयता की बेला है, यह है संयोग की रात प्रिये" जैसे गीत में प्रेम के शृंगारिक चित्रण स्पष्ट रूप से अभिव्यक्त हुए हैं । संयोग की उत्कट इच्छा प्रकट करते हुए कवि कहते हैं -

"तुम आदि-प्रकृति, मैं आदि पुरुष ,
निशि-बेला शून्य अथाह प्रिये !
तुम रतिरत, मैं मनसिज सकाम,
यह अन्धकार है चाह प्रिये ।"[1]

प्रेमिका के मिलन की इच्छा प्रकट करते हुए जो पंक्तियाँ लिखी हैं उनमें शृंगार की ऐन्द्रियता मांसलता और मादकता है -

"प्राणों का होगा आज मिलन
कम्पित हैं पुलकित गात प्रिये !
तुम सम्मोहिनि, मैं विसुध स्वप्न ,
यह है संयोग की रात प्रिये !"[2]

"प्रवासी के गीत" में प्रेमिका के विरह से दुःखी कवि नरेन्द्र शर्मा की कातर उक्तियाँ ही अभिव्यक्त हुई है । उनका विश्वास है कि इस जीवन में उनकी प्रेमिका का मिलन नहीं होगा । आज से दोनों प्रेम योगियों को विरही बनकर रहना पड़ेगा -

"आज के बिछुड़े न जाने कब मिलेंगे'
आज से दो प्रेम योगी अब वियोगी ही रहेंगे ।
आज के बिछुडे न जाने कब मिलेंगे'"[3]

----

1. विस्मृति के फूल - भगवतीचरण वर्मा - पृ: 141.
2. वही - पृ: 140.
3. प्रवासी के गीत - नरेन्द्र शर्मा - पृ: 15.

वे प्रेमिका से यहीकहते हैं कि अब उसे आँख भर कर देख लो फिर कभी वे न आयेंगे । हर पल आँसू बहाकर रहना व्यर्थ है । इसलिए वियोगी हृदय को हँसना सिखाना है। आज से हम दोनों को एक ही नभ के सितारे गिनकर रहना पडेगा । उन्हें अपनी प्रिया से हुए अन्तिम मिलन की याद आती हैं - प्रेयसी तो अपने शीश को कंधे पर धर कर बैठी थी और उनके घने केशों से प्रेमी का शरीर घिरा हुआ था । वह क्षीण स्वर में बोला अब कब मिलेंगे' -

आह, अन्तिम रात वह, बैठ रही तुम पास मेरे,
शीश कंधे पर धरे घन कुन्तलों से गात घेरे,
क्षीण स्वर में कहा था "अब कब मिलेंगे'-"[1]

इस क्षण की स्मृति उसके मन में पीड़ा उत्पन्न करती है । उस बिछुड़न के समय प्रेमी को विरह-कातर देखकर अपनी आँसू भरी आँखों से बिदा देते समय उसने कहा था - "प्राण, मुझको भूल जाओ !" कवि यह अनुभव करते हैं कि प्रेमिका को भूल जाना असंभव है । संयोग वेला की याद उनकी आँखों में स्वप्न बनकर नाच उठती है । प्रेमिका के विरह से उत्पन्न प्रेमी की कातर उक्तियाँ इसमें बिखरी पड़ी हैं । प्रेमिका का नाम जपकर, आँसूओं का अर्घ्य देकर मन में प्रिया की मूर्ति बनाकर उनका पूजन करते रहते हैं ।[2] प्रेमिका से कहते हैं कि जब तुम्हें मेरी याद आ जाएँ तब अपनी आँखों को न भर लेना । वे प्रेमिका को कई रूपों में - दासी, स्वामिनी, आराध्य, आराधिका सहचरी, भार्या - मानते हैं -

"क्रीत दासी, स्वामिनी, आराध्य हो, आराधिका भी,
प्राण-मोह कृष्ण हो तुम, शरण-अनुगत राधिका भी
भक्ति की कृति हो स्वयम् फिर भक्त की प्रतिपालिका भी ।"[3]

---

1. प्रवासी के गीत - नरेन्द्र शर्मा - पृ: 16.
2. वही - पृ: 17.
3. वही - पृ: 24.

जिन स्थानों पर कवि अपनी प्रेमिका के साथ हुए मधुर क्षणों की यादें अभिव्यक्त करते हैं उन स्थानों पर प्रेम की मादकता का चित्रण उभर आता है । उनका श्रृंगार चित्रण संयमित नहीं है -

"कैसा था अद्भुत अपूर्व वह
महानन्द का एक अमर क्षण,
विश्व भर गया था जब मधु से
क्षण भर का यह प्रेमालिङ्गन !
तीव्रश्वास, पुलकाकुल स्वेदित
शिथिल गात, मधुरात अचेतन,
प्राणों में जब भेद नहीं था,
एक हो गये थे दोनों तन !"[1]

जैसी पंक्तियों में प्रेम का श्रृंगारिक वर्णन अपनी सीमा पार कर चुके हैं । उनकी प्रेमिका सोने के रँग से उजली, सरसों के फूलों से हल्की है । वह उनके सूने जीवन रूपी आसमान की विरल चाँदनी है, हृदयरूपी सीपी की मोती है । वे प्रेमिका के शरीर में सृष्टि के सारे सौन्दर्य का दर्शन करते हैं । प्रेमिका से यही इच्छा प्रकट करती है कि हम दोनों सारस की जोड़ी के समान निकल चलें -

"खुली हवा है, खिली धूप है,
दुनिया कितनी सुन्दर, रानी !
आओ सारस की जोडी-से
निकल चले हम दोनों प्राणी ।"[2]

समाज की वेश्या और भिखारिन की ओर भी नरेन्द्र का ध्यान आकृष्ट हुआ है । समाज तो वेश्या को नागिन समझ कर उसे दूर हटाता है । उसमें केवल दोष का ही दर्शन करता है

---

1. प्रवासी के गीत - नरेन्द्र शर्मा - पृ: 17.
2. पलाशवन - वही - पृ: 11.

कवि वेश्या को गुलाब के विमल फूल समझते हैं जो काँटों की कुटिल डाल में खिलती रहती है । कवि वेश्या को बहन का सम्मान देना चाहते हैं और उसके मस्तक पर चुम्बन अंकित करना चाहते हैं । इतना ही नहीं कवि उसे लक्ष्मी और देवी जैसे संबोधन भी करते हैं । कवि ने दीन-हीन भिखारिन के प्रति भी अपनी सहानुभूति प्रकट की है ।

"द्रौपदी" खण्डकाव्य में कवि ने भारतीय नारी के प्रति अपनी श्रद्धा और सम्मान प्रकट किया है । इसमें कवि ने द्रौपदी को नारी-शक्ति के एक शाश्वत प्रतीक के रूप में चित्रित किया है । नारी के प्रति पूर्व छायावादी कवियों के मन में जो प्रेम और श्रद्धा का भाव निहित है वही भाव उत्तरछायावादी कवि डॉ. वर्मा और नरेन्द्र शर्मा की रचनाओं में प्रकट हुआ है । "कामायनी" में प्रसाद ने नारी को पुरूष की प्रेरणा शक्ति के रूप में चित्रित किया है । नारी के प्रति अपना सम्मान प्रकट करते हुए प्रसादजी ने लिखा है -

"नारी तुम केवल श्रद्धा हो विश्वास-रजत-नग पद तल में,
पीयूष-स्रोत-सी बहा करो जीवन के सुन्दर समतल में ।"[1]

नारी के प्रति इसी सम्मान भावना से प्रभावित होकर डॉ. वर्मा ने "ओ अहल्या" में नारी का कीर्तिगान किया है । कवि नारी में शक्ति और भक्ति का दर्शन करते हैं ।[2] इन कवियों की नारी भावना से मिलती जुलती भावना नरेन्द्रजी की रचनाओं में देख सकते हैं । कवि ने द्रौपदी को भारतीय नारी के प्रतीक रूप में अपनाकर उसे जीवनीशक्ति कहा है । नारी पुरूष की विजय और पराजय का मूल्य चुकाती है । एकाकी नर अपना सांसारिक-सागर पार करने में असमर्थ रहता है । इस अगम धरा में नर की नय्या है नारी । इस जल धारा में नर के लिए वह आरा चलाती है । नारी नर की शक्ति है । दुःख सहने की शक्ति भी वही प्रदान करती है -

----

1. प्रसाद ग्रंथावली - भाग-1 - पृ: 306.
2. ओ अहल्या - डॉ. रामकुमार वर्मा - पृ: 20.

"है दुस्साध्य अगम धरा में,
नारी, नर की नयुया,
नर के लिए चलाती नारी,
जल धारा पर आरा
नारी नर की शक्ति, शक्ति है ,
जिसकी दुःख सहने में ।"[1]

वे नारी में कृत्या, मृत्यु, उर्वशी, जननी, पुत्री, माया सभी के दर्शन करते हैं ।

भगवतीचरण वर्मा और नरेन्द्र शर्मा के समान डॉ. वर्माजी की रचनाओं में नारी भावना की अभिव्यक्ति हुई है । नारी को प्रेयसी के रूप में अपनाकर इन कवियों ने जो भावनायें प्रकट की हैं इसमें शृंगार की मादकता और ऐन्द्रियता की अभिव्यक्ति स्पष्ट झलकती हैं । इन्होंने अपनी प्रेयसी भावना को अभिव्यक्त करने में संकोच का अनुभव नहीं किया । डॉ. वर्माजी की प्रेयसी भावना अत्यन्त संयमित है । डॉ. वर्माजी भी प्रेमिका के मिलन के लिए उत्सुक रहते हैं और एक शान्त किरण के समान उनके मन में आ जाने का अनुरोध करते हैं । कवि के मन में प्रिया के सामीप्य की इतनी इच्छा है जैसे दोनों नक्षत्र पास पास रहकर टिमटिमाते रहते हैं । लेकिन भगवतीचरण वर्मा ने प्रेमिका के मिलन की इच्छा प्रकट करते हुए जो भाव प्रकट किया है इसमें शृंगार की मादकता है । उसी प्रकार नरेन्द्र शर्मा ने जिन स्थानों पर प्रेमिका के साथ हुए मधुर क्षणों की यादें अभिव्यक्त किया उन स्थानों पर प्रेम की मादकता है । जहाँ भगवतीचरण वर्मा और नरेन्द्र शर्मा ने नारी को प्रेयसी के रूप में अपनाकर जो भावनायें प्रकट करते समय शृंगार की सीमा पार किया है वहाँ डॉ. वर्माजी ने संयमित रूप से अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति की है । नरेन्द्र शर्मा समाज की वेश्या और भिखारिन की ओर सहानुभूति प्रकट करते हुए उसे लक्ष्मी और देवी जैसे संबोधन कर उसके सम्मान करने का आह्वान देते हैं । नारी के अपमान की समस्या इस युग के कवियों का विषय रहा । डॉ. वर्मा ने भी इस समस्या को अपना विषय बनाया है और टूटी कली के माध्यम से इस समस्या को व्यक्त किया है । एक

---

1. द्रौपदी - नरेन्द्र शर्मा - पृ: 42-43.

टूटी कली की भाँति भारत में नारी का अपमान हो रहा है ।[1] नारी के प्रति श्रद्धा और सम्मान का भाव डॉ. वर्माजी के समान नरेन्द्र शर्मा के काव्य में भी उपलब्ध है ।

भगवतीचरण वर्मा की रचनाओं में राष्ट्रीय भावना की अभिव्यक्ति आर्थिक दुर्दशा के रूप में प्रकट हुई है । कवि ने "भैंसागाडी" के माध्यम से किसानों की आर्थिक दुर्दशा और उनके शोषण का चित्रण किया है । किसान जो हैं भूखे हैं, उन्हें पेट भर खाने के लिए खाना नहीं मिला है, उनके बच्चे जो हैं वे भी गरीबी के प्रतीक हैं -

"वे भूखे, अधखाए किसान
भर रहे जहाँ सूनी आहें
नंगे बच्चे, चिथडे पहने
माताएँ जर्जर डोल रहीं
है जहाँ विवशता नृत्य कर रही
धूल उडाती हैं राहें ।"[2]

ग्रामीण जीवन की विवशता का चित्रण इसमें अंकित हुआ है । कवि ने उनके कच्चे घर की तुलना फोडों से की है । समाज के धनी वर्ग-व्यापारी, जमींदार तो उनका शोषण कर रहा है । वे मनुष्य का उष्ण रक्त पीते हैं । मनुष्य तो पशु बनकर पिस रहे हैं । "मानव" की एक अन्य कविता में भी उन्होंने आर्थिक विषमता का वर्णन किया है ।[3]

भगवतीचरण वर्मा के अछूतोद्धार भावना की अभिव्यक्ति "हिन्दू" कविता के माध्यम से हुई है । अछूत का स्पर्श करना और इनके पास जाना पाप है । यह कैसे विश्वास कर सकते हैं कि सज्जन तो श्रेष्ठ है' दूषित अङ्ग को काटकर फेंकना है।इसका उपचार मत करना यही सार है कि मिटनेवाला मिटने का है -

---

1. आज के लोकप्रिय हिन्दी कवि रामकुमार वर्मा - सं. राधेकृष्ण श्रीवास्तव - पृ: 53.
2. विस्मृति के फूल - भगवती चरण वर्मा - पृ: 50.
3. वही - पृ: 41.

"अरे तो इतने कोटि अछूत
तुम्हारे बै कौडी के दास ।
दूर है छूने की है बात,
पाप है आना इनका पास
किन्तु फिर भी हो सज्जन श्रेष्ठ,
अरे पापी कैसा विश्वास'
"दूषिताङ्ग को काट फेंकना" मत करना उपचार-
मिटनेवाले मिटने का है बस इतना ही सार ।"[1]

नरेन्द्र शर्मा ने देश के स्वर्णिम भविष्य की आशा 15 अगस्त सन् 1947 ई. में प्रकट किया है - अभी तक भारत में गरीबी थी, निरक्षरता थी । अब वह अंधकारपूर्ण रात चल गई । अब धरती शाप-पाप से मुक्त हो रही है । अब देश में कोई दुःखित और पीड़ित व्यक्ति न रहें । आज देश यह पवित्र वर माँगता है कि फिर देश में दास न बनें -

"अन्न-वस्त्र-हीन दीन थी निरक्षरा,
भस्मसात्-थी हिरण्यमयी वसुन्धरा ,
xx xx xx
किन्तु अब तिमिर मयी निशा चली गई ,
शाप मुक्त, पापमुक्त , हो रही मही ।
xx xx xx
आज देश माँगता पवित्र एक वर
दास फिर बनें न कभी पुत्र दास के ।"[2]

---

1. विस्मृति के फूल - भगवतीचरण वर्मा - पृ: 225.
2. अग्नि शस्य - नरेन्द्र शर्मा - पृ: 48.

नरेन्द्रजी ने भारत के उन महान् राष्ट्रप्रेमियों का कीर्तिगान किया है जिन्होंने भारत के अभ्युदय के लिए परिश्रम एवं त्याग किया है। कवि ने युग नेता नेहरू, गाँधीजी और स्वर्गीय सरदार का यशोगान किया है। भारतीयों के हृदय-सिंहासन पर आसीन युगनेता जवाहर का प्रणाम किया है। "अग्नि शस्य" में उन्होंने स्वर्गीय पटेल का प्रणाम किया है जो लौह-लाट के समान विराट पौरुष का प्रतिरूप भू-जन-सेवक था।[1]

हम यह देख सकते हैं कि भगवतीचरण वर्मा और नरेन्द्रशर्मा की रचनाओं में राष्ट्रीय भावना की अभिव्यक्ति प्रमुख रूप से वर्तमान सामाजिक समस्याओं-छुआछूत, आर्थिक कठिनाई - के माध्यम से हुई है। नरेन्द्र शर्मा ने भारत के महान् युग नेताओं के प्रति अपना आदर प्रकट करते हुए राष्ट्रीय भावना की अभिव्यक्ति की। इनमें भारत-माता की वन्दना तथा कीर्तिगान का अभाव है। लेकिन डॉ. वर्मा ने भारत माता की वन्दना करते हुए उसके प्रति अपनी भक्ति को अभिव्यक्त किया है। नरेन्द्र शर्मा और भगवतीचरण वर्मा में इसका सर्वथा अभाव है। डॉ. वर्मा ने अतीत के महान् नेताओं को अपने काव्य का विषय बनाया है जिन्होंने देशरक्षा हेतु प्राणोत्सर्ग किया है। वर्तमान दुर्दशा का वर्णन नरेन्द्र शर्मा और भगवतीचरण वर्मा के समान रामकुमार वर्माजी की रचनाओं में भी उपलब्ध है। लेकिन भगवतीचरण वर्मा और नरेन्द्र शर्मा ने राष्ट्रीय भावना की अभिव्यक्ति के लिए प्रमुख रूप से वर्तमान दुर्दशा को माध्यम बनाया है।

भगवतीचरण वर्मा और नरेन्द्र शर्मा की रचनाओं में दार्शनिक विचारधारा की अभिव्यक्ति मिलती है। भगवतीचरण वर्मा के अनुसार प्रति विपल में मृत्यु और जीवन छिपा रहता है। उनके अनुसार जीवन तो अत्यन्त क्षणिक है -

"जीवन तो छोटा सा क्षण-
क्षण भर का छोटा सा क्षण।"[2]

संसार में प्रतिकाल जीवन और मरण का अभिनय होता है और यहाँ की हर वस्तु परिवर्तन-शील है -

---

1. अग्निशस्य - नरेन्द्र शर्मा - पृ: 124.
2. विस्मृति के फूल - भगवतीचरण वर्मा - पृ: 173.

"जीवन और मरण का अभिनय होता है प्रतिकाल,
और यहाँ के प्रतिकण में है परिवर्तन की चाल ।"[1]

वे जगत् को मिथ्या तथा नश्वर मानते हैं और समय को गुरुतर सत्य । सकल नश्वर विश्व समय की अवहेलना कर रहा है -

"जगत्-मिथ्या तथा नश्वर,
समय ही तो एक गुरुतर सत्य ।"[2]

उनके अनुसार "गति ही जीवन है और गतिहीनता ही मृत्यु है ।"[3]

कवि यह अनुभव करते हैं कि प्रेम की तृप्ति असंभव है । यह प्यास बुझ न सकी है और बुझ न सकेगी । "विस्मृति के फूल" में उन्होंने जीवन की परिभाषा प्रस्तुत की है कि यह संसार वासनाओं से भरा हुआ है, हर व्यक्ति को भ्रम से बंधित किया है । यहाँ आदि से अन्त तक रुदन है और एक अनियन्त्रित हाहाकार सुनाई पडता है और इसी को जीवन कहते हैं ।[4] उनके अनुसार "जीवन स्वयं है एक विप्लव"[5] हमारे जीवन में भयानक विषमता उत्पन्न करनेवाले तत्व हमारा दुःख और सुख ही है । उनके अनुसार जीवन का सौन्दर्य असीमता की ओर अग्रसर होने में है ।"[6]

नरेन्द्र शर्मा जी ने ब्रह्म, जीव तथा माया के संबन्ध में अपनी काव्य रचनाओं में विचार प्रकट किया है । उन्होंने ब्रह्म को सृष्टि का मूल कारण, ईश्वर, पुरुषोत्तम, नारायण आदि नामों से संबोधित किया है और उन्हें सृष्टि के नियामक के रूप में स्वीकार किया है -

----

1. विस्मृति के फूल - भगवतीचरण वर्मा - पृ: 210.
2. एक दिन - वही - पृ: 29.
3. प्रेम संगीत - "दोशब्द" - वही - पृ: 14.
4. विस्मृति के फूल - वही - पृ: 223.
5. एक दिन - वही - पृ: 54-55.
6. वही - पृ: 117.

"वह चिर-अभिनव, चिर-पुरातीन,
वह सृजन शक्ति का आदि बिन्दु !
वह महाप्राण, तेजस महान्
बुद् बुद् रवियों का ज्योति सिन्धु !"[1]

वे परब्रह्म को पूर्णकाम मानते हैं जो अनिवार निष्काम काम करते हैं । पाशबद्ध करने में असमर्थ सृष्टि का एक समर्थ सृष्टा है । वे सारी सृष्टि का केन्द्र है । उनके ही चारों ओर सृष्टि का अणु घूमते रहते हैं जो उनकी ही प्रेरणा से संभव है । कवि उन्हें वेद-निर्वेद और ज्ञान-अज्ञान का समन्वित रूप मानते हैं -

"पूर्णकाम वह, जो निष्काम काम करता अनिवार ,
पाशबद्ध असमर्थ सृष्टि सब, सृष्टा एक समर्थ !
xx xx xx
सृष्टा एक अनेक बना है, केन्द्र बना है वृत्त ,
वेद वही, निर्वेद वही, है वही ज्ञान-अज्ञान ।"[2]

नरेन्द्र की मान्यता यह है कि संसार की सारी वस्तुओं में उस परब्रह्म के प्रभाव पड़ने के कारण वे चेतनशील बन जाते हैं । धरती के कण-कण में सूरज की किरण के समान उसका प्रवेश होता है और हर कण चेतन बनकर मुसकाता है ।[3] वे जीव को पंच तत्वों से निर्मित मानते हैं । "अग्निशस्य" में उन्होंने इन पाँच तत्वों की वन्दना की है । पाँच पाण्डवों को कवि ने पंच तत्वों के प्रतीक रूप में "द्रौपदी" खण्डकाव्य में चित्रित किया है । पार्थिव होने के कारण वह मृत्तिका पात्र है, इसी कारण मृत्यु उससे क्रीड़ा करती है । जीवन तो एक खेल है जिसका खिलौना है मानव । देवता और दानव उसे दाव पर लगाकर खेल खेलते हैं ।[4] कवि ने जीवात्मा को "प्राणों के हंसावर" कहके उसे सावधान किया है कि

---

1. अग्नि शस्य - नरेन्द्र शर्मा - पृ: 38.
2. प्यासा निर्झर - वही - पृ: 121.
3. अग्नि शस्य - वही - पृ: 94.
4. द्रौपदी - वही - पृ: 3.

इस जगत में वह अपना शाश्वत नीड़ मत बना लें । उसे गतिशील रहने का आह्वान देते हैं ।[1] "पनिहारिन" शीर्षक कविता में कवि "पनिहारिन" को जीवात्मा का प्रतीक मानते हैं । वह परमात्मा की प्राप्ति के लिए निरन्तर प्रयत्नशील है । जीवन में निरन्तर दुःख भोगना पड़ा फिर भी वह अपने साधना मार्ग पर अटल है । परमात्मा से बिछुड़न होने पर वह सदैव दुःख का अनुभव करती है । किन्तु उस दुःखी जीवन से जीवन के संबन्ध में कुछ दार्शनिक तत्व ग्रहण करती हुई वह अपने प्रियतम की बाट जोहती रहती है ।

नरेन्द्र शर्मा ने माया के संबन्ध में अपना विचार प्रकट किया है । हर सांसारिक प्राणी माया के वशीभूत हो जाते हैं । माया के प्रभाव के कारण पहले उसे रूप का प्रकाश दिखाई पड़ता है। फिर उसे मटमैली काया का पहचान होता है । माया अपनी दुहरी शोभा दिखाकर हर इन्सान को मोहमुक्त कर देती है –

"दिखती पहले धूप रूप की,
दिखती फिर मटमैली काया ।
दुहरी झलक दिखाकर अपनी
मोहमुक्त कर देती माया ।"[2]

माया के कारण ही हर व्यक्ति अपना-पराया का भाव रखता है । वह माया जो हर व्यक्ति के मन में अपना प्रभाव छोड़ती रहती है । वह श्रीहरि की दासी है । इसलिए कवि इस सहस्र रूपा को राममयी कहकर शीश झुकाते हैं ।[3] नरेन्द्र शर्मा के काव्य में पीड़ा एवं नियति का बड़ा महत्वपूर्ण स्थान है । पीड़ा के संबन्ध में उनकी मान्यता यह है कि "पीड़ा प्राणी की गरीयसि शिक्षिका है ।"[4] संसार में हर व्यक्ति पीड़ा के वशीभूत हो जाते हैं । जीवन में व्यक्ति को पीड़ा अवश्य भुगतना पड़ता है । जन्म से लेकर मृत्यु तक हर प्राणी का जीवन तरह तरह की पीड़ाओं से गुज़रता जा रहा है । स्वयं कवि के शब्दों

---

1. प्यासा निर्झर – नरेन्द्र शर्मा – पृ: 21.
2. वही – पृ: 128.
3. वही – पृ: 129.
4. उत्तरजय – "भूमिका" – वही – पृ: 3.

में - "प्राणी पीड़ा के वशीभूत है । जीवन है, तो पीड़ा अवश्य है । पीड़ा से बचना अतिपीड़ा को न्योता देना है ।"[1] पीड़ा ही, पाप, शाप और ताप का रूप धारण करती है ।[2] हर व्यक्ति को जीवन में नियति के अनुसार फल भोगना पड़ता है ।

भगवतीचरण वर्मा और डॉ. रामकुमार वर्मा ने जीवन की क्षणिकता के संबन्ध में अपना विचार प्रकट किया है । जब भगवतीचरण वर्मा ने जीवन को आदि से अन्त तक रुदन कहा है तब डॉ. वर्मा ने जीवन को पीड़ा, संघर्ष और दुःख का अभिनय और सुख-दुःख की छाया माना है । सांसारिक नश्वरता के संबन्ध में उन्होंने अनेक स्थानों पर विचार किया है । डॉ. रामकुमार वर्मा और नरेन्द्र शर्मा ने माया के संबन्ध में अपना विचार प्रकट किया है । जब डॉ. वर्मा ने माया के कारण अपने को परमात्मा के साक्षात्कार करने में असमर्थ और माया से दूर रहने की इच्छा प्रकट की है तब नरेन्द्र शर्मा ने माया को श्रीहरी की दासी मानकर उनकी वन्दना की है ।

नरेन्द्र शर्मा की रचनाओं में मानवतावादी विचारधारा की अभिव्यक्ति हुई है । कवि का विश्वास यह है कि आज प्रभुता की प्यास होने के कारण मनुष्य पशु के समान हो गया है । उसके मन में सारे विश्व को अपने अधीन बनाने की कामना है -

"प्यास प्रभुता की, नहीं क्षमता
अहम् को जीतने की
दर्पमति दर्पण रचित पशु से
तुम्हारा सामना है ।"[3]

कवि यही चाहते हैं कि मानव को परस्पर घृणा और द्वेष को छोड़ कर स्नेह के सहारे आगे बढ़ना है । परस्पर रिपु न होकर सहयोग-सहचर की भावना से अपने पथ पर अग्रसर होना है । स्नेह रूपी खेवा द्वन्द्व के नदी-नद-समुद्रों को तरेगी । कवि पूरब और पश्चिम की

---

1. उत्तरजय - भूमिका - नरेन्द्र शर्मा - पृ: 3.
2. वही - पृ: 31.
3. अग्नि शस्य - नरेन्द्र शर्मा - पृ: 10.

विचारधाराओं का समन्वय चाहते हैं । कवि की कामना यह है कि पश्चिम की पौरुष और निपुणता, पूरब की तप, त्याग और श्रद्धा को मिलाकर आगे बढ़ना है । ऐसा करने से यह धरती स्वर्ग के समान सुखदा बनेगी ।[1]

भगवतीचरण वर्मा की रचनाओं में मानवतावादी विचारधारा की अभिव्यक्ति हुई है । उन्हें मानवता निर्बल और अनित्य दीख पड़ा है । उनके काव्य में समाज के पीड़ित, दुःखित और भूखे व्यक्तियों की करुण दशा का चित्रण है और कवि ने उनके प्रति सहानुभूति प्रकट की है । "विषमता" शीर्षक कविता में कवि ने मार्ग पर पड़े विकृत लाश का चित्रण करते हुए क्षुब्ध और पीड़ित मानवता का चित्रण किया है । इसमें भगवतीचरण वर्मा ने समाज के दो भिन्न श्रेणी के लोगों की विलासिता और गरीबी का चित्रण किया है और साथ ही शोषण का चित्रण भी । इसमें कवि यह आह्वान देते हैं कि अपनी मानवता से उनकी पशुता को जीतें -

"अपनी मानवता से आओ,
हम उनकी पशुता को जीतें,
घृणित लाश वह आज कह गई
प्रेम घृणा के हैं अपर ।"[2]

"भैंसागाडी" में भी उनकी मानवतावादी विचारधारा की अभिव्यक्ति हुई है । इन दोनों कवियों की मानवतावादी विचारधारा से डॉ. वर्मा की रचनाओं में अभिव्यक्त मानवतावाद की तुलना करने पर यह स्पष्ट हो जाता है की डॉ. वर्मा में मानवतावादी विचारधारा की अभिव्यक्ति प्रमुख रूप से समाज में प्रचलित जातिव्यवस्था के प्रति घृणा के रूप में हुई है ।

भगवतीचरण वर्मा की रचनाओं में प्रगतिशील विचारों की अभिव्यक्ति हुई है । "विषमता", "भैंसागाडी", "ट्राम", "राजा साहब का वायुयान" आदि इसी कोटि में हैं । "विषमता" में मार्ग पर पडे एक विकृत लाश का चित्रण है । उसका शरीर सड़ा हुआ था । मुख पर पीड़ा की ऐंठन थी, उसकी बड़ी बड़ी आँखें बाहर को निकल पड़ी थीं ।

---

1. अग्नि शस्य - नरेन्द्र शर्मा - पृ: 14-15.
2. विस्मृति के फूल - भगवतीचरण वर्मा - पृ: 49.

"भैंसागाड़ी" रचना में कवि ने ग्रामीण जीवन की आर्थिक विषमता और शोषण का चित्रण भी किया है । भूखे अधखाये किसान सूनी आहें भर रहे हैं और नंगे बच्चे और चिथड़े पहनी माताएँ हैं । गाँव में नर तो पशु के समान पिस रहे हैं और नारियाँ गुलाम रही हैं । समाज के धनिक वर्ग तो इन गरीबों का शोषण कर रहे हैं -

"वे व्यापरी, वे जमींदार,
वे हैं लक्ष्मी के परमभक्त
वे निपट निरामिष सूदखोर
पीते मनुष्य का उष्ण रक्त ।"[1]

कवि ने धनिक वर्ग के शोषण का चित्रण किया है ।

प्रगतिशील विचारधारा की अभिव्यक्ति नरेन्द्र शर्मा की रचना में भी उपलब्ध है । नरेन्द्र शर्मा ने सामयिक घटनाओं का चित्रण किया है । बंगाल के अकाल का चित्रण "हंसमाला"[2] में संकलित "क्षुधा-सिन्धु" शीर्षक कविता में उपलब्ध है । उनकी प्रगतिशील विचार धारा का एक अन्य रूप है राष्ट्रीय भावना की अभिव्यक्ति । "आदेश" शीर्षक कविता में उनकी राष्ट्रीय भावना की अभिव्यक्ति पराधीनता के विरुद्ध भारतीय जनता के आक्रोश के रूप में हुई है । वे विप्लव के द्वारा ही स्वाधीनता प्राप्त करने के इच्छुक हैं -

"सुनो हिन्दुस्ताँ की हुंकार ! बढ़ो आगे, खींचो तलवार !
खून को बुला रहा है खून ! बढ़ो-दुश्मन की चीर कतार ।"[3]

उनकी बलिदान की भावना में अहिंसात्मक दृष्टि नहीं विप्लव का स्वर है ।

भगवतीचरण वर्मा और नरेन्द्र शर्मा की रचनाओं में उपलब्ध प्रगतिशील विचारधारा का अभाव डॉ॰ वर्मा की रचनाओं में है । भगवतीचरण वर्मा और नरेन्द्र शर्मा छायावाद से प्रगतिवाद की ओर उन्मुख हुआ है । लेकिन डॉ. वर्मा छायावादी क्षेत्र में ही अड़िग रहा ।

---

1. विस्मृति के फूल - भगवतीचरण वर्मा - पृ: 54.
2. हंसमाला - नरेन्द्रशर्मा - पृ: 33.
3. वही - पृ: 47.

उत्तर छायावादी कवियों की भाषा सरल तथा जन जीवन के निकट है । उनकी शैलीगत विशेषता है सहज सरल अभिव्यक्ति प्रणाली । छायावाद का काव्य जन जीवन से दूर तथा क्लिष्ट था । इन कवियों की शब्द योजना में सरलता है, स्वच्छता है । भाषा सरल तथा जन जीवन के निकट होने के कारण पाठक को इसे समझने में कोई कठिनाई का अनुभव न होता ।

भगवतीचरण वर्मा ने अपनी काव्य रचनाओं के प्रणयन के लिए सरल तथा कोमल भाषा को अपनाया है । उनकी काव्यशैली में ऐसी स्वाभाविकता और प्रवाह है जो पाठक के मन को तत्काल प्रभावित करने में सक्षम है । "प्रेम संगीत" की निम्नलिखित पंक्तियों में भाषा की सरलता और सरसता स्पष्ट झलकती है -

"तुम मृगनयनी, तुम पिक बयनी
तुम छवि की परिणीता-सी
अपनी बेसुध मादकता में
भूली-सी भयभीता सी ".[1]

नरेन्द्र शर्मा ने सहजता और स्वाभाविकता के साथ अपने आपको अभिव्यक्त किया है । गीतों में उन्होंने सरल भाषा और सहज अभिव्यक्ति को अपनाया है । "प्रवासी के गीत" से उद्धृत निम्नलिखित पंक्तियाँ उनकी भाषा की सरलता और सहजता से परिचित होने में समर्थ है -

"मेरा घर हो नदी किनारे ।
रह-रह याद तुम्हारी आए, देख मचलती तरल लहरियाँ
देखूँ जब पल भर आँखें भर, कभी उछलती चटुल मछलियाँ
खुले हृदय में नयन तुम्हारे, मेरा घर हो नदी किनारे ।"[2]

डॉ. वर्माजी की भाषा में भी सरलता और सहजता हम देख सकते हैं ।

---

1. प्रेम संगीत - भगवती चरण वर्मा - पृ: 17.
2. प्रवासी के गीत - नरेन्द्र शर्मा - पृ: 56.

भगवतीचरण वर्मा की रचनाओं में प्रायः जन साधारण से संबन्धित सरल, सहज शब्दों का प्रयोग हुआ है । लेकिन नरेन्द्र शर्मा की रचना में संस्कृत के तत्सम शब्द से लेकर आंचलिक शब्द, अरबी-फारसी के शब्द तक मिलते हैं । नरेन्द्र शर्मा की रचना में छायावादी काव्य शैली तथा फारसी शैली झलकती है । अभिव्यंजना शैली की दृष्टि से देखें तो रामकुमारवर्मा और नरेन्द्र शर्मा में कुछ समानता है ।

छायावादी काव्य रचनाओं में दर्शित प्रायः सभी अलंकारों का प्रयोग डॉ. वर्मा और नरेन्द्र शर्मा की रचनाओं में उपलब्ध है ।

चित्र विधान की दृष्टि से देखें तो डॉ. वर्माजी की रचनाओं में उपलब्ध सांस्कृतिक रूप विधान के समान अन्य उदाहरण नरेन्द्रजी में उपलब्ध है । शर्माजी द्वारा प्रयुक्त सांस्कृतिक रूप विधान का एक उदाहरण देखिए जो "अग्नि शस्य" में संकलित "युग संध्या" शीर्षक कविता में उपलब्ध है । इसमें कवि ने युग की संध्या का चित्रण करते समय भारतीय सुहागिन का एक खण्ड चित्र प्रस्तुत किया है जो माथे पर लाल रंग की बिंदी लगायी है । भारतीय संस्कृति की विशेषता है सुहागिन नारियों का माथे पर सिंदूर लगाना -

"माथे पर रक्ताभ चन्द्रमा की
सुहाग बिंदिया सोहे,
उचक ऊँची खूँटी से
नया सिंगार उतार रही ।
युग की संध्या कृषक वधू-सी
किसका पथ निहार रही ।"[1]

संध्या के समय पूर्व दिशा में उदित रक्ताभ चन्द्रमा सुहागिन संध्या की बिंदी है जो माँग पर लगायी गयी है । प्राकृतिक रूपविधान के अन्दर जहाँ भगवतीचरण वर्मा[2] ने प्रकृति के

---

1. अग्नि शस्य - नरेन्द्र शर्मा - पृ: 100.
2. विस्मृति के फूल - भगवतीचरण वर्मा - पृ: 94.

स्वतंत्र रूप का अंकन किया है वहाँ डॉ. वर्माजी ने प्रकृति का मानवीकृत रूपांकन ही अधिक किया है। भगवतीचरण वर्मा में आर्थिक विषमता से पीड़ित दुःखी और शोषित जनता का चित्रण उपलब्ध है। ऐसा चित्रण डॉ. वर्माजी की रचनाओं में अप्राप्त है। भावात्मक रूप विधान के अन्दर डॉ. वर्मा ने प्रायः आशा-निराशा, सुख-दुःख, वेदना, नश्वरता जैसे अमूर्त भावों का रूपांकन किया है जबकि उनके समकालीन कवियों ने प्रेम-मिलन जैसे विषयों का मांसल चित्र उपस्थित किया है। "प्रवासी के गीत" से उद्धृत मिलन का एक मांसल चित्र देखिए -

"तीव्रश्वास, पुलकाकुल स्वेदित शिथिल गात, मधुरात अचेतना
प्राणों में जब भेद नहीं था एक हो गये थे दोनों तन।
प्रणय-अन्ध पुलकित बाँहों के भरे हुए दुहरे आलिंगन
आह, आज क्यों याद आ गए कंपित अधरों के चुम्बन।"[1]

उपर्युक्त पंक्तियों में नायक-नायिका के मिलन का एक मांसल चित्र पाठक के सम्मुख अंकित होता है। ऐसे अमूर्त भावों का मांसल चित्रण रामकुमार वर्माजी ने नहीं किया है।

भगवती चरण वर्मा और नरेन्द्र शर्मा में बिंब के तीन प्रकार मिलते हैं रूप बिंब, भाव बिंब और क्रिया बिंब। नरेन्द्र शर्मा द्वारा प्रयुक्त एक रूप बिंब देखिए जिसमें "अग्नि शस्य" में चन्द्रमा एक योगी के रूप में अंकित हुआ है -

"तेजस्वी तरुण तपस्वी-सा,
गैरिक लपटों से तन लपेट
यह कृष्ण पक्ष का प्रथम चंद्र
है उदित अखिल आभा समेट।"[2]

---

1. प्रवासी के गीत - नरेन्द्र शर्मा - पृः 31.
2. अग्नि शस्य - नरेन्द्र शर्मा - पृः 61.

यहाँ कृष्ण पक्ष में उदित प्रथम चन्द्रमा का चित्रण है । चंद्रमा तेजस्वी तरुण तपस्वी के समान है जो गैरिक लपटों से अपना शरीर लपेट कर आया हो । "विस्मृति के फूल" में भगवतीचरण वर्मा ने क्रिया बिंब की योजना की है -

"लताएँ लहराती हैं और
झूम उठती है वे हिल मिल
मलय के चुम्बन पर हो मुग्ध
हँस रही हैं कलियाँ खिल खिल
कर रहे हैं प्रेमालिंगन
कुँज के कुसुम गले मिल मिल ।"[1]

उपर्युक्त पंक्तियों में कवि ने हवा के बहने से प्रकृति में जो गति होती है उसको बिंबवत् बनाया है । प्रकृति का दृश्य मूर्त हो गया है । डॉ. वर्माजीकीरचनाओं में प्राकृतिक बिंब, सांस्कृतिक बिंब और भाव बिंब के उदाहरण उपलब्ध हैं ।

भगवतीचरण वर्मा और नरेन्द्र शर्मा द्वारा प्रयुक्त प्रतीकों का विश्लेषण करें तो यह देख सकते हैं कि नरेन्द्र शर्मा की रचना में प्राकृतिक और सांस्कृतिक क्षेत्र से गृहीत प्रतीकों के उदाहरण उपलब्ध हैं जिसमें छायावादी कवियों द्वारा प्रयुक्त मधुप, कमल, चिड़िया जैसे प्रतीक उपलब्ध हैं । नरेन्द्र शर्मा को रचना में सांस्कृतिक प्रतीकों के अतिरिक्त ऐतिहासिक प्रतीक भी उपलब्ध है । भगवतीचरण वर्मा की रचनाओं में प्रतीकों का प्रयोग बहुत कम ही हुआ है । फिर भी जो प्रतीक उसमें उपलब्ध है वह परम्परागत प्रतीक है । डॉ. वर्मा की रचनाओं में रहस्यात्मक और प्राकृतिक क्षेत्र से गृहीत प्रतीक उपलब्ध हैं । उनमें ऐतिहासिक और सांस्कृतिक प्रतीकों का अभाव है ।

भगवतीचरण वर्मा के शिल्पपक्ष के अध्ययन से यह विदित हो जाता है कि उनकी "प्रेमसंगीत", "मधुकण", "मानव" जैसी रचनाएँ छन्दबद्ध है लेकिन "एक दिन" में उन्होंने मुक्तछन्द को अपनाया है । आधुनिक कवि छन्द को कविता का बन्धन मानते हैं ।

---

1. विस्मृति के फूल भगवतीचरणवर्मा पृ 205

लेकिन रामकुमार वर्माजी छन्द को कविता के लिए आवश्यक अंग मानते हैं । छन्द के संबन्ध में आधुनिक कवि-3 में वर्माजी ने जो मत प्रकट किया है वह उल्लेखनीय है - "कविता की विशेषता तो इसी में है कि वह नियमों के अन्तर्गत रहती हुई भी उनसे परे हो जाती है । फूल पंखुडियों में सीमित रहते हुए भी अपनी सुगन्धि में असीम है, सिन्धु अपनी मर्यादा में रहते हुए भी अपनी स्वतन्त्रता में विराट है । उसकी स्वतंत्रता में उसके नियम ही सहायक हैं । यदि कविता नियम रहित हो जाय तो वह अपनी उच्छृङ्खलता में सौन्दर्य का ही विनाश करती है और बिना सौन्दर्य के स्वतंत्रता केवल विशृङ्खलता में परिवर्तित होगी ।"[1] "एक दिन" काव्य संग्रह के अन्त में आकर भगवतीचरण वर्मा की रचनायें एक विशेष दिशा की ओर मुड़ गयी है जहाँ कवि ने आख्यान शैली को अपनाया है ।[2] डॉ. वर्मा की काव्य रचनाओं को एक विशेषता है छन्द बद्धता जो उनको अपने पूर्ववर्ती कवि निराला और समकालीन कवि भगवतीचरण वर्मा से पृथक करती है ।

निष्कर्ष

पूर्ववर्ती प्रतिनिधि छायावादी कवि और उत्तर छायावादी कवियों की काव्यरचनाओं की भावगत और शिल्पगत विशेषताओं के साथ डॉ. वर्मा की तुलना करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि इन कवियों की भावगत विशेषताओं के जिन तत्वों का प्रस्फुटन वर्माजी की रचनाओं में उपलब्ध हैं उनमें वर्माजी का स्वतन्त्र दृष्टिकोण ही हम देख सकते हैं । प्रसाद और पंत के समान रामकुमार वर्माजी भी जाति व्यवस्था को मानवता के लिए हानिकारक तत्व मानते हैं । पूर्व छायावादी कवियों से समानता रखनेवाला अन्यतत्व है राष्ट्रीय भावना की अभिव्यक्ति । पन्त, निराला, भगवतीचरण वर्मा और नरेन्द्र शर्मा की रचनाओं में उनकी परवर्ती काव्यधारा का - प्रगतिवाद - बीजवपन हुआ है । लेकिन डॉ. वर्मा की रचना में आद्यन्त एक ही वाद-छायावाद-की अभिव्यक्ति हुई है । अर्थात् पूर्ववर्ती और समकालीन कवियों के समान वे प्रगतिवाद की ओर नहीं उन्मुख हुए ।

---

1. आधुनिक कवि-3 - रामकुमार वर्मा - पृ: 19.
2. एक दिन - भगवतीचरण वर्मा - पृ: 76.

उपसंहार

उत्तर छायावादी युग के लब्ध प्रतिष्ठ कवि के रूप में डॉ. वर्मा का स्थान सर्वश्रेष्ठ है । प्रमुख आलोचक और एकांकी-नाटक के प्रवर्तक के रूप में वे ख्याति प्राप्त कर चुके हैं । किन्तु डॉ. वर्मा मूलतः एक कवि थे । उनका साहित्य सृजन काव्य क्षेत्र से शुरू हुआ । उनके कवि व्यक्तित्व का प्रस्फुटन उस समय हुआ जब उन्होंने प्रभात-फेरी के लिए आवश्यक गीतों का सृजन किया । सन् 1923 ई. में उनके प्रथम खण्डकाव्य "वीर हमीर" का प्रकाशन हुआ और उनकी काव्य यात्रा विविध सोपानों को पार करती हुई सन् 1989 ई. में प्रकाशित काव्यांग "बालि वध" तक आकर समाप्त हुई । इस प्रकार हम देखते हैं कि उनका साहित्यकार व्यक्तित्व कवि के रूप में उदित होकर कवि के रूप में ही अस्त हो गया । यद्यपि उन्होंने साहित्य की विविध धाराओं को संपन्न करने का प्रयास किया तो भी वे काव्य रचना से कभी पृथक नहीं रहे । कोई भी कवि अपने सृजन की परिसीमा में पहुँचकर महाकाव्यों की रचना करते हैं । उनके तीनों महाकाव्य उनकी कवि प्रतिभा के चरम निदर्शन हैं । वर्माजी मूलतः एक कवि थे और निरन्तर उनके कवि व्यक्तित्व का उत्कर्ष हम देख सकते हैं । वे एकांकी तथा नाटकों की रचनाओं के बीच में भी काव्य रचना में विशेष रूचि रखते थे । उनके प्रथम एकांकी संग्रह "पृथ्वीराज की आँखें" का प्रकाशन सन् 1935 ई. में और प्रथम नाटक "कौमुदी महोत्सव" का प्रकाशन सन् 1949 ई. में ही हुआ । लेकिन इसी अवधि में वे काव्यक्षेत्र में उन्नत स्थान प्राप्त कर चुके थे । वर्माजी के नाटककार व्यक्तित्व के प्रस्फुटन के पहले ही पाठक उनके कवि व्यक्तित्व से प्रभावित थे । सन् 1935 ई. के पहले ही उन्होंने काव्य जगत् को "वीर-हमीर", "चितौड़ की चिता", "कुल- ललना", "अंजलि", "रूपराशि", "निशीथ" जैसी काव्य रचनाओं से समृद्ध बनाया था ।

हम यह जानते हैं कि आधुनिक हिन्दी साहित्य में छायावादी काव्य का अपना एक विशिष्ट स्थान है । सूक्ष्म विश्लेषण की सुविधा के लिए छायावादी युग को हमने दो भागों में विभाजित किया है-पूर्व छायावादी युग और उत्तर छायावादी युग । आधुनिक हिन्दी साहित्य के प्रमुख उत्तर छायावादी कवि के रूप में डॉ. वर्मा के महत्वपूर्ण योगदान को स्पष्ट करते हुए उनकी काव्य रचनाओं का विश्लेषण किया गया है ।

वर्माजी की काव्यकृतियों में भारतीय संस्कृति और राष्ट्रीयता का स्वर मुखरित है । हम देख चुके हैं कि वर्माजी के कवि व्यक्तित्व का प्रस्फुटन राष्ट्रीयता की धरती पर हुआ है । उनकी राष्ट्रीय भावना का परिचायक हैं "वीर हमीर", "चितौड़ की चिता" जैसे खण्डकाव्य और अन्य स्फुट रचनाएँ । भारतीय संस्कृति के प्रति उनकी श्रद्धा और निष्ठा का प्रमाण है उनके प्रबंध काव्य । वर्माजी ने अपने महाकाव्य "एकलव्य" "उत्तरायण" और "ओ अहल्या" की रचना द्वारा क्रमशः आचार्य द्रोण, श्रीराम एवं अहल्या के चरित्र पर लगे काले धब्बों का प्रक्षालन करके भारतीय संस्कृति के गौरव को बढ़ाया है । वर्माजी की यह विशेष प्रवृत्ति उनकी अन्तिम रचना "बालि वध" में भी दृष्टिगोचर होती है । आश्रय दान, आत्म सम्मान, दया, देश प्रेम, गुरुभक्ति, सतीत्व, जौहर व्रत, नारी के प्रति श्रद्धा जैसी भारतीय संस्कृति की विशेषतायें उनके प्रबन्ध काव्यों के विषय हैं ।

परिवार के धार्मिक वातावरण का प्रभाव वर्माजी के प्रबन्धकाव्यों में उपलब्ध है । उनकी पारिवारिक स्थिति के संबन्ध में विचार करते समय हम यह देख चुके हैं कि श्रीरामचन्द्र के प्रति उनमें अटूट भक्ति है । भगवान् राम के प्रति उनकी भक्ति और श्रद्धा-भावना ने ही उन्हें "उत्तरायण" और "बालि वध" जैसे प्रबन्ध काव्यों के सृजन के लिए प्रेरित किया है । इन दोनों रचनाओं के माध्यम से उन्होंने श्रीराम के चरित्र पर लगे कलंक को दूर करने का सफल प्रयास किया है ।

वर्माजी के महाकाव्यों की कुछ उल्लेखनीय विशेषताएँ हैं । उन्होंने आचार्य विश्वनाथ द्वारा प्रतिपादित लक्षणों को अपनाने के साथ ही अपनी स्वतन्त्र काव्य प्रवृत्ति का भी प्रयोग किया है । नायक के चुनाव की दृष्टि से उनमें विविधता है । "एकलव्य" का नायक निषाद राजकुमार है, "उत्तरायण" का नायक तुलसी भक्त-कवि है, नायिका प्रधान महाकाव्य "ओ अहल्या" की नायिका मुनिपत्नी अहल्या है । सर्गान्त में भाविकथा की पूर्व सूचना कुछ सर्गों में नहीं मिलती । तीनों महाकाव्यों में प्रकृति चित्रण की योजना स्थान स्थान पर उपलब्ध है । छन्द की दृष्टि से विचार करें तो "एकलव्य" में अमित्राक्षर छन्द और "उत्तरायण" में विभिन्न छन्दों का प्रयोग देख सकते हैं । उनके तीनों महाकाव्यों में समान रूप से दीखनेवाली विशेषता है संवादशैली की योजना । महाकाव्य "एकलव्य" और "ओ अहल्या" में भी बीच में गीतियोजना मिलती है । "ओ अहल्या" महाकाव्य में मंगलाचरण के बाद "प्रस्तावना" है ।

डॉ. वर्मा ने पाँच खण्डकाव्यों की रचना की हैं । वे हैं "वीर हमीर", "चितौड की चिता", "निशीथ", "संत रैदास" और "बालि वध" । कथानक की दृष्टि से ऐतिहासिकता उनके खण्डकाव्यों की विशेषता है । इतिहास के प्रति उनके विशेष झुकाव का प्रमाण है "वीर हमीर", "चितौड़ की चिता" और "संत रैदास" । कथानक की दृष्टि से ऐतिहासिकता, काल्पनिकता और पौराणिकता को उन्होंने खण्डकाव्यों का आधार माना है । वर्माजी ने "वीर हमीर", "संत रैदास" और "बालि वध" में मंगलाचरण का पालन किया है । महाकाव्य के समान खण्डकाव्य "वीर हमीर" में गीत योजना हुई है । "संत रैदास" खण्डकाव्य में वर्माजी ने इसके नायक रैदासजी की भक्ति और काव्य प्रतिभा का परिचय देने केलिए स्वयं उनके कुछ पदों को उद्धृत किया है ।

वर्माजी द्वारा लिखित गीति संग्रह हैं "अंजलि", "अभिशाप", "रूपराशि", "चित्ररेखा", "चन्द्रकिरण", "संकेत" और "आकाश-गंगा" । 'गजरे तारों वाले' और 'आधुनिक कवि-3', उनके गीति संकलन हैं । वर्माजी के गीतिकाव्यों की विशेषतायें हैं आत्माभिव्यंजना, संगीतात्मकता, अनुभूति का वैशिष्टय भावों का ऐक्य एवं संक्षिप्तता ।

विषय की दृष्टि से उनके गीतिकाव्य के सात भेद हैं - राष्ट्रीयगीत, प्रेम गीत, प्रकृति गीत, रहस्यवादी गीत, दार्शनिक गीत, शोक गीत और प्रार्थना गीत । शिल्प की दृष्टि से उनके गीतिकाव्य के दो भेद पाये जाते हैं-संबोधनगीत और चतुर्दशपदी । उनके गीतिकाव्यों में प्रकृतिगीत, रहस्यवादी गीत और दार्शनिक गीत की मात्रा अन्य भेदों की अपेक्षा अधिक है । वर्माजी के गायक व्यक्तित्व का प्रभाव उनके गीतिकाव्यों में अभिव्यक्त हुआ है ।

वर्माजी की काव्यकृतियों में उनकी सौन्दर्य भावना, नारी भावना, मानवतावाद, दार्शनिक विचार, सांस्कृतिक विचार धारा, गाँधीवादी विचारधारा और रहस्यवादी भावना का अभिव्यंजन हुआ है । उनकी सौन्दर्य भावना में प्रकृति सौन्दर्य, नारी सौन्दर्य और पुरुष सौन्दर्य का समन्वय है । नारी भावना के अन्तर्गत उनकी प्रेयसी भावना और नारी के प्रति उनकी श्रद्धा और करुणा भावना की अभिव्यक्ति है । उनकी मानवतावादी विचारधारा की अभिव्यक्ति प्रमुख रूप से जाति व्यवस्था के प्रति उनके आक्रोश के रूप में हुई है । उनका दार्शनिक चिन्तन परमतत्व, जीव, जीवन-मृत्यु, सुख-दुःख और बौद्ध-दर्शन से ओतप्रोत है । उनके काव्य के सांस्कृतिक पक्ष के अन्तर्गत करुणा, वीरत्व, श्रद्धा, प्रेम, वर्णाश्रम धर्म, गुरुभक्ति जैसी भारतीय संस्कृति की विशेषताएँ दृष्टव्य है । गाँधीजी के अछूतोद्धार की भावना, नारी उद्धार की भावना शिक्षा की आवश्यकता जैसी विचार धाराओं का अभिव्यंजन हुआ है । वर्माजी की काव्यरचनाओं की अन्य भावगत विशेषता है रहस्याभिव्यंजना जो छायावादी कवियों की प्रवृत्तिगत विशेषता है । उनके रहस्यवादी गीतों में आध्यात्मिक विरह से उत्पन्न कातर उक्तियाँ उपलब्ध हैं ।

वर्माजी के काव्य के भावपक्ष के समान समृद्ध है उनका कलापक्ष भी । उनकी प्रारंभिक रचनाओं में भाषा की सुकुमारता और लालित्य का अभाव है । लेकिन बाद की रचनाएँ छायावादी काव्यशैली की विशेषताओं से युक्त है । उनकी रचनाओं में पारिभाषिक शब्द, अप्रचलित संस्कृत तत्समशब्द और व्रज भाषा शब्द उपलब्ध हैं । रूप विधान के अन्तर्गत सांस्कृतिक, प्राकृतिक और भावात्मक रूप विधान की समुचित योजना दृष्टव्य है । उन्होंने

काव्यरचनाओं में भारतीय और पाश्चात्य दोनों प्रकार के अलंकारों का प्रयोग किया है । वर्माजी की रचनाओं में तीन प्रकार के बिंब उपलब्ध हैं - प्राकृतिक बिंब, सांस्कृतिक बिंब और भाव बिंब । वर्माजी आध्यात्मिक, रहस्यात्मक और प्रकृति क्षेत्र से गृहीत प्रतीकों से भावाभिव्यक्ति करने में सफल हुए हैं । उनकी सारी रचनाएँ छन्द बद्ध है । आधुनिक कवि छन्द को कविता का बंधन मानते हैं । लेकिन वर्माजी ने छन्द को कविता के लिए आवश्यक तत्व स्वीकार किया है ।

वर्माजी की काव्यरचनाओं के मूल्यांकन से यह विदित हो गया है कि इनमें आद्यन्त छायावादी काव्यशैली का अभिव्यंजन हुआ है । आधुनिक हिन्दी काव्य क्षेत्र के भाव और शिल्प पक्ष के लिए वर्माजी का योगदान महत्वपूर्ण है । पूर्वछायावादी कवियों के समान प्रकृति सौन्दर्य और नारी सौन्दर्य का चित्रण वर्माजी की रचनाओं में उपलब्ध है । पूर्व छायावादी कवियों ने नारी के अंग प्रत्यंग का चित्रण अधिक मात्रा में किया है । वर्माजी की रचनाओं में भी नारी सौन्दर्य का चित्रण मिलता है किन्तु वह नाममात्र के लिए है । इनके काव्यों में नारी सौन्दर्य का अत्यन्त संयमित और परिमार्जित चित्रण उपलब्ध है । इनमें सौन्दर्य के दोनों पक्षों - आन्तरिक व बाह्य - का चित्रण है । वर्माजी ने नारी को प्रेयसी के रूप में अपनाकर जो भावनाएँ प्रकट की हैं वह अत्यन्त परिपक्व है । लेकिन प्रसाद और पंत में प्रेम के दैहिक संस्कारों का चित्रण है । उसी प्रकार वर्माजी के समकालीन कवि भगवतीचरण वर्मा और नरेन्द्र शर्मा की प्रेयसी भावना में प्रेम को ऐन्द्रियता का चित्रण है । छायावादी चतुष्टय की मानवतावादी विचारधारा में समष्टिकल्याण, पीड़ित व्यक्तियों के प्रति सहानुभूति, सारे समाज में समानता की स्थापना करना और समाज की भलाई के लिए अपने जीवन को समर्पित करने का भाव निहित है । डॉ. वर्मा की रचना में जातिव्यवस्था के प्रति अपनी अतृप्ति ही प्रमुख रूप से प्रकट हुई है । उनकी रचनाओं में राष्ट्रीय भावना का प्रस्फुटन भारत वन्दना तथा प्रशस्ति, अतीत का गौरव गान वर्तमान काल की दुर्दशा आदि रूपों में हुआ है जो पूर्ववर्ती कवियों में समान रूप से उपलब्ध है । वर्माजी के समकालीन कवि भगवतीचरण वर्मा और नरेन्द्र शर्मा ने सामाजिक समस्याओं को प्रमुख माध्यम के रूप में अपनाया है । इन

कवियों ने भारत के महान् नेताओं के प्रति श्रद्धा भाव व्यक्त किया है । उत्तरछायावाद के इन प्रतिनिध कवियों की अपेक्षा वर्माजी की रचनाओं में भारत माता की वन्दना का स्वर मुखरित है । छायावादी कवियों की भावगत विशेषता रहस्यवाद की अभिव्यक्ति वर्माजी की रचनाओं में उपलब्ध है । पूर्व छायावादी कवि और डॉ. वर्मा ने लौकिक प्रणय के धरातल पर अपनी आध्यात्मिक भावना की अभिव्यक्ति की है । दार्शनिक भावना के अन्तर्गत पूर्ववर्ती छायावादी कवियों ने परमतत्व और जीवात्मा के संबन्ध में जितनी गंभीरता से विचार किया है उतना गांभीर्य वर्माजी में अनुपलब्ध है । जीवन-मृत्यु, सुख-दुःख और सांसारिक नश्वरता का चित्रण डॉ॰ वर्माजी के दार्शनिक चिन्तन के विषय बन गए हैं । बौद्ध दर्शन के क्षणिकतावाद और शून्यवाद का प्रभाव डॉ. वर्माजी की रचना में उपलब्ध है । डॉ॰ वर्माजी की काव्यरचनाओं के अध्ययन से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि वर्माजी ने काव्यरचना में आद्यन्त छायावादी प्रवृत्ति को ही अपनाया है । पन्त, निराला, भगवतीचरण वर्मा और नरेन्द्रशर्मा के समान वे प्रगतिवाद की ओर उन्मुख नहीं हुए हैं । यह इन कवियों से वर्माजी को अलग करनेवाली प्रमुख विशेषता है ।

भाषा की दृष्टि से देखें तो डॉ. वर्मा की शैली पूर्ववर्ती छायावादी कवियों से समानता रखती है । पूर्वछायावादी कवियों के समान डॉ. वर्मा के अभिव्यंजना पक्ष चित्र-विधान, अलंकार विधान, बिंब विधान और प्रतीक विधान जैसे तत्वों से समृद्ध है । चित्र विधान के अन्तर्गत सांस्कृतिक, प्राकृतिक और भावात्मक विधान इनमें उपलब्ध हैं । प्रेम-मिलन जैसे विषयों का मांसल चित्र जहाँ इन समकालीन कवियों ने खींचा है वहाँ ऐसा मांसल भावात्मक चित्र वर्माजी ने नहीं खींचा है । डॉ॰ वर्मा की बिंबयोजना में बिंब के ये तीनों प्रकार-सांस्कृतिक, प्राकृतिक और भावात्मक - उपलब्ध हैं । भगवतीचरण वर्मा और नरेन्द्र शर्मा में रूपबिंब, भाव बिंब और क्रिया बिंब के उदाहरण उपलब्ध हैं । डॉ. वर्मा की रचनाओं में रहस्यात्मक और प्राकृतिक क्षेत्र से गृहीत प्रतीकों के उदाहरण उपलब्ध हैं । डॉ॰ वर्मा ने छन्द को कविता केलिए आवश्यक अंग मानकर काव्यरचनाएँ की हैं ।

हम निसन्देह कह सकते हैं कि नाटककार के समान उनका कवि व्यक्तित्व भी निश्चय ही महान है । आधुनिक काव्य क्षेत्र केलिए डॉ. वर्माजी ने जिन काव्य रचनाओं का चयन किया है वे निश्चय ही हिन्दी साहित्य की बहुमूल्य संपदा है ।

परिशिष्ट - 1

डॉ. रामकुमार वर्मा की काव्येतर रचनाएँ

नाटक

1. सन् 1949 ई. कौमुदी महोत्सव
2. सन् 1954 ई. विजयपर्व
3. सन् 1958 ई. कला और कृपाण
4. सन् 1967 ई. अशोक का शोक
5. जौहर की ज्योति
6. सन् 1969 ई. नाना फडनवीस
7. सन् 1970 ई. महाराणा प्रताप
8. जय आदित्य
9. सन् 1971 ई. सारंग स्वर
10. पृथ्वी का स्वर्ग
11. जय बांगला
12. अग्निशिखा
13. सन् 1973 ई. सन्त तुलसीदास
14. सन् 1974 ई. जय वर्धमान
15. सन् 1978 ई. भगवान बुद्ध
16. समुद्रगुप्त पराक्रमांक
17. सन् 1979 ई. अहिल्या बाई
18. सन् 1980 ई. जय भारत
19. स्वयंवरा
20. अनुशासन पर्व

21. सन् 1982 ई. सम्राट कनिष्क
22. मालव कुमार भोज
23. सन् 1983 ई. कुन्ती का परिताप
24. सन् 1985 ई. सरजा शिवाजी
25. कर्मवीर कर्ण

एकांकी संग्रह

1. सन् 1935 ई. पृथ्वीराज की आँखें
2. सन् 1941 ई. रेशमी टाई
3. सन् 1942 ई. चारुमित्रा
4. शिवाजी
5. सन् 1947 ई. सप्तकिरण
6. सन् 1948 ई. रूपरंग
7. सन् 1949 ई. कौमुदी महोत्सव
8. सन् 1950 ई. ध्रुवतारिका
9. रम्यरास
10. सन् 1951 ई. ऋतुराज
11. सन् 1952 ई. रजतरश्मि
12. सन् 1953 ई. दीपदान
13. सन् 1955 ई. रिमझिम
14. सन् 1957 ई. पाँचजन्य
15. सन् 1958 ई. साहित्यिक एकांकी
16. मेरे सर्वश्रेष्ठ एकांकी
17. सन् 1965 ई. मयूरपंख
18. सन् 1966 ई. ललित एकांकी

19. सन् 1969 ई. इतिहास के स्वर
20. सन् 1971 ई. अमृत की खोज
21. सन् 1973 ई. खट्टे मीठे एकांकी
22. सन् 1982 ई. बहुरंगी नाटक
23. सन् 1983 ई. चित्र एकांकी
24. सन् 1984 ई. समाज के स्वर

शोध ग्रन्थ

1. सन् 1931 ई. कबीर का रहस्यवाद
2. सन् 1938 ई. हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास
3. सन् 1947 ई. सन्त कबीर
4. सन् 1957 ई. साहित्य शास्त्र
5. सन् 1984 ई. रीतिकालीन साहित्य का पुनर्मूल्यांकन

आलोचनात्मक ग्रन्थ

1. सन् 1930 ई. साहित्य समालोचना
2. सन् 1947 ई. हिन्दी साहित्य का ऐतिहासिक अनुशीलन
3. सन् 1948 ई. विचार दर्शन
4. सन् 1949 ई. समालोचना समुच्चय
5. सन् 1952 ई. एकांकी कला
6. सन् 1957 ई. अनुशीलन
7. सन् 1965 ई. साहित्य चिन्तन
8. सन् 1983 ई. कबीर एक अनुशीलन

संस्मरणात्मक रचनायें

1. सन् 1936 ई. हिमहास (गद्यगीत)
2. सन् 1960 ई. स्मृति के अंकुर
3. सन् 1982 ई. संस्मरणों के सुमन

संपादित रचनायें

1. सन् 1932 ई. हिन्दी गीतिकाव्य
2. सन् 1937 ई. कबीर पदावली
3. सन् 1942 ई. गद्य परिचय
4. सन् 1945 ई. आधुनिक काव्य संग्रह
5. आधुनिक हिन्दी काव्य
6. सन् 1955 ई. गद्य गौरव
7. काव्यांजलि
8. काव्यकुसुम
9. सन् 1964 ई. सरस एकांकी नाटक
10. आठ एकांकी नाटक
11. सन् 1967 ई. बरवै रामायण
12. सन् 1971 ई. हस्त लिखित हिन्दी ग्रन्थों की विवरणात्मक सूची
13. संक्षिप्त संत कबीर

परिशिष्ट - 2
पत्र - व्यवहार

पद्मभूषण
डा० रामकुमार वर्मा
एम. ए., डी. लिट्.
साहित्य वाचस्पति
पूर्व कुलपति
महिला ग्राम विद्यापीठ
प्रयाग

दूरभाष 52816
साकेत
4, प्रयाग स्ट्रीट
इलाहाबाद
211002

दिनांक........................

प्रिय गीता,

तुम्हारा पत्र प्राप्त हुआ। मेरे साहित्य के प्रति तुम्हारे मन में जो कुतूहल है, उस से पता चलता है कि साहित्य के प्रति तुम्हारे हृदय में अपार श्रद्धाभाव है।

मेरे काव्य के अध्ययन में इन सात आयामों की ओर तुम विशेष ध्यान देना — 1- राष्ट्रीयभावना 2- सामाजिक भावना 3- प्रकृति संबंधी 4- छायावादी काव्य 5- रहस्यवादी काव्य 6- भक्ति परक काव्य 7- अन्य विषय - संस्कृति

मेरे साहित्य के संबंध में तुम मेरे शिष्य डॉ० चन्द्रिका प्रसाद शर्मा से पत्र व्यवहार करो। वे तुम्हारी पूरी सहायता करेंगे।

नववर्ष की शुभकामनाएं।

शुभेच्छु
(डा० राम कुमार वर्मा)

पता
डॉ० चन्द्रिका प्रसाद शर्मा
सी 10, के रोड
महानगर
लखनऊ - उ०प्र०
226006

पद्मभूषण
डॉ० राम कुमार वर्मा एम० ए०, डी० लिट्, साहित्य वाचस्पति
'साकेत' ४ प्रयाग स्ट्रीट, इलाहाबाद-२११००२ • दूरभाष ५२८१६

प्रिय गीता कुलश्रेष्ठा,

आपका पत्र प्राप्त हुआ । यह जानकर अति प्रसन्नता हुई कि आप मेरे काव्यग्रंथों पर शोध कार्य कर रही हैं । आशा है कि आपका कार्य काफी बढ़ चुका होगा । मेरे साहित्य पर कुछ आलोचनात्मक ग्रंथ प्रकाशित हुए हैं । यदि आप मुझे एक सप्ताह बाद अपने कार्य से सूचित करेंगी तो मैं उन ग्रंथों का जो मेरे काव्य पर लिखे गये हैं पूर्ण परिचय दे दूँगा । आशा है आप स्वस्थ और सानन्द हैं ।

भवदीय,

रामकुमार वर्मा

(रामकुमार वर्मा)

संदर्भ ग्रंथ सूची

मूलग्रन्थ

1. अपरा — सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला, साहित्यकार संसद, प्रयाग, पंचम संस्करण, 1963.

2. अनामिका — सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला, भारती भंडार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, तृ.सं. 1958.

3. अग्नि-शस्य — नरेन्द्र शर्मा, भारती भंडार, लीडर प्रेस, प्रयाग, प्र. सं. 1951.

4. आज के लोक प्रिय हिन्दी कवि रामकुमार वर्मा — संपादक डॉ. राधेकृष्ण, श्रीवास्तव, राजपाल एण्ड सन्स, कश्मीरी गेट, दिल्ली, प्र. सं. 1975.

5. आधुनिक कवि-3 — रामकुमार वर्मा, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, च. सं.

6. उत्तरायण — डॉ. रामकुमार वर्मा, राजपाल एण्ड सन्ज़, काश्मीरी गेट, दिल्ली, प्र.स. 1972.

7. उत्तरजय — नरेन्द्र शर्मा, गौरीशंकर शर्मा, रामचन्द्र एण्ड कम्पनी, दरियागंज, दिल्ली-6, प्र.सं. 1965.

8. एकलव्य — डॉ. रामकुमार वर्मा, भारती भंडार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, प्र. सं. 1958.

9. एक दिन — भगवती चरण वर्मा, श्री दुलारे लाल, अध्यक्ष गंगा पुस्तकमाला कार्यालय, लखनऊ, ती. सं. 1952.

10. ओ अहल्या — डॉ. रामकुमार वर्मा, साहित्य भवन प्रा. लिमिटेड, 93 के. पी. कक्कड़ रोड़, इलाहाबाद, प्र. सं. 1985.

11. अंजलि — डॉ. रामकुमार वर्मा, साहित्य-भवन लिमिटेड, प्रयाग

12. कुल-ललना — डॉ. रामकुमार वर्मा, भारती प्रकाशन, लखनऊ, तृ. सं. 1963.

13. गजरे तारों वाले — डॉ. रामकुमार वर्मा, किताब महल प्रा. लिमिटेड, जीरो रोड, इलाहाबाद - प्र. सं. 1966.

14. गीतिका — सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला, भारती भंडार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, पं. सं. 1961.

15. गुंजन — सुमित्रानन्दन पन्त, भारती भण्डार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, द. स. 1961.

16. द्रौपदी — नरेन्द्र शर्मा, राजकमल प्रकाशन प्रा. लिमिटेड, दिल्ली - द्वि. सं. 1967.

17. नीरजा — महादेवी वर्मा, भारती भण्डार, लीडर प्रेस, प्रयाग प्र. सं॰ 1956.

18. नीहार — महादेवी वर्मा, साहित्य भवन प्रा. लिमिटेड जीरो रोड इलाहाबाद, स. स. 1971.

19. पलाश वन — नरेन्द्र शर्मा, भारती भण्डार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, द्वि. सं. 1946.

20. पल्लव — सुमित्रानन्दन पन्त, राजकमल प्रकाशन प्रा. लिमिटेड, दिल्ली, सा. सं. 1963.

21. परिमल — सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला, श्री दुलारेलाल भार्गव, अध्यक्ष गंगा - पुस्तकमाला कार्यालय, लखनऊ, आ. सं. 1960.

22. प्यासा निर्झर — नरेन्द्र शर्मा समुदय प्रकाशन 594 उन्नीसवाँ रास्ता ख्वार, बंबई 52.

23. प्रसाद ग्रंथावली खंड-1 — जयशंकर प्रसाद, भारतीय ग्रन्थ निकेतन, 2713 कूचा चेलान् दरियागंज, नई दिल्ली-110002, सं. 1988.

24. प्रगतिशील हिन्दी कविता — डॉ. दुर्गाप्रसाद झाला, ग्रन्थम, कान्पुर, सं. 1967.

25. प्रेम संगीत — भगवती चरण वर्मा, अयोध्यासिंह, विशाल भारत बुक-डिपो, 1951, हरिसन रोड, कलकत्ता, च. सं. 1949.

26. बालि वध — डॉ. रामकुमार वर्मा, साहित्यभवन, प्रा. लिमिटेड जीरो रोड, इलाहाबाद-3, प्र. सं. 1989.

27. मधुकण — भगवती चरण वर्मा, साहित्य-केन्द्र, 31 ए, बेली रोड, इलाहाबाद

28. यामा — महादेवी वर्मा, भारती भंडार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, च. सं. 1961.

29. युगवाणी — सुमित्रानंदन पन्त, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, चं. सं. 1959.

30. युगान्त — सुमित्रानंदन पंत, भारती भंडार, लीडर प्रेस, प्रयाग, द्वि. सं. 1958.

31. रश्मि — महादेवी वर्मा, साहित्यभवन प्रा. लि., प्रं. सं. 1957.

32. लोकायतन — सुमित्रानंदन पन्त, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली प्र. सं. 1964.

33. विस्मृति के फूल — भगवतीचरण वर्मा, भारती भंडार, लीडर प्रेस, प्रयाग

34. वीर हमीर — डॉ. रामकुमार वर्मा, चाँद कार्यालय, 42, ताशकन्द मार्ग, इलाहाबाद-211001, द्वि. सं. 1989.

35. वीणा-ग्रंथि — सुमित्रानंदन पन्त, भारती-भण्डार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, द्वि. सं. 1950.

36. संत रैदास — डॉ. रामकुमार वर्मा, चाँद कार्यालय, 42, ताशकन्द मार्ग, इलाहाबाद-211001,

37. स्वर्ण धूलि — सुमित्रानंदन पंत, राजकमल, प्रकाशन, प्रा. लि., दिल्ली, द्वि. सं. 1959.

38. हंसमाला — नरेन्द्र शर्मा - भारती भंडार, लीडर प्रेस, प्रयाग, प्र. सं. 1946.

आलोचनात्मक ग्रन्थ

39.	आधुनिक हिन्दी काव्य	डॉ॰ राजेन्द्र प्रसाद मिश्र, गन्थम, रामबाग, कानपुर, सं॰ 1966.
40.	आधुनिक हिन्दी कविता की भूमिका	शंभूनाथ पाण्डे, विनोद पुस्तक मन्दिर, हॉस्पिटल रोड, आगरा, प्र॰ सं॰ 1964.
41.	आधुनिक कविता की प्रवृत्तियाँ	डॉ॰ प्रेम प्रकाश गौड़, सरस्वती पुस्तक सदन, मोती कटरा, आगरा-3, प्र॰ सं॰ 1972.
42.	आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी: प्रवृत्तियाँ	डॉ॰ अजबसिंह, विश्वविद्यालय प्रकाशन, चौक वाराणसी-1, प्र॰ सं॰ 1975.
43.	आधुनिक काव्य कला और दर्शन	डॉ॰ राममूर्ती त्रिपाठी, साहित्य भवन (प्राइवेट) लिमिटेड, जीरो रोड, इलाहाबाद-3, प्र॰ सं॰ 1973.
44.	आधुनिक हिन्दी कविता की स्वच्छन्द धारा	डॉ॰ त्रिभुवन सिंह, ओमप्रकाश बेरी, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, पोस्ट बोक्स नं॰ 70, ज्ञानवापी, वाराणसी-1, द्वि॰ सं॰ 1961.
45.	आधुनिक हिन्दी कविता में व्यक्तित्व अंकन	सरजू प्रसाद मिश्र, पुस्तक संस्थान, 109/50, नेहरू नगर, कानपुर-208012, प्र॰ सं॰ 1977.
46.	आधुनिक हिन्दी कवियों का जीवन दर्शन	डॉ॰ परशुराम शुक्ल विरही, ग्रन्थम, रामबाग, कानपुर-12.

47.	आधुनिक हिन्दी कविता और रवीन्द्र	डॉ. रामेश्वर, प्रभात प्रकाशन, 205 चावड़ी बाज़ार, दिल्ली-6, सं. 1973.
48.	आधुनिक कवि	विश्वम्भरनाथ मानव, लोक भारती प्रकाशन, 15 ए., महात्मागांधी रोड, इलाहाबाद-1 द्वि. सं. 1965.
49.	आधुनिक हिन्दी काव्य में रहस्यवाद	डॉ. विश्वनाथ गौड, नन्द किशोर एण्ड सन्स, चौक, वाराणसी, प्र. सं. 1961.
50.	आधुनिक हिन्दी कविता में महाभारत के कुछ पात्र	डॉ. पुष्पपाल सिंह, अमित प्रकाशन 66 पक्का कुआँ, सुभाष द्वार, गाजियाबाद (उ. प्र.)
51.	आधुनिक प्रगीत काव्य	डॉ. गणेश खरे, अनुसन्धान प्रकाशन, 87/259, आचार्य नगर, कानपुर-3, सं. 1965.
52.	आधुनिक हिन्दी गीतिकाव्य का स्वरूप और विकास	डॉ. आशा किशोर, विश्वविद्यालय प्रकाशन, विशालाक्षी चौक, वाराणसी, प्र. सं. 1971.
53.	आधुनिक गीतिकाव्य का शिल्पविधान	डॉ. मंजु गुप्ता, मीनाक्षी प्रकाशन बेगमब्रिज, मेरठ.
54.	आधुनिक हिन्दी महाकाव्य संस्कृत साहित्य के परिपार्श्व में	डॉ. वीणा शर्मा, अनुपम प्रकाशन, चौड़ा रास्ता, जयपुर-3, प्र. सं. 1969.

55.	आधुनिक हिन्दी महाकाव्यों का शिल्प विधान	डॉ. श्याम नन्दन किशोर, बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर, प्र. सं. 1967.
56.	आधुनिक हिन्दी प्रबंधकाव्यों का रस शास्त्रीय विवेचन	डॉ. भगवान लाल सहनी, सूर्योदय वाङ्मय, पी. एन. आई. टी. ब्रह्मपुरा, मुजफ्फरपुर (बिहार) प्र. सं. 1984.
57.	आधुनिक हिन्दी कविता में राष्ट्रीय भावना	सुधाकर शंकर कलवडे, पुस्तक संस्थान, 109/50 ए, नेहरू नगर, कानपुर-12.
58.	आधुनिक हिन्दी काव्य में राष्ट्रीय चेतना का विकास	जितराम पाठक, राजीव प्रकाशन, इलाहाबाद-6, प्र. सं. 1976.
59.	आधुनिक हिन्दी कविता में शिल्प	कैलाश वाजपेयी, आत्मराम एण्ड सन्स, दिल्ली-6, प्र. सं. 1963.
60.	आधुनिक हिन्दी कविता में चित्र विधान	डॉ. रामयतन सिंह भ्रमर, नाशनल पब्लिशिंग हाउस, चन्द्रलोक, जवाहर नगर, दिल्ली-7, प्र. सं. 1965.
61.	आधुनिक हिन्दी काव्य में प्रतीक विधान	डॉ. नित्यानन्द शर्मा, साहित्य सदन, देहरादून, सं. 1963.
62.	आधुनिक हिन्दी कविता में अलंकार विधान	डॉ. जगदीशनारायण त्रिपाठी, अनुसन्धान प्रकाशन, आचार्य नगर, कानपुर, सं. 1962.
63.	कवयित्री महादेवी वर्मा	डॉ. शोभनाथ यादव, के. के. वोरा, वोरा एण्ड कम्पनी, पब्लिशर्स, प्रा. लिमिटेड, 3, राउण्ड बिल्डिंग, बम्बई-2, प्र. सं. 1970.

64. काव्य के रूप — गुलाब राय, आत्माराम एण्ड सन्स, प्रकाशक तथा पुस्तक विक्रेता, काश्मीरी गेट, दिल्ली-6, च. स. 1958.

65. काव्य दर्पण — रामदहिन मिश्र, ग्रन्थमाला कार्यालय, पाटना-4, च. सं. 1960.

66. काव्यशास्त्र — डॉ. भगीरथ मिश्र, विश्वविद्यालय प्रकाशन, गोरखपुर, वाराणसी, द्वि. सं. 1963.

67. काव्य रूपों के मूल स्रोत और उनका विकास — डॉ. शकुन्तला दुबे, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, सी. 21/30 पिशाच मोचन, वाराणसी-1, सं. 1964.

68. काव्य बिंब और छायावाद — सुरेन्द्र माथुर, ज्ञान भारती प्रकाशन, सी-8, माडल टाउन, दिल्ली-9, सं. 1969.

69. गीतिकाव्य का विकास — लालधर त्रिपाठी "प्रवासी", ओम प्रकाश बेरी, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, पो. बोक्स नं. 70, ज्ञानवापी, वाराणसी-1, प्र. सं. 1961.

70. छायावाद — नामवर सिंह, सरस्वती प्रेस, बनारस, प्र. सं. 1955.

71. छायावादी काव्य — कृष्णचन्द्र वर्मा, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, 97, मालवीय नगर, भोपाल-3, प्र. सं. 1972.

72.	छायावादी काव्य का अनुशीलन	डॉ. रामनारायण सोनी, प्रिण्ट इंडिया पब्लिकेशन, मॉडल मील रोड, गाडी खाना, नागपुर, प्र. सं. 1986.
73.	छायावाद की दार्शनिक पृष्ठभूमि	डॉ. सुषमा पॉल, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, 23, दरिया गंज, दिल्ली-6, प्र. सं. 1971.
74.	छायावादी कवियों की नारी भावना	डॉ. श्रीमती प्रतिभा गर्ग, जवाहर पुस्तकालय, सदर बाज़ार, मथुरा प्र. सं. 1987.
75.	छायावाद विश्लेषण और मूल्यांकन	दीननाथ शरण, सं. 1958
76.	छायावादी कवियों का सांस्कृतिक दृष्टिकोण	प्रमोद सिन्हा, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद-1, प्र. सं. 1973.
77.	छायावाद काव्य तथा दर्शन	डॉ. हरनारायण सिंह, ग्रन्थम, रामबाग, कानपुर, सं. 1964.
78.	छायावाद का सौन्दर्य शास्त्रीय अध्ययन	डॉ. कुमार विमल, राजकमल प्रकाशन, प्रा. लिमिटेड, 8 फैज़ बाज़ारा, दिल्ली-6, प्र. सं. 1970.
79.	छायावादोत्तर काव्य में बिंब विधान	डॉ. उमा अष्टवंश, सुखपाल गुप्त, आर्य बुक डिपो, 30 नाईवाला, करोलबाग, नई दिल्ली, प्र. सं. 1974.

80. छायावादी बिम्ब-विधान और प्रसाद — डॉ. एन. पी. कुट्टन पिल्लै, किरण प्रकाशन 5-2-674, रिसाला अब्दुल्ला (नया उस्मानगंज) हैदराबाद-500001, प्र. सं. 1983.

81. छायावाद का काव्य शिल्प — प्रतिमा कृष्णबल, राधाकृष्ण प्रकाशन, 2 अन्सारी रोड, दरियागंज, दिल्ली-6, सं. 1971.

82. छायावादी काव्य में सौन्दर्य चेतना — डॉ. कृष्णमुरारी मिश्र, प्रगति प्रकाशन, बैतुल बिल्डिंग, आगरा-282003, प्र. सं. 1979.

83. छायावादोत्तर हिन्दी गीतिकाव्य — डॉ. सुरेश गौतम, प्रेम प्रकाशन मन्दिर, बल्ली मारान, दिल्ली-6, प्र. सं. 1985.

84. छायावादोत्तर हिन्दी काव्य की सामाजिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि — डॉ. कमला प्रसाद पाण्डेय, जीत मलहोत्रा, रचना प्रकाशन, इलाहाबाद-1, प्र. सं. 1972.

85. छायावाद स्वरूप और व्याख्या — राजेश्वर दयाल सक्सेना, अनुसन्धान प्रकाशन, 87/259, आचार्य नगर, कानपुर

86. छायावादोत्तर हिन्दी प्रबंध काव्यों का सांस्कृतिक अनुशीलन — डॉ. विश्वम्भर दयाल अवस्थी, व्यासनारायण भट्ट, 69 नय बैरहना, इलाहाबाद, प्र. सं. 1976.

87. द्विवेदी युगीन खण्डकाव्य — डॉ. सरोजनी अग्रवाल, सुलभ प्रकाशन, 17, अशोक मार्ग, लखनऊ, प्र. सं. 1987.

88.	नरेन्द्र शर्मा और उनका काव्य	लक्ष्मी नारायण शर्मा, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली-7, प्र. सं. 1967.
89.	नवजागरण और छायावाद	महेन्द्रनाथ राय, अरविन्द कुमार, राधाकृष्ण प्रकाशन, 2 अंसारी रोड, दरियागंज, दिल्ली-6, सं. 1973.
90.	पुराख्यान का आधुनिक हिन्दी प्रबंध काव्यों पर प्रभाव	डॉ. नूरजहाँ बेगम, जवाहर पुस्तकालय, सदर बाज़ार, मथुरा, प्र. सं. 1982.
91.	प्रसाद और उनकी कविता	विश्वम्भर "मानव", किताब महल प्रा. लिमिटेड, जीरो रोड, इलाहाबाद, प्र. सं. 1962.
92.	महाभारत का आधुनिक हिन्दी प्रबंध काव्यों पर प्रभाव	डॉ. विनय, सन्मार्ग प्रकाशन, 16, यू.बी. बंगलो रोड, दिल्ली-7, प्र. सं. 1966.
93.	महाभारत की कथाओं पर आधारित हिन्दी काव्य	डॉ. राघव प्रसाद पाण्डेय, डॉ. राघवप्रसाद पाण्डेय, शिवगंज, हरमूरोड, राँची (बिहार)
94.	युगकवि निराला	संपादक - डॉ. राममूर्ति शर्मा, साहित्य निकेतन, कानपुर-1, प्र. सं. 1970.
95.	रहस्यवाद	डॉ. रामरतन भटनागर, किताब महल, इलाहाबाद, द्वि. सं. 1960.

96.	डॉ. रामकुमार वर्मा का काव्य	प्रेमनाथ त्रिपाठी एम. ए., चन्द्रलोक प्रकाशन, इलाहाबाद, 1965.
97.	रामकुमार वर्मा की साहित्य साधना	डॉ. चन्द्रिका प्रसाद शर्मा, साहित्य भवन प्राइवेट लिमिटेड, 93, के. पी. कक्कड़ रोड, इलाहाबाद-3, प्र. सं. 1990.
98.	डॉ. रामकुमार वर्मा अभिनंदन ग्रंथ	प्रधान संपादक, डॉ. जगदीश गुप्त, भारती परिषद, प्रयाग, सन् 1986.
99.	वाङ्मय विमर्श	विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, द्वारका दास, हिन्दी साहित्य कुटीर, वाराणसी-1, च. सं. 1961.
100.	विष्णुप्रिया और उसका कवि	घनश्याम अग्रवाल, जयकृष्ण अग्रवाल, कृष्ण ब्रदर्स, कचहरी रोड, अजमेर
101.	शोध और समीक्षा	डॉ. रामगोपाल शर्मा "दिनेश", कल्याणमल एण्ड सन्स, त्रिपोलिया बाज़ार, जयपुर, सं. 1966.
102.	समकालीन आलोचना और साहित्य	डॉ. मृत्युंजय उपाध्याय, ओम प्रकाशन, 30-बी, आजादपुर, दिल्ली-110033, प्र. सं. 1988.
103.	साहित्यिक आयाम	डॉ. वीरेन्द्र सिंह, उपमाप्रकाशन, जयपुर, प्र. सं. 1970.

104. साहित्य चिन्तन — डॉ. रामकुमार वर्मा, किताब महल, प्राइवेट लिमिटेड, 43-ए, जीरो रोड, इलाहाबाद, प्र. सं. 1965.

105. साहित्य शास्त्र — डॉ. रामकुमार वर्मा, लोक भारती प्रकाशन, 15-ए, महात्मागांधी मार्ग, इलाहाबाद-1, प्र. सं. 1968.

106. साठोत्तरी हिन्दी महाकाव्यों में पात्र कल्पना — विश्वबन्धु शर्मा, मंथन पब्लिकेशन्स, 22-आर, मॉडल टाउन, रोहतक-124001, प्र. सं. 1985.

107. स्वच्छन्दतावाद स्वरूप विश्लेषण — डॉ. कृष्णमुरारी मिश्र, प्रगति प्रकाशन, बैतुल बिल्डिंग, आगरा-282003, प्र. सं. 1979.

108. हिन्दी साहित्य का बृहत्-इतिहास (दशम भाग) — संपादक - डॉ. नगेन्द्र, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, प्र. सं. 1971.

109. हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास — गणपतीचन्द्र गुप्त, भारतेन्दु भवन, चण्डीगढ़, प्र. सं. 1965.

110. हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास — डॉ. रामरतन भटनागर, साथी प्रकाशन, सागर (म.प्र.) - प्र. सं. 1962.

111. हिन्दी साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास — डॉ. खेमचन्द आनन्द, सूर्य प्रकाशन, नई सड़क, दिल्ली-6, प्र. सं. 1971.

— G4973 —

112. हिन्दी वाङ्मय बीसवीं शती — संपादक – डॉ. नगेन्द्र, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा, पृ. सं. 1972.

113. हिन्दी प्रबंध काव्यों में चरित्र चित्रण — डॉ. प्रेमकली शर्मा, बांके बिहारी प्रकाशन, आगरा-2, पृ. सं. 1986.

114. हिन्दी की छायावादी कविता का कला विधान — डॉ. बलबीर सिंह "रत्न", नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली-6, पृ. सं. 1964.

115. हिन्दी महाकाव्य सिद्धान्त और मूल्यांकन — देवी प्रसाद गुप्त, अपोलो पब्लिकेशन, वाई मानसिंह हाईवे, जयपुर-3, पृ. सं. 1968.

116. हिन्दी के आधुनिक कवि — रवीन्द्रभ्रमर, भारती साहित्य मन्दिर, दिल्ली, पृ. सं. 1964.

117. हिन्दी साहित्य पर संस्कृत साहित्य का प्रभाव — डॉ. सरनाम सिंह शर्मा "अरुण", रामनारायण लाल बेनी माधव, प्रकाशक तथा पुस्तक विक्रेता, इलाहाबाद, पृ. सं. 1952.

118. हिन्दी साहित्य दर्पण — डॉ. सत्यव्रत सिंह, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, द्वि. सं. 1963.

संस्कृत ग्रंथ

वाल्मीकी रामायणम्

श्रीमन्महा भारतम्

कोश

हिन्दी साहित्यकोश भाग-1	प्रधान सं. धीरेन्द्र वर्मा, ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी-1, द्वि. सं. 1963.
हिन्दी साहित्यकोश भाग-2	वही - प्र. सं. 1963.
संक्षिप्त हिन्दी शब्दसागर	संपादक - रामचंद्र वर्मा, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, स. सं. 1971.

पत्र-पत्रिकाएँ

प्रकर	-	1973 मार्च, अंक-3.
प्रकर	-	1987 मार्च, अंक-3,
नई धारा	-	1974 मार्च, अंक-12.
आज कल	-	1990 नवम्बर, अंक-7.